

भाग चौथा



उसको क्या हक है कि वोह खाके-वतनमें दफ़्न हो।
जिसके दिलमें अजमते-ख़ाके-वतन कुछ भी नहीं ॥

—सीमाव अकबरावादी

अयोध्याप्रसाद गोयलीय

ज्ञानपीठ-लोकोदय ग्रन्थमाला-सम्पादक और नियामक
श्री० लक्ष्मीचन्द जैन, एम० ए०

प्रकाशक
मन्त्री, भारतीय ज्ञानपीठ
दुर्गाकुण्ड रोड, बनारस

प्रथम संस्करण
१९५४ ई०
मूल्य तीन रुपये

मुद्रक
जे० के० शर्मा
इलाहाबाद लॉ जर्नल प्रेस
इलाहाबाद

ज्ञानपीठ लोकोदय-ग्रन्थमाला—हिन्दी ग्रन्थाङ्क—२८

शेर-ओ-सुख़न

[ख्यातिप्राप्त वयोवृद्ध और युवक शायर]

भाग चौथा

प्राचीन एव नवीन गजलगोई
भारत-विभाजन, स्वराज्य-प्राप्ति
राष्ट्र-पिताकी शहादत आदि
प्रेरणात्मक, लोकोपयोगी
भावोका समावेश



भारतीय ज्ञानपीठ काशी

दिल्ली-स्कूलके शायर

गालिब[1]
|
१ मजरूह २ जकी ३ रख्शाँ ४ हाली
|
आजाद अन्सारी[5]
|
अकबर हैदरी[7]

मोमिन[2]
|
१ शेफ्ता २ नसीम ३ तसकीन
|
तसलीम[4]
|
[6]हसरत मोहानी

जौक[3]
|
१ जफर २ आजाद ३ दाग ४ जहीर ५ अनवर
|
१ सीमाब[8] २ जोश ३ नातिक ४ साइल
५ आगा शाइर ६ बेखुद ७ बेखुद बदायूनी
८ नूह ९ अहसन १० नसीम ११ हुस्न
१२ हैरत १३ रसा १४ अहसान १५ दिलेर
१६ शागल १७ शबीर १८ अजमत
१९ फिरोज २० गौहर २१ महमूद २२ नज्फ
२३ अख्तर २४ अश्क २५ नवाब आसफ
२६ बेवाक २७ महर २८ तैश २९ मतीन

१,२,३—उन्नीसवी शताब्दीके अमर शायर—गालिब, मोमिन; जौकका और उनके शिष्योका परिचय एव कलाम प्रथम भाग मे दिया जा चुका है।

४—तसलीमका परिचय भी प्रथम भागमे दिया जा चुका है।

५–६—आजाद अन्सारी और हसरत मोहानीका परिचय तीसरे भागमे दिया गया है।

७–८—अकबर हैदरी और सीमाब अकबरावादी आदिका परिचय प्रस्तुत भागमे मिलेगा। इनके अतिरिक्त ९०के लगभग नवीन शायरोका कलाम भी देखिये।

साहू-जैन-कुल-दिवाकर

आयुष्मान् प्राणप्रिय अशोककुमार

और

सौभाग्यवती बहूरानी इन्दु-श्री को

अनेक शुभ भावनाओं एवं

शुभाशीर्वादो सहित

सस्नेह भेंट



गोयलीय

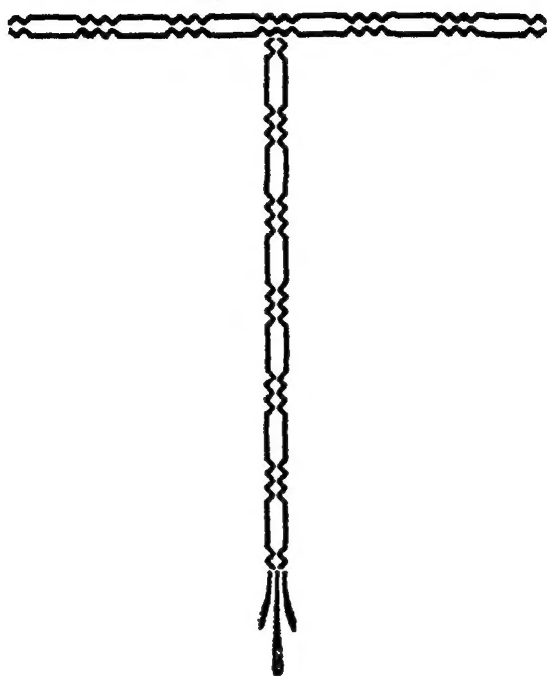
विषय-सूची

नई-पुरानी धारा

नई लहर

[१९४४ से १९५४ तककी आधुनिक शायरी]

नई-पुरानी धारा



[मिर्ज़ा दाग़-स्कूलके मुख्य शायर]

१ 'सीमाब' अकबराबादी
२ 'जोश' मलसियानी
३ 'नातिक' गुलावठी
४ 'साइल' देहलवी
५ आगा 'शाइर' किज़िलबाश
६ 'बेखुद' देहलवी
७ 'बेखुद' बदायूनी
८ 'नूह' नारवी
९ 'अहसन' मारहरवी
१० 'नसीम' भरतपुरी
११ 'हुस्न' बरेलवी
१२ 'हैरत' ग्वालियरी
१३ 'रसा' मुस्तफाबादी
१४ 'अहसान' रामपुरी
१५ 'दिलेर' मारहरवी
१६ 'शागल' देहलवी
१७. 'शबीर' रामपुरी
१८. 'अज़मत' रामपुरी
१९ 'फ़िरोज' रामपुरी
२० 'गौहर' रामपुरी
२१ 'महमूद' रामपुरी
२२ 'नज्फ़' रामपुरी
२३. 'अख्तर' नगीनवी
२४ 'अश्क' देहलवी
२५ 'नवाब' आसफ
२६ 'बेबाक' शाहजहाँपुरी
२७. 'महर' ग्वालियरी
२८ 'तैश' मारहरवी
२९ 'मतीन' मछली शहरी
३० आसी उलदनी
३१ अकबर हैदरी

मिर्ज़ा 'दाग' को अपने जीवनकालमे जो ख्याति, प्रतिष्ठा और शानो-शौकत प्राप्त हुई, वह किसी बडे-से-बडे शायरको अपनी जिन्दगीमे मयस्सर न हुई। स्वय उनके उस्ताद शेख़ 'जौक' शाही कफ़समे पडे हुए 'तूतिये-हिन्द' कहलाते रहे, मगर १०० रु० माहवारीसे ज्यादेका आबो-दाना कभी नही पा सके। खुदा-ए-सुख़न 'मीर' अमरशायर 'गालिब' और 'आतिश'—जैसे आग्नेय शायरोको अर्थ-चिन्ता जीवनभर घुनके कीड़ेकी तरह खाती रही। हकीम 'मोमिन' शेख़ 'नासिख़' अलबत्ता अर्थाभावसे किसी क़द्र निश्चिन्त रहे, मगर 'दाग'-जैसी फराग़त उन्हे भी कहाँ नसीब हुई[1] ?

मिर्ज़ा दाग

यूँ अपने जमानेमे एक-से एक बढकर उस्ताद एव ख्याति प्राप्त शायर हुए, मगर जो ख्याति और शुहरत अपनी ज़िन्दगीमे 'दाग' को मिली, वह औरोको मयस्सर नही हुई। भले ही आज उनकी शायरीका ज़माना लद गया है और मीर, दर्द, आतिश, गालिब, मोमिन, जौक आज भी पूरे आबोताबके साथ चमक रहे है। लेकिन अपने ही जीवनकालमे उन्हे 'दाग'-जैसी ख्याति प्राप्त नही हो सकी।

यह माना कि उनकी शायरीका युग समाप्त हो गया है और उनकी शोख़, रगीन, बाज़ारू इश्किया शायरीको आज कोई पूछता भी नही, मगर १९वी शताब्दीका अन्तिम युग 'दाग'-युग था।

---

[1]जागीर मिलने और उच्च पदवियोसे विभूषित होनेके अतिरिक्त १५०० रु० मासिक वेतन, राजसी ठाट-बाट और नवाब हैदराबादके उस्ताद होनेका महान गौरव मिर्ज़ा 'दाग' को प्राप्त था।

जन साधारणके वे महबूब शायर थे[1]। उनके सामने मुशायरोमे किसीका भी रग नही जमने पाता था[2]। जवान-बूढे सभी रगे-दागके

[1]हज़रत 'नूह' नारवी लिखते है कि—"मुझसे रामपुरके एक सिन-रसीदा (वयोवृद्ध) साहबने जिक्र किया कि नवाब कल्बअली खा साहबका मामूल था कि मुशायरेके वक्त कुछ लोगोको मुशायरेके बाहर महज़ इस ख्यालसे बैठा देते थे कि बाद खत्म मुशायरा लोग किसका शेर पढते हुए मुशायरेसे बाहर निकलते है।" चुनाचे हमेशा यही होता था कि 'दाग' साहबका शेर पढते हुए लोग अपने-अपने घरोको जाते थे।

"एक बार मुशी 'मुनीर' शिकोहाबादीने सरेदरबार—हजरत 'दाग' का दामन थामकर कहा कि —'क्या तुम्हारे शेर मेरे शेरसे अच्छे होते है ? मगर इसका क्या सबब है कि तुम्हारे शेर लोगोकी ज़बानोपर रह जाते है और मेरे शेरोपर लोगोकी न खास तवज्जह होती है, न कोई याद रखता है।' इस पर जनाब 'अमीर मीनाई' ने फर्माया—"यह खुदादाद मकबूलियत है, इस पर किसीका बस नही।"

—[निगार जनवरी १९५३ ई० पृ० २५]

[2]यह मशहूर है कि दागकी गज़लके बाद मुशायरा उखड़ जाता था, और मुशायरेके बाहर सिवाय 'दाग' के अशआरके किसी शायरका शेर विरदे-जबान न होता था। 'असीर' (अमीर मीनाईके उस्ताद) का मकोला है कि वह कलाम पसन्दीदा है, जो मुशायरेसे बाहर जाये। फर्माते थे कि मैने बाहर जानेवालोमे अक्सर मिर्ज़ा 'दाग' का शेर बाहर निकलते देखा है।

—[निगार जनवरी १९५३ ई० पृ० ४७]

शैदाई थे। कौन ऐसी तवायफ थी जो 'दाग' की गजल गाये बगैर महफिलमे अपना रग जमा सके ? क्या मुशायरे, क्या अदबी मजलिसे, क्या आपसी सुहबते, क्या महफिले-रक्स, सर्वत्र 'दाग' का रग गालिब था[1]। गली-कूचोमे उनकी गज़ले थिरकती फिरती थी। यहाँ तक कि उनकी ख्यातिसे प्रभावित होकर उनके कितने ही समकालीन शायर अपना रंग छोड़कर रगे-दागमे गज़ल कहने लगे थे।

दागकी ख्याति और लोक-प्रियताका यह आलम था कि उनकी शिष्य मण्डलीमे सम्मिलित होना बहुत बडा सौभाग्य एव गौरव समझा जाता था। हैदराबाद-जैसे सुदूर प्रान्तमे 'दाग' के समीप जो शायर नही रह सकते थे, वे पत्रद्वारा उनसे सशोधन लेते थे। भारतके कोने-कोनेसे २०००के लगभग शिष्य सशोधनार्थ गज़ले भेजते थे। दागका शिष्य कहलाना ही उन दिनो शायर होनेका बहुत बडा प्रमाणपत्र समझा जाता था और उन

---

[1]हज़रत मुहम्मदअली खा 'असर' रामपुरी लिखते है—"जब 'दाग' मुशायरेमे अपनी गजल सुनाते थे, तो रामपुरके पठान उन्हे सैकडो गालियाँ देते थे। दरियाफ्त किया गया कि गालियोका क्या मौका था। जवाब दिया कि कलामकी तासीर (असर) और हुस्ने कुबूल (पसन्दीदगी) का यह आलम था कि पठान बेसाख्ता चीखे मार-मार कर कहते थे—'उफ ज़ालिम मार डाला।' ओफ-ओ गला हलाल कर दिया। उफ-उफ सितम कर दिया, गज़ब ढा दिया।"

एक दिन नवाब खुल्द आशियाँ ने नवाब अब्दुल खासे पूछा कि 'दाग' के मुत्तालिक तुम्हारी क्या राय है। जवाब दिया कि—"तीतडेमे गुलाब भरा हुआ है।" मकसद यह था कि सूरत तो काली है, लेकिन बातिन (अतरग) गुलहाये मुआनीकी खुशबुओ (कविता कुसुमकी सुगन्धो) से महक रहा है।

[निगार जनवरी १९५३ ई० पृ० ४७]

दिनो क्यो, आज भी ऐसे शायर मौजूद है, जिन्हे बमुश्किल एक-दो गजलोपर इस्लाह लेना नसीब हुआ होगा, फिर भी बडे फख्रके साथ अपनेको मिर्जा 'दाग' का शिष्य कहते है।

मिर्जा दागके जन्नत नशी होनेके बाद एक दर्जनसे अधिक शिष्य अपनेको 'जॉ नशीने-दाग' (गुरुका उत्तराधिकारी शिष्य) लिखने लगे। हालाँकि शायरीमे उत्तराधिकारस्वरूप कुछ भी प्राप्त नही होता। शायरी तो उस स्रोतके समान है, जो पृथ्वीसे स्वय फूट निकलता है। यह अन्य पेशेकी तरह वश परम्परागत नही चलता। यह जरूरी नही कि शायरकी सतान भी शायर हो।

मीर, गालिब, मोमिन, जौक, आतिश, मुसहफीके पिता शायर नही थे। उनकी सन्तान भी शायरोमे कोई उल्लेख योग्य नही। शायर अपने कलाममे ही ख्याति पाता है। यह समझते हुए भी कई शायर 'जानशीने-दाग' कहलानेका मोह नही त्याग सके।

नवाब 'सायल' मिर्जा 'दाग' के दामाद भी थे और शिष्य भी। अत बहुत बडी सख्या उन्हीको 'जॉनशीने-दाग' समझती थी। 'बेखुद' देहलवी, 'बेखुद' बदायूनी, 'आगा' शाइर किजलबाश, 'अहसन' मारहरवी, 'नूह' नारवी, भी अपनेको 'जॉनशीने-दाग' लिखनेमे बहुत अधिक गर्वका अनुभव करते है, और किसीकी मजाल नही जो उन्हे इस गौरवास्पद शब्दसे वचित कर सके। वास्तविक उत्तराधिकारी कौन है, इस प्रश्नको सुलझानेके लिए वर्षो वाद-विवाद चले है। बीसवी शताब्दीका वह प्रारम्भिक युग ही ऐसा था कि दागके नामपर हर शायर अपनेको उस्ताद घोषित कर सकता था। जैसे कि आज गान्धीके नाम पर हर काग्रेसी अपनेको पुजवा सकता है और उलटी-सीधी हरबात गान्धीके नामपर जनताके गलेके नीचे उतार सकता है।

यद्यपि 'दाग' के जीवनकालमे ही उनकी शायरीपर आक्षेप होने लगे थे। उनकी शायरीको निम्न स्तरकी, शोख, बाजारू-शायरी समझा जाने

लगा था। फिर भी 'दाग' के परिस्तार एवं प्रशसक बहुत अधिक सख्यामे थे। समस्त भारतमे उनके कलामकी धूम एव चाहत थी।

दाग जन्नतनशी हुए तो उर्दू-ससारमे सफे-मातम बिछ गई। औरोका तो ज़िक्र ही क्या, सर 'इकबाल'—जैसा गम्भीर शायर अपने उस्तादकी मौत पर टस-टस रो पडा। मिर्जा दागके उठते ही 'बज्मे-अदब'मे घोर अन्धकार छा गया। मगर यह अधेरा चन्द्रग्रहणके समान रहा। उनके योग्य शिष्योने शम-ए-महफ़िलको इस खूबीसे सम्भाला कि वह टिमटिमानेके बजाय उत्तरोत्तर प्रज्वलित होती गई।

प्राय समस्त भारतमे मिर्ज़ा दागके शिष्य फैले हुए थे। उनके कलाममे भी वही उस्तादका शोख़ रग, बॉकपन, तेवर और हुस्ने-बयान था। दागके प्रशसकोने उनके शिष्योमे भी 'दाग' का प्रतिबिम्ब झलकता हुआ देखा तो वे बहुत शीघ्र दागके अभावको भूल गये और अपनी साहित्यिक अभि-रुचि उनके शिष्योद्वारा शान्त करने लगे।

यूँ तो दागके शिष्योकी सख्या २०००के लगभग बताई जाती है, परन्तु हम बहुत ही प्रसिद्ध-प्रसिद्ध केवल ३० शिष्योका सक्षिप्त परिचय एव कलाम दे रहे है।

इस तरहकी शायरीका अब युग नही रहा है, केवल इतिहासका क्रम बनाये रखनेके लिए सक्षिप्त उल्लेख किया जा रहा है। ये सभी शायर अपने-अपने क्षेत्रमे प्राय उस्तादीका मर्तबा रखते रहे हैं और इनमे-से हर एकके सैकडो शिष्य हैं। यहॉ तक कि कइयोके तो शिष्य भी साहिबे-दीवान है ओर उनके भी अनेक शिष्य हैं।

हमने स्वय अपनी ऑखोसे दिल्लीके अनेक मुशायरोमे नवाब साइल, आगाशायर, बेखुद आदिको गजल पढते हुए देखा है। जनता बहुत उत्साह पूर्वक उनके आगमनकी प्रतीक्षा करती रहती थी। मुशायरेके सचालक स्वागतके लिए द्वारपर खडे रहते थे। पधारनेकी सूचना मिलते ही श्रोताओं-के हृदय आनन्दसे खिल उठते थे। अन्दर आनेपर लोग बा-अदब खडे

हो जाते थे। लोग उठ-उठकर आदाब बजा लाते थे। यह लोग भी उम्रमे छोटोका सलाम लेते हुए, अपने बडोका सम्मान करते हुए सलीकेसे यथास्थान बैठ जाते थे और जब कलाम पढते थे तो कुछ न पूछिये, एक-एक मिसरेपर मुशायरे-का-मुशायरा लोट-पोट हो जाता था। पढनेका अन्दाज़, बैठनेका सलीका, कलामकी शोखी, चुटीले खयालात, देहलवी टकसाली ज़बान, मुहावरोकी घुलावट, सब मिलकर कयामत बरपा करते थे। ३०—३२ वर्षोके बाद भी वे दृश्य भुलाये नही भूलते।

मिर्ज़ा 'दाग' के शिष्योमे सर इकबाल, अल्लामा 'सीमाब' अकबराबादी और 'जोश' मलसियानी तीन ऐसे शिष्य हुए, जिन्होने अपने उस्तादका अनुकरण न करके स्वयं अपना जुदागाना रग अख्तियार किया। सर इकबाल-का परिचय एव कलाम हम 'शेरो शायरी'मे ४० पृष्ठोमे दे चुके है। स्थाना-भावके कारण उनका पुन परिचय इस खण्डमे नही दिया जा रहा है। उनकी शायरी पर लिखनेके लिए ४००—५०० पृष्ठ आवश्यक है। यदि स्वास्थ्य और समय अनुकूल रहा तो हम उनपर एक स्वतन्त्र पुस्तक भेट करेगे। 'सीमाब' और 'जोश' का परिचय एव कलाम इसी खण्डमे दिया गया है।

इस परिच्छेदमे दागके शिष्योंका कलाम दिया गया है। 'सीमाब' और 'जोश' के अतिरिक्त प्राय सभीका रग उस्तादसे मिलता-जुलता है।

दागकी शायरी

वही शोख बयानी, वही तज, वही तेवर, वही जली-कटी बाते, वही छेड़-छाड, वही टकसाली ज़बान, वही साँचेमें ढले हुए-से मुहावरे इनके कलाममे घुले मिले हैं जो मिर्ज़ा 'दाग' के जौहर थे। अत उन सभी शागिर्दोंके कलामपर जुदा-जुदा विचार विनिमय न करके हम यहाँ मिर्ज़ा 'दाग' की शायरीपर थोडा-सा प्रकाश डाल रहे है, ताकि उसी रोशनीमे उनके शिष्योंकी शायरीका अवलोकन किया जा सके। मिर्ज़ा 'दाग' की

पैदाइश[1], परवरिश, तरबीयत (शिक्षा-दीक्षा) जिस माहोलमे हुई, जिस वातावरणमे उन्होने जवानीकी अँगडाइयाँ ली और अपना समस्त जीवन

---

[1]मिर्ज़ा 'दाग' की पैदाइशके सम्बन्धमे हजरत कल्बअली खाँ 'फाइक' रामपुरीने अनेक पुस्तको-पत्रोके उद्धरण और अन्य आवश्यकीय विवरण देकर जनवरी १९५३ के 'निगार' मे एक विस्तृत लेख प्रकाशित कराया है, जिसका सक्षिप्त सार यह है—

मिर्ज़ा 'दाग' की माँका असल नाम वज़ीर बेगम उर्फ छोटी बेगम था। वह मुहम्मद युसुफ काश्मीरी सादाकारकी असाधारण रूपवती बेटी थी। उसके अपूर्व सौन्दर्यपर फीरोज़पुर झिरकाके नवाब शम्सउद्दीन अहमद खाकी चाहतकी नजर १८२६ ई० के लगभग पड़ी। जिसकी स्मृति-स्वरूप १८३० ई० मे दिल्लीमे 'दाग'का जन्म हुआ। इन्ही दिनो मि० फ्रेजर एजेण्ट गवरनर जनरल दिल्लीमे नियत हुआ। वह सौन्दर्योपासक था। अत वह छोटी बेगमके सौन्दर्य-जालमे फँस गया। नवाब फीरोज़पुरको उसकी यह हरकत पसन्द न आई, उन्होने २२ मार्च १८३५ ई० को फ्रेज़रका वध कर दिया। परिणामस्वरूप उसी वर्ष अक्तूबर १८३५ ई० मे नवाब-को फासी दे दी गई।

१८३५ से १९४० ई० तक छोटी बेगम सम्भवत रामपुरके युवराज नवाब यूसुफअली खाके आश्रयमे रही। जो कि उन दिनो दिल्ली रहते थे। १८४० ई० के बाद नवाब यूसुफअली खा दिल्ली छोडकर रामपुर चले गये। नवाबके रामपुर पहुँचनेपर मिर्ज़ा 'दाग' भी अपनी सगी मौसी उम्दा-खानमके साथ रामपुर पहुँच गये और वहाँ लगभग ४ वर्ष रहे। उम्दा-खानमको सौ रुपये मासिक वृत्ति नवाब दिया करते थे।

नवाबके रामपुर चले जानेपर १८४० ई० मे छोटी बेगमने आगा तराबअलीका घर बसा लिया। उनकी यादगारे-मुहब्बत आगा मिर्ज़ा शागल रहे जो कि १८४१ ई० मे जन्मे।

व्यतीत किया। उसका लाज़िमी नतीजा था कि उनकी शायरी शोख, रगीन, चुलबुली, बाज़ारी और जबानकी शायरीके अतिरिक्त और कुछ न हो।

१३–१४ वर्षकी उम्रमें किलेमे पहुँचे तो वहाँ भी रंगीन फिज़ा मिली। उन दिनो मुगलिया सल्तनतका चराग टिम-टिमा रहा था। बुझनेसे पूर्व टिमटिमाता हुआ दीपक जैसे प्रज्वलित हो उठता है। ठीक उसी स्थितिमें मुगल सल्तनत थी। शमशीरो-सनाके जौहर कभीके समाप्त हो गये थे। मगर ताऊसी-रुबाब तब भी मौजूद थे[1]। बेगमातके चोचले

---

[1] १८४४ ई० मे भाग्य चमका तो छोटी बेगमको मिर्जा फखरू (पुत्र बहादुरशाह बादशाह) ने अपने अन्त पुरमे डाल दिया। इनसे १८४५ ई० में मिर्जा खुरशीदआलम पैदा हुए। इस सम्बन्धका नक्शा मौ० मुहम्मद हुसेन आज़ादने यूँ खींचा है—

"शहरमे छोटी बेगम नाम एक हसीन साहिबेजमाल अपने हुनरकी बा-कमाल थीं। उम्रकी दोपहर ढल चुकी थीं और कितने ही अमीरोको मारकर हजम कर चुकी थीं। उस पर भी लड़कपनकी कलियाँ चुनती थी। मिर्जा फखरूकी २४–२५ बरसकी उम्र थी। रण्डीको नौकर रखकर गुलाम हो गये।"

किलेमें पहुँचनेपर मिर्जा 'दाग' की भी याद आई, अत. वे भी १८४४ मे १४ वर्षकी उम्रमें किलेमें बुला लिये गये। १० जुलाई १८५६ ई० को मिर्ज़ा फखरूका देहान्त हो गया। छोटी बेगम इस समय लगभग ४३–४४ वर्षकी थीं। १० माहके बाद ग़दर हो गया। इसी ऐय्याममें एक अंग्रेज़ अफसरके साथ छोटी बेगमको ज़िन्दगी गुज़ारनी पड़ी। जिसकी निशानी एक लड़की हुई। जिसका नाम मसीहजान उर्फ बादशाह बेगम और तख़ल्लुस 'ख़फी' था।

[2] सर इकबालके इस शेरकी तरफ इशारा है—

खवासोके नखरे, मुगलानियोकी शोखियाँ, शहज़ादियोंकी अठखेलियाँ और शहजादोकी रगरेलियाँ निरन्तर १३ वर्ष देखते-सुनते मिर्जा 'दाग' किशोरसे युवा हुए।

मादक नृत्य, सुरीले गान, दौरे-शराब, मद-भरे नैनोकी मारमे मिर्जा 'दाग' भी वही बोल बोलने लगे, जो बोल किलेमें बोले जाते थे। एक तो वह उम्र ही अल्हड और दिल-फेक, फिर उसपर वोह मादक समाँ। किलेकी टकसाली एव रसीली उर्दू, जौक-जैसा जबान और मुहावरोका बादशाह उस्ताद मिला। फिर क्या था 'दाग' का कलाम हवामें गूँजने लगा। रगीन मिज़ाज उनके कलामको सीनेसे लगाये फिरने लगे। गदरके बाद रामपुर गये तो वहाँ भी वही वातावरण मिला। लखनवी शायरोंके जमघटे, और नवावकी रगीन मिजाजीने और भी हवा दी। 'दाग' का रग उत्तरोत्तर पक्का होता गया, दिन दूना, रात चौगुना निखरता गया।

१८८७ ई० के बाद रामपुर छोडकर हैदराबाद रहना हुआ, तो वहाँका ऐशो-निशात (भोग-विलास) सब पर बाज़ी ले गया। नवाबके उस्ताद, उच्च पदवियोसे विभूषित, राज्योचित मान-प्रतिष्ठा, शाही ठाट-बाट, १५०० रु० मासिक पेंशनके अतिरिक्त जागीर और इनाम इकराम अलग।

दाग स्वभावत सौन्दर्योपासक और आशिक मिजाज थे। गाना सुननेका बेहद शौक था। दो-तीन तवायफोको १५०—२०० रु० मासिक

मैं तुमको बताता हूँ तकदीरे-उमम क्या है ?
"शमशीरो-सना अव्वल, ताऊसो-रुबाब आख़िर" ॥

[मुसलमानके भाग्यकी कुजी यही है कि वह तलवार-तीरको हाथसे न छोड़े—सैनिक बना रहे। राज्यसिंहासन और साज़-सगीत तो अपने आप मिल-जायेगे] लेकिन उन दिनो किलेमे ठीक इसके विपरीत स्थिति थी।

पर नोकर रखते थे। साइबजान, उम्दाजान, अख्तरजान, और मुन्नीजान 'हिजाब' आदि तवाइफोसे उनके सम्बन्ध थे। वकौल नवाब हसनअली खॉ "दागको अच्छी सूरतसे इश्क था और जब कभी किसी हसीनकी सुहबत मयस्सर न आती थी तो उन्हे वहशत-सी होने लगती थी[1]।"

यही तवाइफे जब इनका दामन झटककर किसी गैरके पहलूको सजाने लगती थी तो 'दाग' इनके गमे-हिज्रमे बेचैन हो उठते थे[2]। उनकी शायरी ऐसी ही औरतोके इश्क-ओ-हिज्रसे लबरेज है।

'दाग' का इश्क गो बाजारी है, मगर वह अनुभूत है। इसीलिए उनकी शायरीमे जो स्वानुभव व्यक्त हुआ है, वही उनकी शायरीकी सबसे बडी विशेषता है और इसी विशेषताके कारण वे अपने समकालीन शायरोमे श्रेष्ठ और यकता नजर आते है। उन्होने न तो हाथमे तस्बीह लिये-लिये हुस्नो-इश्ककी नग्मासराई की है, न काबेका तवाफ (परिक्रमा) करते हुए

---

[1]'निगार' जनवरी १९५३ पृ० ११०।

[2]'अख्तरजान' इनकी नौकरी छोडकर एक सेशनजजकी नौकर हो गई। एक दिन दागने अपना मुलाजिम भेजकर उसे बुलाना चाहा। मुलाजिमने काफी डोरे डाले, लेकिन वह आनेको तैयार न हुई और आदमीसे कहा कि उनसे कह दे "मेरी बला भी नही आती।" मुलाजिमने यही जुमला आकर 'दाग' मे दोहरा दिया। 'दाग' लुत्फ अन्दोजीकी खातिर बार-बार उससे दरियाफ्त करते थे कि उसने क्या कहा, और वह इसी जुमलेको दुहराता जाता था। इसी कैफियतमे उन्होने पासमे बैठे नवाब यारजग बहादुरसे कहा—लिखो—

यह क्या कहा कि मेरी बला भी न आयेगी।
क्या तुम न आओगे तो कजा भी न आयेगी॥

यह किस्सा 'दाग' साहबके देहान्तसे कोई १॥। वर्ष पहिलेका है। यानी उस वक्त उनकी उम्र ७४ वर्षके लगभग थी।

सनमख़ानोकी मदह (प्रशसा) की है, और न वजू करते हुए ज़ाहिदो-शेख़की दस्तार उछाली है। बल्कि कूच-ए-इश्कमे जो अनुभव हुए, उन्हीको जबानकी चाश्नीमे लपेटकर पेश किया है। यही वजह है कि उनके एक-एक शेरपर आज भी लोग सर धुनते है। उनकी तबीयतमे बलाकी शोख़ी थी, जो मरते दम तक साथ रही, और यही सब उनकी शायरीकी सफलताके कारण है। अल्लामाँ नियाज फतहपुरी लिखते है—

"'दाग' ने अपनी जिस रगकी शायरीसे शोहरत हासिल की, वह सिर्फ 'दाग' के लिए मखसूस (नियत) न था। उस वक्तके तमाम शुअरा एक ही हमामके नहानेवाले थे। लेकिन यह वाकया है कि 'दाग' से ज्यादा कोई दूसरा शायर मकबूल (जन साधारण-प्रिय) न हो सका। कूच-ओ-बाजार रक्स-ओ-सरूद (नृत्य-गानकी महफिलो) मे हजरत 'दाग' ही का सिक्का चलता था और उन्हीकी गज़लोपर दुनिया सर धुनती थी। 'दाग' के हम असर (समकालीन) शुअरामे उस वक्त अलावा 'अमीर' के 'मुनीर' शिकोहाबादी, 'जलाल' लखनवी, और 'तसलीम' लखनवी, भी ज़िन्दा थे। लेकिन 'दाग' से ज्यादा कबूले आम (जन-प्रियता) किसीको हासिल न हो सका और उसके कुछ असबाब (कारण) भी थे।

'दाग' के कलाममे जबानो-बयान (भाषा और कथन) के लुत्फके अलावा एक चीज और भी है, जिसने उसे मशहूर कर दिया और वोह उसका तेवर है। . 'दाग' को इस बातमे बडा मलका हासिल (अभ्यास) था कि बात ख्वाह कैसी ही मामूली कहे, लेकिन उसमे ऐसी बेतकल्लुफी, ऐसा तेवर और तीखापन होता था कि काफिया जाग उठता था और पूरा शेर सजकर रह जाता था। 'दाग' की एक गजल है—'काम नही' 'कयाम नही' इस जमीनमे कलामका काफिया बिल्कुल सामनेका है, और उसको नज्म करनेकी सूरते भी मुख्तलिफ (भिन्न-भिन्न) हो सकती है। लेकिन 'दाग' ने उसे जिस पहलूसे सर्फ किया (बान्धा), वह उन्हीका हिस्सा था। लिखते है—

सुनाई जाती है दर-परदा गालियाँ मुझको।
कहूँ जो मैं तो कहे, "आपसे कलाम नहीं" ॥

इस काफ़ियेको नज्म करनेमे 'दाग' का खयाल महबूबकी जिस तीखी अदाकी तरफ मुन्तकिल हुआ (गया) है। अगर वह अमली जिन्दगीमे इससे दो-चार न हुआ होता तो कयामततक इस पहलूसे यह काफ़िया नज्म न कर सकता।... 'दाग' की खसूसियत (विशेषता) का पता उस वक्त चलता है, जब एक ही रदीफ-ओ-काफ़ियोमे—दूसरोके अशआरके साथ 'दाग' के अशआरका मुकाबिला किया जाय। एक जमीन है—'आहमे, चाहमे'। इसमे निगाहके काफ़ियेको 'दाग' 'अमीर' और 'जलाल' सबने नज्म किया है।

अमीर— आँख अपनी फ़ित्नाहा-ए-कयामतपै क्या पड़े?
जिसके यह फ़ित्ने हैं, वोह है अपनी निगाहमे ॥

[दूसरे मिसरेमे 'हैं' और 'है' के समीप होनेसे बेलुत्फी आगई है]

जलाल— शोख़ी, फरेब, सहर, फसूँ, लाग, शोब्दा।
कितने करिश्मे देखे तेरी इक निगाहमें ॥

शेरमे तकल्लुफ ही तकल्लुफ है। ताहम अमीरके शेरसे अच्छा है। गो कोई खास बात नही।

दाग— दिलमें समा गई है, कयामतकी शोख़ियाँ।
दो-चार दिन रहा था किसीकी निगाहमें ॥

दागने जिस जाविये निगाह (दृष्टिकोण) को सामने रखकर इस काफ़ियेको निबाहा है, वह बिल्कुल नया और अछूता है।

अमीर— उठता नहीं है अब तो कदम मुझ गरीबका।
मंजिलसे कह दो दौडके ले मुझको राहमें ॥

'अमीर' का जाविये निगाह इस काफ़ियेमे जरूर नया है; लेकिन खुद मंज़िलका दौड़कर किसीको राहमे लेना, हकीकतसे मुतबाइद (वास्तविकतासे दूर) और यकसर तकल्लुफ-ओ-तसन्नोह (कृत्रिम) है।

दाग़— आती है बात-बात मुझे याद बार-बार।
कहता हूँ दौड़-दौड़के क़ासिदसे राहमें॥

पूरा शेर साँचेमे ढाला हुआ है। और एक ऐसे तजरुबेको पेश कर रहा है, जो मुहब्बतमे अक्सर पेश आता है। 'अमीर' को चूँकि मुहब्बत और बेकरारी-ए-मुहब्बतकी सआदत कभी नसीब न हुई थी। इसलिए उनका ज़हन (ध्यान) उस तरफ मुन्तकिल (आकर्षित) हो ही न सका था"।[1]

अब हम मिर्ज़ा 'दाग' के और उनके समकालीन शायरोंके चन्द तुलनात्मक अशआर वग़ैर किसी टिप्पणीके पेश कर रहे है, ताकि पाठक स्वय उनकी विशेषताओंका अनुमान लगा सके।

जलाल— सुना जो उसने कि मरते है हम, तो ख़ुश होकर।
वोह बख़्शवानेको, क्या अपने सब कसूर आया॥

तसलीम— बडी उमीद थी महशरमे सामना होगा।
वहाँ भी काम न मेरे, मेरा कसूर आया॥

अमीर— शौकसे मैंने जो ख़जरके तले सर रख दिया।
छेड़नेको हाथसे कातिलने ख़जर रख दिया॥

जलाल— दौडकर जो हमने उनके पाँवपर सर रख दिया।
बोले ठुकराकर "कहाँ फूटा मुकद्दर रख दिया"?

दाग़— ख़ुदाने बख़्श दिये हश्रमे बहुत आशिक।
ख़याले-यारमें कोई न बेकसूर आया॥

[1]निगार जनवरी १९५३ ई०, पृ० ४–६।

दाग़— हमने उनके सामने अव्वल तो ख़ंजर रख दिया।
फिर कलेजा रख दिया, दिल रख दिया, सर रख दिया॥

जलाल— कहते हैं मुर्ग़ेचमन "हमको यहीं ले न उड़े।
शक है झोंके पै सबाके भी कि सैयाद आया"॥

मुनीर— इस चमनमें हविसे-कैद भी निकली न कभी।
पत्ते खडके जो, मेरे ख्वाबमें सैयाद आया॥

दाग़— छूटकर कुंजे-क़फ़ससे भी यह खटका न गया।
जब सबा आई तो जाना, वही सैयाद आया॥

अमीर— जब वही हूर नहीं, खुल्दमें तो ऐ दावरे-हश्र!
झोंक देता मुझे दोज़ख़में तो अहसाँ होता॥

दाग़— हश्रके रोज तुझे पासे-अदालत होगा।
बख्श देता जो यहीं जुर्म तो अहसाँ होता॥

जलाल— रात गुज़री थी चमनमें, सुबह होते उठ गया।
आबो-दाना बुलबुलोंका कतरये-शबनम हुआ॥

दाग़— बे असर हो तो भी तूफ़ाँ हो, नहीं दरिया तो हो।
हसरत उस आँसूपै है जो कतरये-शबनम हुआ॥

अमीर— लाऊँ मैं उससे दिलमें कदूरत मुहाल है।
यह लाल खाकमें तो मिलाया न जायगा॥

दाग़— दिल क्या मिलाओगे कि हमें आ गया यक़ीं।
तुमसे तो खाकमें भी मिलाया न जायगा॥

अमीर— आँखोंने जो देखा तो उसे दिलने पुकारा।
"मैंने अभी ऐ जलवये-जानाँ नहीं देखा"॥

दाग— क्या जौक है, क्या शौक है, सौ मर्तबा देखूँ।
फिर भी यह कहूँ जलवये-जानाँ नहीं देखा॥

अमीर— आनेवाला, जानेवाला बेकसीमें कौन था।
हाँ मगर इक दम गरीब आता रहा, जाता रहा॥

दाग— अब कई दिनसे वोह रस्मो-राह भी मौकूफ है।
वरना बरसो नामाबर आता रहा, जाता रहा॥

जलाल— गुनाह बोले जो घबरा गया मैं महशरमें।
"अभी तो पुरसिशे-ऐमाल थी, हिसाब न था॥"

दाग— न पूछ मुझसे मेरे जुर्म दावरे-महशर!
मेरे गुनाहोंका दुनियाँमें भी हिसाब न था॥

जलाल— लाख अहसान जनाजेपै गरॉबारीके।
दो कदम कूचये-महबूबसे चलने न दिया॥

दाग— बद गुमानीने न चाहा उसे तनहा छोडूँ।
मैंने कासिदको अलग राहमें चलने न दिया॥

अमीर— बहार आई लुँढाते खुम-के-खुम हम बादाख्वारोंमें।
कहो तौबासे चन्दे जा रहे परहेजगारोंमें॥

अमीर— जिगर रोता है दिलको, दिल जिगरको, तुर्फा मातम है।
वोह इसके सोगवारोंमें, यह उसके सोगवारोंमें॥

दाग— किसीका दिल तो क्या, शीशा न टूटा बादाख्वारोंमें।
यह तौबा टूटकर क्यों जा मिली परहेजगारोंमें॥

जलाल— वोह मातम बज़्मे-शादी है, तुम्हारी जिसमें शिरकत हो।
वोह मरना जिन्दगी है, तुम जहाँ हो सोगवारोंमें ॥

दाग़— खुशी मर्गे-उदूकी लाख ग़मसे होगई बदतर।
मेरी आँखोंने देखा है, किसीको सोगवारोंमें ॥

अमीर— मस्जिदोंमें है, यह हू-हकके कहाँ हँगामे।
रंगे-तौहीद उछलता है ख़राबातोंमें ॥

दाग़— अबरे-रहमत ही बरसता नज़र आया ज़ाहिद!
ख़ाक उड़ती कभी देखी न ख़राबातोंमें ॥

अमीर— आज़माइशमें जान लेते हैं।
ख़ूब आप इम्तहान लेते हैं ॥

दाग़— साफ कब इम्तहान लेते हैं।
वोह तो दम देके, जान लेते हैं ॥

अमीर— वोह दिलकी ताकमें जब शौकसे बन ठनके बैठे हैं।
तो सौ ग़मज़ोंसे दिलपर तीर उस चितवनके बैठे हैं ॥

दाग़— दिलोंपर सैकड़ों सिक्के तेरे जोबनके बैठे हैं।
कलेजोंपर हज़ारों तीर इस चितवनके बैठे हैं ॥

जलाल— शौककी बेख़ुदियोंने यह किया गुम मुझको।
ढूंढता हूँ मैं तुम्हे, ढूँढ़ते हो तुम मुझको ॥

दाग़— अरसये-हश्रमें अल्लाह करे गुम मुझको।
और फिरो ढूँढ़ते घबराये हुए तुम मुझको ॥

अमीर— मैं जो मर जाऊँ तो ऐ पीरे मुगाँ ! कह देना ।
मुगबचे[1] खीचके डाल आयें पसेखुम मुझको ॥

जलाल— या रब ! आबाद रहे जेरे-फलक बादापरस्त ।
लाके मैखानेमे गाड़ा है, तहे-खुम मुझको ॥

दाग— देखना पीरेमुगाँ ! हजरते वाइज़ तो नही ।
कोई बैठा नज़र आता है, पसेखुम मुझको ॥

तसलीम— वक्ते-आखिर है उन्हे रुख़सत करो 'तसलीम' अब ।
कौन जाने क्या हो दममें, क्या-से-क्या होने लगे ॥

दाग— गैरके मज़कूरपर मेरा बिगडना था बजा ।
ठहरो-ठहरो, सम्भलो-सम्भलो, क्या-से-क्या होने लगे ॥

तसलीम— चाहता हूँ इतनी मैं तासीर अपने इश्कमे ।
शर्मके उठ जायँ परदे सामना होने लगे ॥

अमीर— इक जरा देख तो क्या कहते है मरनेवाले ।
ओ गरीबोके मज़ारोपै गुज़रनेवाले ॥

जलाल— तेरे सब नाज है, गो जिन्दा ही करने वाले ।
ढूँड रखते है बहाना कोई मरनेवाले ॥

मुनीर— गुज़रे जायेगे युँही जैसे गुज़रनेवाले ।
तुम सलामत रहो, जीते रहे मरनेवाले ॥

दाग— 'दाग' मैं परचा ही लूँगा, बातो-बातोमे उन्हे ।
शर्त ये है मेरा उनका सामना होने लगे ॥

---

[1] शराब पिलानेवाले खूबसूरत लडके,

दाग— यह तो पूछे मेरे मरकदपै गुज़रनेवाले ।
"क्या गुज़रती है तेरी जानपै मरनेवाले" ?

अमीर— है जवानी खुद जवानीका सिंगार ।
सादगी गहना है इस सिनके लिए ॥

दाग— कुछ निराला है जवानीका बनाव ।
शोख़ियाँ जेवर है इस सिनके लिए ॥

अमीर— वस्लका दिन और इतना मुख्तसर ?
दिन गिने जाते थे इस दिनके लिए ॥

दाग— फैसला हो आज मेरा आपका ।
यह उठा रक्खा है, किस दिनके लिए ?

अमीर— सारी दुनियाके है वोह मेरे सिवा ।
मैंने दुनिया छोड दी जिनके लिए ॥

दाग— वोह नही सुनते हमारी क्या करें ?
मॉगते थे हम दुआ जिनके लिए ॥

जलाल— बागसे कर लेगया सैयाद मुझको कब असीर ?
जब ख़िज़ाँ जानेको थी, फस्ले-बहार आनेको थी ॥

तस्लीम— वाये किस्मत कब किया सैयादने कैदे-कफस ?
जब ख़िज़ाँ जानेको थी, फस्ले-बहार आनेको थी ॥

अमीर— दिलो-जिगरकी तडप देखकर वोह कहते है ।
कि मुद्दईसे भी चालाक यह गवाह मिले ॥

दाग— बाद मेरे क्यों नवीदे-वस्लेयार आनेको थी ।
वोह चमन ही मिट गया जिसमें बहार आनेको थी ॥

जलाल— पुकार उठूँ जो दुबारा तेरी निगाह मिले।
कि दिलको ले गई आँख उसकी, दो गवाह मिले॥

दाग़— कहाँ थे रातको हमसे जरा निगाह मिले।
तलाशमें हो कि झूठा कोई गवाह मिले॥

अमीर— घबरा न हिज्रमें बहुत ऐ जाने मुजतरिब!
थोड़ी-सी रह गई है उसे भी गुजार दे॥

दाग़— दिल दे तो इस मिजाजका परवर्दगार दे!
जो रजकी घडी भी खुशीसे गुजार दे॥

अमीर— कहते हैं "आज तो नाख़ूनसे दी मेरे तशबीह।
कल कहोगे मेरे अबरूसे हिलाल अच्छा है"॥

दाग़— या दिखादो मुझे तुम पाँवका नाख़ुन अपना।
या यह कह दो "मेरे नाखुनसे हिलाल अच्छा है"॥

अमीर— न चूक वक़्तको पा करके है यह वोह माशूक़।
कभी उमीद नहो जिससे जाके आनेकी॥

जलाल— ठहर रही है जो आँखोमें जाने-वक़्त अख़ीर!
यह मुन्तज़िर है किसी बेवफाके आनेकी॥

दाग़— बना हूँ मैं नफसे-वापिसीं नकाहतसे।
न आके जानेकी ताकत न जाके आनेकी॥

अमीर— न सुने दर्दे-दिल मेरा न सुने।
मैं कहूँगा वोह सुने या न सुने॥

दाग़— मेरी फरियाद दूसरा न सुने।
तुम सुनो ऐ बुतो! ख़ुदा न सुने॥

अमीर—　　　　　　आहें करना कहीं तू यूँ ऐ दिल !
　　　　　　　　　कोई मेरे तेरे सिवा न सुने ।।

दाग—　　　　　　हिज्रमें जो दुआएँ माँगी हैं ।
　　　　　　　　　कोई अल्लाहके सिवा न सुने ।।

दाग देहलीमे पैदा हुए और वही उनका लालन-पालन हुआ, लेकिन उनकी शायरीको देहलीकी दाखिली शायरीसे दूरका भी वास्ता नही। उन्होने जब कूच-ए-शायरीमे कदम रखा तो वहाँ 'गालिब' और 'मोमिन'—जैसे अमर कलाकार अपना कौशल दिखला रहे थे, परन्तु उनसे वे कोई लाभ नही उठा सके। क्योकि 'दाग' किलेके जिस वातावरणमे परवान चढ रहे थे, और उस्ताद 'जौक' से जिस प्रकारका दर्से-शायरी (कविता-पाठ) ले रहे थे, उससे यह सम्भव ही नही था कि वे 'गालिब' और 'मोमिन' की सुहबतका कुछ लाभ उठा सकते।

'दाग' की शायरीमे हृदयगत भावो, उच्च विचारो और पवित्र प्रेमका अभाव है। उनकी शायरीमे मीर, दर्द, गालिबकी शायरीके तत्व न मिलकर 'जुरअत' और 'इन्शा'-जैसे शोख रग घुले-मिले है।

लेकिन जहाँतक 'दाग' के लबोलहजा, तेवर, बाँकपन, शोखिये-बयान, जबानके चटखारे और मुहावरोके चुस्त इस्तेमालका सम्बन्ध है[1], उसमे वे अपना जवाब नही रखते।

---

[1]मिर्जा 'गालिब' भी 'दाग' की भाषा और मुहावरोके प्रयोगके प्रशसक थे। मुहम्मद निसारअली 'शुहरत' ने 'आईनयेदाग' मे लिखा है—"एक रोज मैं मिर्ज़ा गालिबकी खिदमतमे हाजिर हुआ। उसवक़्त आप खानानोश फर्मा रहे थे। मै बाअदब एक तरफ बैठ गया। आपने एक रगतरा (संतरा) मेरी तरफ फेका कि इससे शगल कीजिये। चूकि रमजानका महीना था और मुझे रोज़ा था। मैंने उस रगतरेको

'दाग' की यही विशेषतायें उनके शिष्योको विरासतमे मिली और वे भी सब (इकबाल, सीमाब, जोश मलसियानी के अतिरिक्त) जीवन भर इसी कूचेमे गुलफिशानियाँ करते रहे। गो कभी-कभी ज़मानेके उलट-फेर और समयके बहावमे इन्होने भी परिवर्त्तन किया, परन्तु मुख्य और प्रिय रग वही रहा जो उस्तादका था। किसी शायरके सम्बन्धमे केवल इस दृष्टिकोणसे अच्छी या बुरी धारणा बना लेना कि वह अश्लील कहता है या पवित्र, उचित नही। नग्न चित्र केवल इसीलिए तिरस्कार योग्य नही हो सकता कि वह नग्न है। यदि वह कलापूर्ण है और चित्रकार उसमें जो भाव व्यक्त करना चाहता था, वे सब उससे व्यक्त हो रहे है,

---

हाथ नही लगाया। आप ताड गये और फर्माते क्या हैं—"हाँ आप मौलवी हो गये है।" मैं हँसा तो आप भी मुसकराने लगे। जब आप खाना नोश फर्मा चुके तो कलमी रिसाला आपके सामने रखा था, उसमे कुछ बनाने (संशोधन करने) लगे। गालिबन इस्लाह दे रहे थे। मैंने गुज़ारिश (प्रार्थना) की—'जनाब क्या इरकाम फर्मा रहे हैं (लेखन-कार्य कर रहे हैं!)' तो फर्माने लगे—'इसमे फारसी अल्फाज़ (शब्द) बहुत ठूँस दिये गये है। इसलिए उन्हे निकाल रहा हूँ और सुस्ता (सरल) उर्दू अल्फाज इसमे डाल रहा हूँ। मैंने अदबके साथ गुज़ारिश की—'आपका दीवान भी तो फारसी से माला-माल हैं।' फर्माने लगे—'वे जवानीकी नाज़ुक खयालियाँ है। बाज़ शेर तो ऐसे अदक (कठिन) मेरे कलमसे निकल गये है कि मै अब उनके मायने खुद नही बयान कर सकता।' फिर फर्माने लगे—'देहली वालों' की जो उर्दू है, उसको ही अशआरमे लिखना चाहिए। आखिर उम्रमें तो हमारी यहीं राय कायम हुई है।' मैंने अदबके साथ गुज़ारिश की—'दाग' की उर्दू कैसी है? फर्माने लगे—ऐसी उम्दा है कि किसीकी क्या होगी। 'ज़ौक' ने उर्दूको अपनी गोदमें पाला था। 'दाग' उसको न फ़क़त पाल रहा है, बल्कि उसको तालीम दे रहा है।"

[निगार, अप्रैल १९५३, पृ० ३८-३९]

तो वह चित्र उन सैंकडो चित्रोके आगे प्रशसनीय है, जो किसी देवताके नाम पर किसी फूहडने बनाये है। शेरकी भी परख इसी दृष्टिकोणसे करनी चाहिए कि, जो शायर कहना चाहता था, उसे वह सलीकेसे कह सकनेमे सफल हुआ है या नही। शायरी भी एक चित्रकला है। चित्रकारोमे कोई प्राकृतिक दृश्योपर मोहित होता है तो कोई पशु-पक्षियोपर तूलिका चलाता है। कोई देवी-देवताओके चित्र बनानेमे महारत रखता है तो कोई दीन-दुखियोमे खोया रहता है। कुछ सौन्दर्योपासक है तो कुछ व्यग चित्र बनाते नही अघाते।

इसीप्रकार बाज शायर उपमाओ-अलकारोकी छटा बखेरते है तो बाज शब्दोके रख-रखावकी झडी लगाते है। कुछको हुस्नो-इश्ककी रगीन दास्तान पसन्द है तो कुछको व्यथापूर्ण उद्गार रुचिकर है—

पसन्द अपनी-अपनी नजर अपनी-अपनी

यही कारण है कि एक ही मिसरेपर शायर अपनी प्रकृति एव स्वभावके अनुसार भिन्न-भिन्न तरीकोसे शेर कहते है। आशा है पाठक इसी दृष्टिकोणसे हर शायरके कलामका अध्ययन करेगे।

हमारे देखते-देखते बज़्मे-अदबसे कितनी ही विभूतियाँ उठ गई, जो बची है अपनी ज़िन्दगीकी आख़िरी मजिलोमे है। उनका रगे सुख़न पुराना हो चुका है, उनकी आवाजे थक चुकी है। फिर भी उनका दम गनीमत है, उन्होने पुराने लोगोकी आँखे देखी है और अपने सीनेमे वे कीमती इतिहास छुपाये बैठे है। बकौल इकबाल—

न पूछ इन ख़िरकापोशोकी, इरादत हो तो देख इनको।
यदे-बेज़ा लिये बैठे है, अपनी आस्तीनोमें' ॥

२५ फरवरी १९५४ ई०]

'इन भिक्षुक-से दीखनेवाले फटेहाल व्यक्तियोको कुछ न पूछिये, बहुत पहुँचे हुए लोग है। यदि जाननेकी अभिलाषा है तो इन्हे श्रद्धापूर्वक समीपसे देखो। तब मालूम होगा कि इनमे कैसे-कैसे चमत्कार छिपे हुए है।



'सीमाब' अकबराबादी

[१८८० – १९५१ ई०]

शेख आशिकहुसेन साहब 'सीमाब' १८८० ई०मे आगरेमे जन्मे। अरबी-फारसीकी पूर्णरूपेण शिक्षा प्राप्त करनेके अतिरिक्त एफ० ए० तक अग्रेज़ी भी पढी। शायरीका शौक स्वभावत था। स्कूलमे पढते हुए फारसीकी पाठ्य पुस्तकोंके फारसी अशआ़रको आप उर्दूका रूप देकर अपने शिक्षकको दिखाते रहते थे। यही आपका दैनिक कार्य था। एक बार जब आपने 'बोस्तॉ'की एक कहानी नज्म करके शिक्षकको दिखाई तो उन्होने उसी पृष्ठपर यह शेर लिख दिया—

जब नही है शेर कहनेका शऊर।
फिर भला है शेर कहना क्या जरूर ?

लेकिन मुसकराकर यह भी फर्माया कि "कल फिर किसी फारसी नज्मका तर्जुमा उर्दूमे नज्म करके लाना।" इसी तरह आपका धीरे-धीरे अभ्यास बढता गया। पिताके निधनके कारण आपको १७ वर्षकी उम्रमे कालेज छोडना पडा, और आजीविकाके लिए कानपुर जाना पडा। अभीतक आप शायरीमे किसीके बाकायदा शिष्य नही थे। अत' मुशायरोमे गज़ल कहनेका साहस नही होता था। १८९८ ई०मे आप मिर्ज़ा

दागके शिष्य हो गये। अभी आपने २-३ गजल ही उनके पास सशोधनके लिए भेजी थी कि उस्तादने लिख भेजा कि "अभी आपको मश्ककी जरूरत है।" उस्तादके आदेशानुसार आपने उनके पास गजले भेजना बन्द करके खूब अभ्यास किया। कई मासके निरन्तर अभ्यासके बाद उस्तादके पास गज़ल भेजी तो उस्तादने सशोधनके साथ यह भी लिखा—"आफरी है, क्या खूब गजल कही है।" उस्तादके इन शब्दोसे आपके उत्साहमे दिन-दूनी, रात-चौगनी उन्नति हुई। हौसले बढते गये, झिझक निकलती गई, और नि सकोच मुशायरोमे शिरकत फर्माने लगे। उस्तादके निधनके बाद किसी अन्यको सशोधनके लिए कलाम नही दिखाया। स्वयके अध्यव-सायसे शायरीमे यह रुत्वा प्राप्त किया।

आप कानपुर, अजमेर, आगरेमे पहले नौकरी करते रहे, किन्तु जब आपको यह महसूस हुआ कि 'मेरा जन्म साहित्य-सेवाके लिए ही हुआ है' तो आप १९२९मे आगरेमे स्थायी रूपसे रहकर जीवन पर्यन्त साहित्य-सृजन करते रहे। 'शायर' मासिक पत्रके प्रकाशनके साथ आपने निम्न-लिखित उपयोगी ग्रन्थ भी लिखे—

१—कारे-अमरोज़—१५० नज्मोका पहला सकलन।

२—साज़ो-आहंग—नज्मोका दूसरा सकलन।

३—कलीमे-अज्म—गजलोका पहला सकलन।

४—सदरुलमिन्तहा—१९३६ से १९४२ तक की गजलोका दूसरा सकलन।

५—आलमे-आशोब—द्वितीय महायुद्ध और तत्कालीन वातावरण-पर १९४०से १९४३ तक कही हुई ३०० रुबाइयाँ।

६—शेरे-इन्कलाव—इन्कलाव सबधी नज्मोका सकलन।

७—दस्तूरउलइस्लाह }
८—राजेउरूज } शायरीका व्याकरण।

९—नफीरेगम }
१०—सरूदेगम } इस्लाम सबधी।

११—इलहामेमजूम भाग ६—मौलाना रूमके फारसी कलामको उर्दूमे नज्म किया गया है।

हज़ारसे ऊपर आपके शिष्य भारतके कोने-कोनेमे विद्यमान हैं। भारत-विभाजनके फलस्वरूप आपको भी १६ अगस्त १६४८को भारत छोडकर पाकिस्तान जाना पडा। यह विधिकी कैसी विचित्र लीला है कि जो व्यक्ति अपने देशको स्वतत्र देखनेको जीवनभर तडपता रहा, देश-वासियोको गुलामीकी ज़जीरे तोड फेकनेके लिए उकसाता रहा, साम्प्र-दायिकोके गढोपर निरतर हमले करता रहा, मानव-सेवा जिसका दीन और ईमान रहा, उसी व्यक्तिको अपने देशमे समाधिके लिए दो गज जमीन न मिल सकी। उसे उसी पाकिस्तानमे दफ्न होना पडा, जिसका वह घोर विरोध करता रहा। बीमारीकी हालतमे आपने अपने पुत्र एजाज सिद्दीकीसे फर्माया—

"मसाइब (मुसीबतो)से घबराना नही, खुद एतमादी (आत्म-विश्वास)से काम लेना। मेरे मिशनको जारी रखना, मेरी तहरीको (आन्दोलनो)को आगे बढाना, मेरे तमाम शागिर्दोको मुत्तहद (सगठित) करना, मेरी बकीया किताबोको मुरत्तब करके छपवाना। तुम . तुम तुम जिम्मेदार हो। अल्लाह तुम्हारी मदद करे। मै कराँचीमे मरना नही चाहता, मुझे आगरा ले चलो।"

मगर अफसोस आप आगरे नही लाये जा सके। ३-४ माह लकवेसे ग्रसित रहकर ३१ जनवरी १६५१ ई० को कराँचीमे ही समाधि पाई।

मिर्जा दागके तकरीबन दो हजार शिष्य थे। उनमेसे सर 'इकबाल', 'जोश' मलसियानी, 'सीमाब' अकबराबादी तीन ऐसे शिष्य निकले, जिन्होने

उस्तादके पथ-चिह्नोंपर न चलकर अपने-अपने लिए नवीन पथ खोज निकाले। 'इकबाल'ने गजल बहुत कम कही। वे नज्मगो शायर थे। इश्किया शायरी न करके शुरू-शुरूमे उन्होने वतनियत और कौमियतके वह राग अलापे कि मुर्दा दिलोमे जीवन-संचार होने लगा। आध्यात्मिकता और दार्शनिकताकी वह सुरा पेश की, कि लोग पीकर झूमने लगे। यदि वे साम्प्रदायिक वहावमे न बहे होते तो उर्दूके सर्वश्रेष्ठ, महान और अमर शायर हुए होते।[1]

'जोश' मलसियानीने गज़ल और नज्म दोनोमे तबा आज़माई की। मगर उनका तगज्जुल मिर्ज़ा 'दाग'के रगे-तगज्जुलसे कतई जुदा है[2]।

'सीमाब' गज़ल और नज्म दोनोके ही कोहनामश्क और श्रेष्ठ शायर हैं। उन्होने गज़लमे नया लबो-लहज़ा अख्तियार किया है। उनके यहाँ विषय-लोलुपता हेय, और पवित्र प्रेम आदरणीय है। मानवता उनका दीन और ईमान है। देशके वे चारण है। सम्प्रदायवादियोके घोर शत्रु हैं।

'सीमाब'के जीवनका उद्देश्य क्या है? यह उन्हीके जबाने-मुबारकसे सुनिये—

गफलतमे सोनेवालोकी मै नीद उड़ाने आया हूँ।
दुनियाको जगाकर छोडूँगा, दुनियाको जगाने आया हूँ॥
जो नाक़िस[3] है वोह दस्तूरे-तदबीर[4] मिटाने आया हूँ।
इन्सानके शायाँ आईने-तकदीर बनाने आया हूँ॥

---

[1]सर इक़बाल और उनकी शायरीके लिए देखे 'शेरोशायरी', पृ० ३०७-३४६। [2]जोश मलसियानीका परिचय प्रस्तुत पुस्तकमे दिया जा रहा है। [3]निकम्मा; [4]पुरुषार्थका नियम, (वर्तमान कालीन मज़दूर श्रम-समस्यासे तात्पर्य है)।

मैं सोज़े-वफ़ाका दुनियाको पैग़ाम सुनाने आया हूँ।
जो आग लगे तो बुझ न सके वोह आग लगाने आया हूँ॥

यह आत्मा ही परमात्मा बन सकता है, मगर कब ?

अगर हद्देख़ुदी-ओ-बेख़ुदीसे मावरा[1] होता।
तो यह इन्सान फिर इन्सान क्यों होता ख़ुदा होता॥

नेतृत्वकी बागडोर स्वय अपने हाथमे ले, यूँ कबतक किसीके पीछे-पीछे चलता रहेगा ?

इसी रफ़्तारे-आवारासे भटकेगा यहाँ कबतक ?
अमीरे-कारवाँ बन जा, गुबारे-कारवाँ कबतक ?

अन्दर-ही-अन्दर सुलगते रहनेकी अपेक्षा हृदय-ज्वालाको प्रज्वलित कर ले —

सुलगना और जीना, यह कोई जीनेमें जीना है।
लगा दे आग अपने दिलमें दीवाने धुआँ कबतक ?

उसकी खोजमे लीन रहनेवालोको मन्दिर और मस्जिदके झमेलोमे पडनेका अवकाश कहाँ ?

जब तू नही तो ख़िलवते-दैरोहरम फ़िज़ूल।
अब क्या यहाँ परिस्तिशे-दीवारो-दर करें॥

हरम-ओ-दैरके कुत्बे वोह देखे, जिसको फ़ुर्सत है।
यहाँ हद्देनज़र तक सिर्फ़ उनवाने-मुहब्बत[2] है॥

---

[1]उच्च, निर्लिप्त, [2]मुहब्बत-ही-मुहब्बत, प्रेमका शीर्षक।

जो दैरोहरम छोड़ दे मंजिलपै वोह पहुँचे !
है कोई परिस्तारे-सनमखानये-मंजिल ?

त्यागी और लक्ष्मी-उपासककी तुलना क्या ?

कहाँ तू और कहाँ मैं मंजिले-हस्तीमे ऐ मुनअम[1] !
कि तू ठोकर है दौलतकी, मेरी ठोकरमें दौलत है ॥

खुदाकी यादमे बार-बार सजदा करनेके क्या मानी ?

वोह सजदा क्या ! रहे अहसास जिसमे सर उठानेका ।
इबादत और ब-कदरे-होश तौहीने-इबादत है ॥

'इन्कलाब जिन्दाबाद' कहना आसान है। मगर इन्कलाब आनेपर डटे रहना हँसी-खेल नही। इन्कलाबकी एक जुम्बिश (द्वितीय महायुद्ध और भारत-विभाजन)को देखकर ही लोग त्राहि-त्राहि कर उठे—

तुझको दीवाने है, नाहक इन्तजारे-इन्कलाब ।
एक करवट भी जो ली दुनियाने, घबरा जायगा ॥

'मनमे राम बगलमे छुरी' इसी भावको 'सीमाब' अपने शायराना अन्दाजमे यूँ व्यक्त करते है—

दमागो-रूह यकसाँ चाहिए इन्साने-कामिलमें ।
यह क्या तकसीमे-नाकिस है, खुदी सरमें खुदा दिलमें ॥

'मानो तो देव नही पत्थर'—आत्मविश्वास बहुत बडी शक्ति है—

हो यकीं दिलमें तो, बन जाती है फिर हर शय खुदा ।
बुतकदा जुज़ ऐतबारे-बिरहमन कुछ भी नही ॥

---

[1]धनिक ।

जो व्यक्ति अपने देशके सुख-दु.खको अपना सुख-दु ख नही समझता, उस देश-द्रोहीको अपने देशमे मरनेका भी क्या अधिकार है ?

उसको क्या हक है कि वोह खाकेवतनमे दफ़्न हो ।
जिसके दिलमे अजमते-खाकेवतन कुछ भी नहीं ।।

यदि हमारे कारण हमारे देशपर आँच आती है तो हम—

बनायें क्यो न कही और जाके घर अपना ।
चमन तबाह ब-तकदीरे-आशियाँ क्यो हो ?

२६ जनवरी १९३०को जब पहले-पहल कॉग्रेसने स्वतन्त्रता दिवस मनाया तो जी हुजूरोने बहुत मजाक उडाया कि "लो भई गुलामके गुलाम रहे और आजाद भी हो गये। अगर इसीको स्वराज्य कहते है तो यह तो बहुत पहले भी लिया जा सकता था।" मगर उन्हे क्या मालूम कि—

फकत अहसासे-आजादीसे आजादी इबारत है ।
वही दीवार घरकी है, वही दीवार जिन्दाँकी ।।

अकर्मण्य देशवासियोके प्रति—

जरा खुलकर पुकार ऐ सूर[1] ! मजजूबाने-उल्फतको[2] ।
यह दीवाने कही बैठे न रह जाये बयाबाँमें ।।

ये मजहबी दूकाने—

वोह दैर-ओ-कलीसा हो, या काबा-ओ-बुतखाना ।
कुछ परदे है, कुछ धोके, कुछ शोन्दागाहे है ।।

---

[1]वोह नरसिंह बाजा जो इस्लामधर्मके अनुसार कयामतके दिन हज़रत मुहम्मद बजायेंगे; [2]उल्फतमे गर्क होने वालोको, प्रेमविभोर व्यक्तियोको ।

इश्क़में रोना-विसूरना तौहीने-इश्क है—

खामोश ऐ असीरेकफ़स ! यह फुगाँ, यह शोर !
तौहीन कर रहा है, निशाने-बहारकी ॥

जब दिलपै छा रही हों घटायें मलालकी।
उस वक़्त अपने दिलकी तरफ़ मुकसराके देख ॥

ऐ गमे-इश्क तेरे जर्फ़में कुछ आग भी है ?
आँसुओसे तो इलाजे-तपिशेदिल न हुआ ॥

हमारी खाना वीरानी ज़मानेपर अयाँ क्यों हो ?
जले जितना नशेमन सुर्ख उतना आसमाँ क्यो हो ?

प्रेमीका स्वाभिमानी होना भी आवश्यक है—

इतना बुलन्द कर नज़रे-जलवाख्वाहको[1]।
जलवे खुद आयें ढूंड़ने तेरी निगाहको ॥

प्रेममें सफलता कैसी ? प्रेम करना है तो हृदयको हानि-लाभके विचारसे स्वच्छ कर लेना चाहिए—

मुहब्बत नाम है लाहासली[2]-ओ-नातमामीका[3]।
मुहब्बत है तो दिलको फारगे सूदो-जियाँ[4] कर ले ॥

जबतक अपने प्यारेका तसव्वुर दिलमें न हो, नमाज और पूजा सब व्यर्थ है—

तू हो निगाहो-दिलमें तो लुत्फे-नमाज है।
वरना नमाज सिर्फ़ जुनूने-नियाज[5] है ॥

---

[1]जलवा देखनेकी ख्वाहिशको, [2]असफलता, [3]अपूर्णताका; [4]हानि-लाभके भावसे रहित; [5]उपासनाका उन्माद।

वह सुख किस कामका, जिसमे ईश्वर याद न रहे। इससे तो दुःख ही अच्छा, जिसमे उसकी याद तो बनी रहती है—

हासिले-ज़ीस्त[1] मसर्रतको समझनेवाले।
यक नफस[2] गम भी, कि दमभर तो खुदा याद रहे॥

मानव अपनी ही खीची हुई रेखाओंमे घिरकर इतना अशक्त एव निर्बल हो गया है कि उसे अपनी वास्तविक शक्तिका भी ज्ञान नही रहा—

छीन लीं फिक्रे-नशेमनने मेरी आज़ादियाँ।
जज्बये-परवाज महदूदे-गुलिस्ताँ हो गया॥

आरज़ी हदबन्दियाँ है, देस क्या परदेस क्या?
मै हूँ इन्साँ वुसअ़ते-कौनीन[3] है मेरा वतन॥

इस दुनियाकी दुनियादारी देखिये कि जो हमे सबसे अधिक प्रिय है, वही हमे मिट्टीमे मिलाता है, और वही सबमे अधिक अपनेको शोकाकुल प्रकट करता है—

मुझे आता है रोना रस्मे-हमदर्दीपै दुनियाकी।
मिला देगा यही मिट्टीमें जो है नोहाख्वाँ[4] मेरा॥†

हमारा सबसे प्यारा कौन? जो मुसीबतमे याद आये—

तुम्हीं उस वक़्त याद आते हो।
जब कोई आसरा नही होता॥*

---

[1]सुख-चैनको जीवनकी सफलता समझनेवाले। [2]लमहेभरको दुख भी जरूरी है; [3]समस्त विश्व, [4]मातम करनेवाला।

†सबसे बड़ा पुत्र ही चितामे आग देता है अथवा कब्रमे सुलाता है।

*असर लखनवीने इसी मज़मूनको क्या खूब बाँधा है—

हम उसीको खुदा समझते हैं।
जो मुसीबतमें याद आ जाये॥

शख और अज़ानके झगडे व्यर्थ है। दोनोमे उसीकी आवाज़ है—

एक लफ़्ज़े 'हू'[1], सदा[2] करनेके सौ अन्दाज है।
नालये-नाकूस[3] है गोया अज़ाने-बिरहमन ॥

इच्छाये मनको निराकुल नही रहने देती, इच्छाये हटे तो मनसे आकुलता भी हटे—

दिलमे कितना सकून[4] होता है।
जब कोई मुद्दआ नही होता ॥

जमाना गर मुख़ालिफ है तेरा, बेमुद्दआ हो जा।
न दिलमे मुद्दआ होगा न दुनिया मुद्दई होगी ॥

उस दिलपै निसार दोनो आलम।
जिसमें कोई मुद्दआ नहीं है ॥

है हसूले-आरजूका राज[5] तर्के-आरजू[6]।
मैंने दुनिया छोड दी तो मिल गई दुनिया मुझे ॥*

जिसप्रकार आम लू और आँधीके थपेडे खाते-खाते परिपक्व होता है, उसी तरह आदमी भी असफलताओके चरके खाकर ही आदमी बनता है—

हो न जबतक शिकारे-नाकामी।
आदमी कामका नही होता ॥

माशूककी कृपा प्राप्त न हुई तो इसका शिकवा क्या ?

---

[1]ख़ुदाका सक्षिप्त नाम, [2]आवाज, [3]शखध्वनि, [4]चैन-सन्तोष; [5]इच्छाओकी सफलताका भेद, [6]इच्छाओके त्यागनेमे है।
*इसी भावको स्वामी रामतीर्थने यूँ व्यक्त किया है—

भागती फिरती थी दुनिया, जब तलब करते थे हम।
जब हमें नफरत हुई, वोह बेकरार आनेको है ॥

उनसे शिकवा फिजूल है 'सीमाब' !
काबिले-इलतफात[1] तू ही नही ॥

मालूम नही पाठकोका ऐसे दोस्तोसे वास्ता पडा है या नही, जो जिन्दगी भरके किये हुए अहसानोको क्षणभरमे भुला दे. और राई जितनी भूलको पहाड समझकर सदैव याद रखे।

तेरी इस भूलका अहसाँ, तेरी इस यादका शुक्र।
कि मुझे भूल गया मेरे गुनाह याद रहे॥

और ऐसे हितैषियोको क्या कहिये ?

अजब हमदर्दिये-मुहमिल[2] है, रस्मेचारासाजी[3] भी।
नही है जिसके दिलमे दर्द, वोह आये है दरमाँको[4] ॥

ससारकी सब वस्तुये क्षणिक है, केवल प्रेम ही स्थाई है—

कैसरी[5]-ओ-खुसरवी[6] तो ढलती-फिरती छाँव है।
इश्क ही इक जाविदाँ[7] दौलत है, इन्सानोके पास॥

कामुक व्यक्ति और चाहे जो कुछ भी हो, वह प्रेमी कदापि नही—

गर नजरे-हविस[8] तेरी दामने-हुस्न छू गई।
इश्ककी आबरू कहाँ ? नफसकी[9] आबरू गई॥

जो ईश्वरीय प्रेममे दिन-रात रत हो, उसे प्रकट रूपमे पूजा-उपासनाकी जरूरत नही —

---

[1]कृपा-योग्य; [2]निरर्थक सहानुभूति, [3]चिकित्साकी प्रथा; [4]इलाजको, [5][6]बादशाहत, [7]नष्ट न होनेवाली, स्थाई; [8]कामुक दृष्टि, [9]शारीरिक इन्द्रियोकी, मनकी।

वोह अपनी ज़िन्दगीमे बन्दगी क्यों लाज़िमी समझे ?
जो अपनी ज़िन्दगीको इक मुसलसल[1] बन्दगी समझे ।।

बुतशिकन बुतोको तोडते-फिरते हैं। मगर उनके दिलमे जो अहकारका सबसे बडा बुत मौजूद है, उसे नही तोडते ?

कर रहे हैं, दिलमे पिन्दारे-ख़ुदीकी[2] परवरिश ।
जिसमें इक सबसे बड़ा बुत है, वोह है बुतख़ाना हम ।।

सीमाब अपने प्यारेका जलवा सर्वत्र देखते हैं, मूर्तिमे भी वही उनका प्यारा दृष्टिगोचर है—

बुतमे भी देखता हूँ उसी ख़ुदनुमाको मैं ।
अब सजदा बिरहमनको करूँ या ख़ुदाको मैं ।।

प्यारेकी तल्लीनतामे—

आज़ुरदा[3] इस क़दर हूँ सराबेख़याल से[4] ।
जी चाहता है तुम भी न आओ ख़यालमें ।।
तग आके तोड़ता हूँ, ख़याले-तिलस्मको ।
या मुतमइन[5] करो कि तुम्ही हो ख़यालमें ।।

आते भी हो तो अभी न आना ।
हूँ महवे-तसव्वुर आज़माई ।।

माथेकी आँखे बन्द करके हियेकी आँखोसे देखा जाय तो उसका जलवा दिखाई दे—

---

[1]लगातार, [2]अभिमान और अहमकी, [3]व्यथित, [4]प्रेयसी और चिन्तनरूपी मृगमरीचिकासे, [5]आश्वस्त ।

अगर है जौके-तमाशा तो बन्दकर आँखे।
जहाँ निगाह नही है, वहाँ हिजाब नहीं॥

मिटाना तो आसान है, निर्माण मुश्किल है—

बताएँ तो मेरी हस्ती बिगाड़नेवाले।
बिगाड़कर कोई मुझको बना भी सकता है?

दुनियाकी हाय-हायमे मरनेवाले—

तू हविसमें दुनियाकी जिन्दगी मिटा बैठा।
भूल हो गई गाफिल! जिन्दगी ही दुनिया थी॥

छिद्रान्वेपी दूसरोके छिद्र देखते है अपने नही।

मेरे गुनाहोपै करे, तब्सरा[1] लेकिन—
सिर्फ मै ही तो गुनहगार नही॥

अब हम 'सीमाब' साहब और पाठकोंके बीचमे अधिक मुखिल नही होना चाहते। पहले आपके खुदके चन्द पसन्दीदा अशआर 'निगार' जनवरी १९४१से साभार दिये जा रहे हैं[2]—

मेरी रसाईसे दूर है तू, मगर अभी तुझको याद होगा।
कि मैंने ईमनकी वादियोमें उलट दिया था नकाब तेरा॥

खुदबी[3]-ओ-खुदशनास[4] मिला, खुदनुमा[5] मिला।
इन्साँके भेसमें मुझे अक्सर खुदा मिला[6]॥

---

[1]टीका-टिप्पणी; [2]आपकी नज्मोके चन्द उदाहरण 'शेरोशायरी'मे दिये जा चुके हैं। प्रस्तुत पुस्तकमे केवल गजलोका उल्लेख हुआ है। इसलिए यहाँ आपकी, गजलोंके अशआर ही पेश किये जा रहे हैं, [3]अपनी आनवान देखनेवाला, अभिमानी, [4]अपनेको जाननेवाला, महत्वाकाक्षी, [5]आत्मविज्ञापन करनेवाला, [6]भाव यह है कि इन्सान इस तरहकी शेखी वघारता है, मानो वही खुदा है।

अल्लाहरे शामेगम मेरे दिलकी शिकस्तगी।
तारोंका टूटना भी मुझे नागवार था॥

जबीसाईसे[1] तसकी, न सजदासे तसल्ली।
उठाकर सरमे रख लूँ, तुम्हारा नक़्शे-पा क्या ?

मैं अपने हालसे ख़ुद बेख़बर हूँ।
तुम्हारी कमनिगाहीका गिला क्या॥
दुआ दिलसे जो निकले कारगर हो।
यहाँ दिल ही नही दिलसे दुआ क्या॥

यह ज़मी ख़ुद एक दिन क्या जाने क्या बन जायगी ?
गर युँ ही इन्सान पैवन्देज़मी[2] होता रहा॥

फितरत यही अज़लसे है बर्क़ेजमालकी।
उसने जिसे तबाह किया तूर कर दिया॥

बदल गई वोह निगाहे वोह हादसा था अख़ीर।
फिर इसके बाद कोई इनकलाब हो न सका॥

कम-से-कम फरिश्तोको चैन तो मिला दिलका।
आपकी मुहब्बतमें आदमीने क्या पाया ?

बन्दगीने हज़ार रुख़ बदले।
जो ख़ुदा था वही ख़ुदा है हनूज़[3]॥

शोरे-हस्ती[4] अभी ज़रा ठहरे।
सुन रहा हूँ ज़मीरकी[5] आवाज़॥

---

[1]मस्तक रगड़नेसे; [2]जमीनमें दफ्न; [3]अभीतक।
[4]जिन्दगीकी चिल्ल-पों, [5]आत्माकी।

सीमाब अकबराबादी

मेरी बेअख्तयारियोकी न पूछ।
न हकीकत[1] ही बसमे है न मजाज[2]॥

दफअतन[3] साजे-दो आलम[4] बेसदा[5] हो जायेगा
कहते-कहते रुक गये जिस दिन तेरा अफसाना हम ॥

तू इन्तजारमे अपने यह मेरा हाल तो देख।
कि अपनी हद्देनजर तक तडप रहा हूँ मैं॥
जलाले-मशरबेमन्सूर,[6] ऐ मुआजल्ला।
किसीने फिर न कहा आजतक खुदा हूँ मैं॥

मामूरये-फनाकी कोताहियाँ तो देखो।
इक मौतका भी दिन है दो दिनकी जिन्दगीमें॥

तेरे जलवोने मुझे घेर लिया है ऐ दोस्त!
अब तो तनहाईके लमहे भी हसी होते हैं॥

तुमने तो अपने हुस्नको महफूज कर लिया।
हम किसके साथ उम्रे-मुहब्बत बसर करें?

उस मरकजे-जमालपर[7] अब है मेरी निगाह।
जलवे भी देख लें तो तवाफे-नजर[8] करें॥

हिजाब अपनी नजरसे तो हम उठा न सके।
उन्हीके हुस्नसे परदे उठाये जाते है॥

कोई तो सुर्खिये-अफसाना यादगार रहे।
हम अपना खून कफसमें लगाये जाते हैं॥

---

[1]पारलौकिक, [2]इहलौकिक, [3]एकाएक, [4]इस लोक और परलोकका वाद्ययत्र, [5]बेआवाज; [6]मन्सूरके उस कार्यका गौरव तो देखिये कि फिर किसीको उसके बाद अपनेको खुदा कहनेका साहस नही हुआ; [7]सौन्दर्य्य-केन्द्रपर, [8]दृष्टिकी प्रदक्षिणा दे।

हैं कोई और शय इन्सानियत मेरे तखैय्युलमें।
खयालोंमे कभी तसवीरे-इन्साँ देख लेता हूँ ॥

यह दुनिया अगर मेरे काबिल नही है।
तेरे पास या रब ! जहाँ और भी है ?

हकीर हूँ, मगर इतना हकीर भी न समझ।
मैं ज़र्रा भी तो नही हूँ, जो आफताब नही ॥

आ और आखिरी निगहेयास[1] देख जा।
शायद फिर इसके बाद अयादत[2] रवा[3] न हो ॥

जवानी और मर्गेइश्क[4]! यह है रक्सका[5] मौक़ा।
ग़ज़लख्वाँ हो मेरे मातममे कोई नौहाख्वा[6] क्यो हो ॥

तुझे न देख सकूँ मैं तो कुछ मलाल नही।
यही बहुत है कि तू मुझको देख सकता है ॥

ले लिया क्यो आपने इल्जाम मेरी मौतका
इस तबाहीमें अभी गुंजाइशे-तकदीर थी ॥

इशारोसे, निगाहोसे बहुत कुछ मना करता हूँ।
क़फस ही पर झुकी पडती है, शाखे-आशियाँ फिर भी ॥

न कली है वजहे-नजर कशी, न कँवलके फूलसे ताजगी।
फकत एक दिलकी शगुफ्तगी[7] सबबे-निशाते-बहार[8] है ॥

देना मुझे फरेबे-नवीदे-हयात[9] तुम।
जब लोग जा रहे हो जनाजा लिये हुए ॥

---

[1]निराश दृष्टि [2-3]मिजाजपुर्सीको आना सम्भव; [4]प्रेम-मरण; [5]नृत्यका; [6]रोये, [7]प्रसन्नता; [8]बहारकी खुशीका कारण, [9]जीनेकी आशाका धोका।

तू अपनी बज़्मेनाज़को देख और अज़लको देख।
आया कहाँसे तेरी तमन्ना लिये हुए॥
थी कसरते-जमालसे[1] तारीक[2] बज़्मेदहर[3]।
आना पड़ा चरागे-तमन्ना[4] लिये हुए॥

सानअ़की[5] सनअतोपर[6] सौ हुस्न क्यो न बरसे।
अपनी किसी अदाको इन्साँ बना दिया है॥

ख़ुदासे मिल गया है हुस्ने-काफिर।
ख़ुदाईपर हुकूमत हो रही है॥
अभीतक महशरे-इन्सानियतमें।
तलाशे-आदमीयत हो रही है॥

हम आप सैर हो कर आये बज़्मे-महशरकी।
अभी तो देखनेवाले हिसाव देखेंगे॥

मैं जिया भी दुनियामें और जान भी दे दी।
यह न खुल सका लेकिन, आपकी ख़ुशी क्या थी॥

ज़िन्दगी दरियाए-बेहासिल[7] है और किश्ती ख़राव।
मैं तो घबराकर दुआ करता हूँ तूफाँके लिए॥

कौन जाने आस्माँसे उनको क्या उम्मीद थी।
मरते-मरते भी जो सूये-आस्माँ देखा किये॥

दीदसे[8] उनको मतलव है, घर न सही महशर ही सही।
हम दानिस्ता देखेंगे, वोह मजबूरन आयेंगे॥

---

[1]रूपकी प्रचुरताके कारण; [2]अँधेरी, [3]ससाररूपी महफ़िल; [4]अभिलापाओंका दीपक, [5]कलाकारकी; [6]कलाओंपर; [7]असफलताओंकी वाढ; [8]देखनेसे।

न फरमाओ, "नही है आदमीमें ताबे-नज्जारा"।
सँभल जाओ अब उठती है निगाहे-नातवाँ[1] मेरी॥
मेरी हैरतपै वोह तनकीदकी[2] तकलीफ करते हैं।
जिन्हे यह भी नही मालूम नजरें हैं कहाँ मेरी॥

बता ऐ वुसअ़ते कौनो-मकाँ[3]! इसको कहाँ रक्खें ?
जरा-सा दर्द लेकर आये हैं, हम उनकी महफिलसे॥

कुछ वक्त कट गया था तेरी यादके बगैर।
हमपर तमाम उम्र वोह लमहे गराँ[4] रहे॥

यह समझिये है कोई दीवाना दुनियामें उदास।
बेसबब जब बज्मे-आलमको[5] परेशाँ देखिये॥

यह वहम हो कि हकीकत, सकूँ इसीसे है दिलको।
समझ रहा हूँ कि तू बेकरार मेरे लिए है॥

हैं कुछ सुनी हुई-सी सदायें[6] फिजामें[7] आज।
क्या मेरे हमसफीर[8] भी जिन्दाँमें[9] आ गये ?

सदाये-सूरसे[10] मैं कब्रमे न जागूँगा।
किसी सुनी हुई आवाजसे पुकार मुझे॥

मेरा कुफ्रे-मुहब्बत है फरोगे-जाद-ए-ईमाँ।
वोह शमयेदैर हूँ मैं रोशनी जिसकी हरमतक है॥

---

[1]निर्बल दृष्टि, [2]आलोचनाकी, [3]ससारके व्यापक क्षेत्र; [4]भारी; [5]ससाररूपी महफिलको, [6]आवाजें, [7]वायुमे; [8]साथी; [9]कैदमें; [10]नरसिहा बाजेसे।

जितने सितम किये थे किसीने अताबमें ।
वोह भी मिला लिये करमे-बेहिसाबमें ॥
हर चीजपर बहार, हरइक शय पै हुस्न था ।
दुनिया जवान थी मेरे अहदे-शबाबमें ॥

विसालेदोस्त और मैं, इत्तफ़ाकाते मुहब्बत हैं ।
यह है वोह चीज जो शायद न थी मेरे मुकद्दरमें ॥

तुझको दर-परदा समझकर हो रहा हूँ बेकरार ।
क्या तमाशा हो जो कोई दूसरा परदेमें हो ॥

क्यो हँसी तू ऐ अजल ! फानी अगर समझा मुझे ।
एक दिन सबको फना है क्या तुझे और क्या मुझे ॥

कितने दीवाने मुहब्बतमें मिटे हैं 'सीमाब' !
जमा की जाय जो ख़ाक उनकी तो वीराना बने ॥

अब मुझको है क़रार तो सबको करार है ।
दिल क्या ठहर गया कि जमाना ठहर गया ॥

यूँ ही हम-तुम घड़ी भरको मिला करते तो बहतर था ।
यह दोनो वक्त जैसे रोज मिलते हैं, जुदा होकर ॥

ऐ परदादार ! अब तो निकल आ कि हश्र है ।
दुनिया खडी हुई है तेरे इन्तजारमें ॥

किसी मर्देवफाका कूच है फिर अपने मस्कनसे ।
उदासी माँगने आई है दुनिया मेरे मदफनसे ॥

हमें तो यूँ भी न जलवे तेरे नजर आये ।
न था हिजाब तो आँखोमें अश्क भर आये ॥

वोह आलमे-शिकिस्तगीये-नाज़ अलअमाँ।
जब हुस्न खुद किसीके असरसे तबाह हो॥

हाय ! 'सीमाब' उसकी मजबूरी।
जिसने की हो शबाबमें तोबा॥

क़ातिलका नाम लिख दिया क्यों मेरी क़ब्रपर ?
लेते हैं राहगीर भी बोसे मज़ारके॥

अब हम आपकी १९३६ से १९४२ तककी कही हुई गज़लोके द्वितीय दीवान 'सदरुल मिन्तहा'से अशआर चुनकर पेशकर रहे हैं। अशआरसे पहले सन् दे दिया गया है ताकि गज़लोके कहनेके समयका पता चल सके।

१९३६ ई०—

जो ज़ौक़े-इश्क़[1] दुनियामे न हिम्मत आज़मा होता।
यह सारा कारवाँ-ज़िन्दगी[2] ग़ाफ़िल पड़ा होता॥
ख़मोशीपर मेरी, दुनियामें शोरिश है क़यामतकी।
ख़ुदा-ना-ख़्वास्ता लब खुल गये होते तो क्या होता ?
शुआरे-हुस्न पाबन्दी, मिज़ाजे-इश्क़ आज़ादी।
जो ख़ुद अपना ही बन्दा है, वोह क्या मेरा ख़ुदा होता ?
ख़ुदाने ख़ैर की, थी राहेइश्क़ ऐसी ही पेचीदा।
कि मेरे साथ मेरा रहनुमा भी खो गया होता॥
उड़ा दी मैंने आख़िर धज्जियाँ दामाने-हस्तीकी।
गरेबाँ ही के दो तारोसे क्या ज़ोर-आज़मा होता ?
कहाँ यह दहरे[3]-कुहना[4] और कहाँ ज़ौक़े-जवाँ मेरा।
कोई दुनिया नई होती, कोई आलम नया होता॥

---

[1]प्रेमका शौक़; [2]जीवनरूपी यात्रीदल; [3]संसार; [4]पुराना।

किया इक सजदा मैंने हुस्नको तो हो गया काफिर।
अगर सर काटकर कदमोपै रख देता तो क्या होता ?

फिजा पैदा नही करती, कही दीवाना बरसोंसे।
नही उठता कोई पैगम्बरे-वीराना बरसोंसे ॥

रहेगा मुब्तलाये-कश-म-कश इन्साँ यहाँ कबतक ?
यह मुश्तेखाकपर जगे-जमीनो-आसमाँ कबतक ?
यह आवाजेदरा,[१] बाँगेजरस,[२] मुहमिल-से[३] नग्मे है।
चलेगा इन इशारोके सहारे कारवाँ[४] कबतक ?
मैं अपना राज़ खुद कहकर न क्यो खामोश हो जाऊँ ?
बदल जाती है दुनिया, ऐतबारे-राज़दाँ कबतक ?
ब-क़दरे[५]-यक-नफसगम[६] माँग ले और मुतमइन[७] हो जा।
भिखारी ! यह मनाजाते-निशाते-जाविदाँ[८] कबतक ?

जलवोकी तो आदत है, महबूबे-नजर रहना।
कुछ तुझमें भी जुरअत है ऐ चश्मे-तमाशाई !

तेरे ही लिए शायद है मेरी नमाजें भी।
जब मैंने किया सजदा काफिर तेरी याद आई ॥

चलते हुए दो काबा, फिरते हुए दो मन्दिर।
चमकी तेरे कदमोपर तकदीरे-जबीसाई ॥

परिस्तारे-मुहब्बतकी मुहब्बत ही शरीअत है।
किसीको याद करके आह कर लेना इबादत है ॥

---

[१]-[२]घटीकी आवाज, [३]निरर्थक-से, [४]यात्रीदल, [५]किसी कदर; [६]जीभरका गम, [७]शान्त, सन्तोषी, [८]स्थाई भोगविलासके लिए कबतक गिडगिडाता रहेगा ?

जहाँ दिल है, वहाँ वोह है, जहाँ वोह है, वहाँ सब कुछ ।
मगर पहले मुकामे-दिल समझनेकी ज़रूरत है ॥
बहुत मुश्किल है कैदे-ज़िन्दगीमे मुतमईन होना ।
चमन भी इक मुसीबत था, कफस भी इक मुसीबत है ॥
मेरी दीवानगीपर होशवाले बहस फर्मायें ।
मगर पहले उन्हें दीवाना बननेकी ज़रूरत है ॥
शगुफ़्ते-दिलकी मुहलत उम्रभर मुझको न दी ग़मने
कलीको रातभरमे फूल बन जानेकी फुर्सत है

है चाके-गरेबाँके तेवरमे शिकन अबतक ।
कल आलमे-वहशतमे किसने मुझे छेड़ा था ?

जब कोई तामीर बेतख़रीव[1] हो सकती नही ।
ख़ुद मुझे अपने लिए बरबाद होना चाहिए ॥

यह हजूमेग़म है, महदूदे-हद्दे-जिन्दगी ।
आदमी आया है तनहा और तनहा जायगा ॥

सगेदर सरपै है, दरपर नहीं अब सर मेरा ।
अहले-काबा मेरे सजदोका सलीका देखें ॥

हमनशीं[2] ! क्या मैं तुझे दावते मयनोशी दूँ ?
अश्क-ही-अश्क भरे है मेरे पैमानेमें ॥

मुकाम इक इन्तहाये-इश्कमें ऐसा भी आता है ।
ज़मानेकी नज़र अपनी नज़र मालूम होती है ॥
कोई उलफतका दीवाना, कोई मतलबका दीवाना ।
यह दुनिया सिर्फ दीवानोंका घर मालूम होती है ॥

---

[1]बरबादीके बिना, [2]पड़ोसी ।

जो मुमकिन हो, जगह दिलमे न दे दर्दे-मुहब्बतको ।
घड़ी भरकी खलिश फिर उम्रभर मालूम होती है ॥

जबाँबन्दीसे खुश हो, खुश रहो, लेकिन यह सुन रक्खो ।
खमोशी भी मेरी अफसाना बन जायेगी महफिलमे ॥

दिल और तूफानेग़म, घब्राके मै तो मर चुका होता ।
मगर इक यह सहारा है कि तुम मौजूद हो दिलमें ॥
न जाने मौज क्या आई कि जब दरियासे मै निकला ।
तो दरिया भी सिमटकर आ गया आगोशे-साहिलमें[1] ॥

लफ्जोके परिस्तार खबर ही तुझे क्या है ?
जब दिलसे लगी हो तो खमोशी भी दुआ है ॥
दीवानेको तहकीरसे क्यो देख रहा है ।
दीवाना मुहब्बतकी खुदाईका खुदा है ॥

जो कुछ है वोह, है अपनी ही रफ्तारे-अमलसे ।
बुत है जो बुलाऊँ, जो खुद आये तो खुदा है ॥

यूँ उठा करती है सावनकी घटा ।
जैसे उठती हो जवानी झूमके ॥
जिस जगहसे ले चला था राहबर[2] ।
हम वही फिर आ गये है घूमके ॥
आ गया 'सीमाव' जाने क्या खयाल ?
ताकमे रख दी सुराही चूमके ॥

१९३७ ई०—

खराव होती न यूँ खाके-शमा-ओ-परवाना ।
नही कुछ और तो इनसान ही बना करते ॥

---

[1]किनारेकी गोदमे, [2]पथ-प्रदर्शक ।

मिज़ाजे-इश्क़में होता अगर सलीक़येनाज़।
तो आज इसके क़दमपर भी सर झुका करते ॥
यह क्या किया कि चले आये मुद्दआ बनकर।
हम आज़ हौसलये-तर्के-मुद्दआ करते ॥
कोई यह शिकवा-सरायाने-जौरसे[1] पूछे।
वफ़ा भी हुस्न ही करता तो आप क्या करते ?
ग़ज़ल ही कह ली सुनानेको हश्रमें 'सीमाब' !
पड़े-पड़े यूँ ही तनहा लहदमें[2] क्या करते ?

मनशाये-इलाहीपै यकी आ ही चला है।
ऐ चारागरो[3]! ज़हमते-दरमाँ[4] कोई दिन और ॥

अपना सजदा खुद गराँ महसूस होता है मुझे।
जैसे पाये-नाज़पर इक बोझ-सा रखता हूँ मैं ॥

ख़ुदा और नाख़ुदा मिलकर डुबो दें यह तो मुमकिन है।
मेरी वजहे-तबाही सिर्फ़ तूफ़ाँ हो नहीं सकता ॥
दुआ जाइज़, ख़ुदा बरहक़, मगर माँगूँ तो क्या माँगूँ ?
समझता हूँ कि मैं, दुनिया बदामाँ हो नहीं सकता ॥

ज़मीनो-आसमाँसे तंग है तो छोड़ दे उनको।
मगर पहले नये पैदा ज़मीनो-आस्माँ कर ले ॥

गुनाहोंपर वही इन्सानको मजबूर करती है।
जो इक बेनाम-सी फ़ानी-सी लज़्ज़त है गुनाहोंमें ॥

---

[1]अत्याचारोंकी शिकायत करनेवालोंसे, [2]क़ब्रमें, [3]चिकित्सको; [4]इलाजकी तकलीफ़।

न जाने कौन है गुमराह, कौन आगाहे-मज़िल है ।
हज़ारो कारवाँ है ज़िन्दगीकी शाहराहोमें ॥
रहे-मज़िलमें सब गुम है, मगर अफसोस तो ये है ।
अमीरे-कारवाँ भी है, उन्ही गुमकरदा राहोमें ॥

१९३८ ई०—

क़फसमें खीच ले जाये मुकद्दर या नशेमनमें ।
हमें परवाज़से मतलब है, चलती हो हवा कोई ॥
वफा करके मैं यूँ बैठा हूँ फैलाये हुए दामन ।
कि जैसे बाँटता फिरता है इनआमे-वफा कोई ॥

मैं सुपुर्द-खुदफरामोशी हूँ तू महवे-खुदी ।
तेरी हुशयारीसे अच्छा है मेरा दीवानापन ॥
ग़ाफिलोपर गर न हो फितरतको मुर्दोका यकी ।
रातको दुनियापै डाला जाय क्यो काला कफन ?
फ़र्शसे ता-अर्श मुमकिन है तरक़्की-ओ-उरूज ।
फिर फरिश्ता भी बना लेंगे तुझे, इन्सॉ तो बन ॥

कुछ मुहब्बत ही से है ज़िद सबको ।
वरना दुनियामें क्या नही होता ॥

१९३९ ई०—

अपने ही हाथसे दे-दे जो तुझे देना है ।
मेरी तशहीर न फ़रमा[1] मुझे साइल[2] न बना ॥

खुदासे हश्रमें काफिर ! तेरी फ़रियाद क्या करते ?
अकीदत उम्रभरकी दफअतन बरबाद क्या करते ?

---

[1]मेरा ढिंडोरा न पीट, [2]भिक्षुक ।

कफ़स क्या, हमने बुनियादे-क़फ़सको भी हिला डाला।
तकल्लुफ़ बराबिनाये-फितरते-आज़ाद क्या करते॥
बहुत मुहताज रहकर लुत्फ़ उठाये उम्रेफ़ानीके।
ज़रा-सी ज़िन्दगी जी खोलकर बरबाद क्या करते?
शबेगम आहे-ज़ेरेलबमें सब कुछ कह लिया उनसे।
ज़मानेको सुनानेके लिए फ़रियाद क्या करते?

मेरे उठे हुए हाथोंको कोई क्या समझे?
दुआसे हाथ उठाता हूँ, या दुआके लिए॥

कुछ हाथ उठाके माँग न कुछ हाथ उठाके देख।
फिर अख़्तियार ख़ातिरे-बेमुद्दआके देख॥

तग़ाफ़ुल[1]-इल्तफातमें[2] रहने दे इम्तयाज़[3]।
यूँ मुसकरा न देखके, हाँ मुसकराके देख॥

तू हुस्नकी नज़रको समझता है बेपनाह।
अपनी निगाहको भी कभी आज़माके देख॥
परदे तमाम उठाके न मायूसे-जलवा हो।
उठ और अपने दिलकी भी चिलमन[4] उठाके देख॥

आशियाँमें न कोई ज़हमत न कफ़समें तकलीफ़।
सब बराबर हैं तबीयत अगर आज़ाद रहे॥

१९४० ई०—

गाफ़िल कुछ और कर दिया शमयेमज़ारने।
आया था मैं तो नशये-हस्ती उतारने॥

[1-2]हँसी उड़ाने और महरबानीमें, [3]अन्तर। [4]चिक, परदा।

हँसता है क्या बुझी हुई शमये-हयातपर।
देखी है सुबह भी तो मेरी लालाजारने॥

उजड़ा और ऐसी शानसे उजडा मेरा चमन।
यह भी पता नही कि बनाया था घर कहाँ ?

निजामे[1]-सुबहोशामे-दहर[2] है जिसके इशारोपर।
मेरी गफलत तो देखो मै उसे गाफिल समझता हूँ॥

कहाँकी बज्मे-आलम ? यह तो मेरी तंगफहमी है।
कि मै इक चलती-फिरती छाँवको महफ़िल समझता हूँ॥

मुहब्बतमे नियाज[3] और हुस्न महवेनाज[4] क्या मानी ?
मै इस दस्तूरको तरमीमके[5] काबिल समझता हूँ॥

बेकफन ही दफ्न कर दी जायें दीवानोकी नाश।
धज्जियाँ तो है अभी महफूज वीरानोके पास॥

अब क्या छुपा सकेगी उरयानियाँ-हविसकी[6] ?
काँधोसे पिंडलियोतक लटकी हुई कबायें[7]॥
वक्ते-विदाये-गुलशन नजदीक आ रहा है।
अब आशियाँ उजाड़ें या आशियाँ बनायें॥

उनकी खुशीपै जान दूँ, मेरी खुशी-खुशी नही।
जैसे वही तो है खुदा, मै कोई चीज ही नही॥
उनको पसन्द है नियाज, तर्के-नियाज क्या करूँ ?
कोशिशे-बन्दगी ने हूँ, आदते-बन्दगी नही॥

---

[1]-[2]ससारकी सुबह शामकी व्यवस्था; [3]नम्रता, [4]अभिमानमे लीन, [5]परिवर्त्तनके योग्य, [6]कामुकताकी नग्नता, [7]लम्बा चोगा।

उम्मीदे-अमन क्या हो यारानें-गुलिस्ताँसे।
दीवाने खेलते हैं अपने ही आशियाँसे॥
बिजली कहा किसीने, कोई शरार[1] समझा।
इक लौ निकल गई थी, दाग़ेग़मे-निहाँसे[2]॥

नाक़ूस[3] बनके मैंने चौंका दिया हरमको[4]।
पत्थर सनमकदेके[5] जागे मेरी अज़ाँसे॥

मदारे-हर अमले-नेकोबद है नीयतपर।
अगर गुनाहकी नीयत न हो गुनाह नही॥
नकाब उलट दिया मूसाने तूरपर उनका।
अगर गुनाह सलीक़ेसे हो, गुनाह नही॥

ऐसे भी हमने देखे हैं दुनियामें इनक़लाब।
पहले जहाँ कफस था, वही आशियाँ बना॥
सारे चमनको मैं तो समझता हूँ अपना घर।
तू आशियाँपरस्त है, जा, आशियाँ बना॥

वोह भी अताये-दोस्त है, यह भी उसीकी देन है।
ऐशमें क़हकहे लगा, तैशमें मुसकराये जा॥
यादपै तेरी मुन्हसिर है, यह हयाते-मुख़्तसिर।
मुझको न यादकर मगर, तू मुझे याद आये जा॥

हज़ार दर्दमन्द हूँ मगर मुझे नही जुनूँ।
शिकायत उससे क्या करूँ जिसे ख़याल भी न हो॥

---

[1]चिनगारी; [2]छुपे हुए ग़मके दागसे, [3]शंख, [4]कावेको; [5]मन्दिरोके पत्थर।

पैकरे-ख़ाकको[1] बदनाम न कर आलममें।
कि तेरा नाम इसी ख़ाकके पैकरसे चला॥

मुहब्बत ही फ़नाके बाद भी बरूयेकार आई।
न मुझको दीन रास आया, न दुनिया साज़गार आई॥
अँधेरा हो गया, दिल बुझ गया, सूनी हुई दुनिया।
बड़ी वीरानियोंके बाद शामे-इन्तज़ार आई॥
न आई पायेइस्तग़नामें[2] इक हल्की-सी लग़ज़िश भी।
मेरे रस्तेमें ठोकर बनके, दुनिया बार-बार आई॥

क्या जाने यह रहगीर[3] है, रहबर[4] है कि रहज़न[5]?
हम भीड़ सरेराहगुज़र देख रहे हैं॥
पहले तो नशेमनकी तबाहीपै नज़र थी।
अब हौसलये-बर्क़ो-शरर-देख रहे हैं॥
पूछो मेरी परवाज़का अन्दाज़ उन्हींसे।
यह लोग जो टूटे हुए पर देख रहे हैं॥

जवानी ख़्वाबकी-सी बात है दुनियाये-फ़ानीमें।
मगर यह बात किसको याद रहती है जवानीमें॥

१९४२ ई०—

मैं हूँ कलीमेहिन्द, हिमालय है मेरा तूर।
है इन्तज़ारे-दावते-जलवागरी मुझे॥

मैं ऐ 'सीमाब'! सूरज बनके चमका हूँ अँधेरोंमें।
न होनेसे मेरे महसूस दुनियामें कमी होगी॥

---

[1]मिट्टीके पुतलेको, [2]सन्तोष और सब्रके पाँवोंमें, [3]यात्री, [4]मार्गदर्शक, [5]लुटेरे।

देकर खुदी बना दिया इन्सानको खुदा।
फितरत खुद अपने दिलमे पशेमाँ है आजकल ।।

जब तवज्जह तेरी नही होती।
जिन्दगी-जिन्दगी नही होती ।।
पहरो रहती थी गुफ़्तगू जिनसे।
उनसे अब बात भी नही होती ।।
उनकी तसवीरमें है क्या 'सीमाब'!
कि नजर सैर ही नही होती ।।

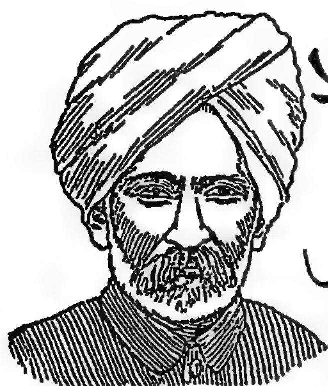
ख़ामोश हूँ मुद्दतसे नाले हैं न आहे हैं।
मेरी ही तरफ़ फिर भी दुनियाकी निगाहे हैं ।।
'सीमाब' गुजरगाहे-उल्फत को भी देख आये।
बिगड़े हुए रस्ते है, उलझी हुई राहें हैं ।।

मुझे गमसे कितनी ही अफसुर्दगी हो।
तेरे सामने मुसकराना पड़ेगा ।।

गुम कर दिया इन्साँको यहाँ लाके किसीने।
समझे ही नही शोव्दे दुनियाके किसीने ।।
जब जोशे-तमन्नाको न रुकते हुए देखा।
आगोश मे ले ही लिया घबराके किसीने ।।

इश्क़ है सहल, मगर हम है वोह दुश्वार-पसन्द।
कारे-आसाँको भी दुशवार बना लेते हैं ।।
वोह खुद भी समझते नहीं मुझको सायल।
कुछ इस शानसे गोद फैला रहा हूँ ।।

२० जून १९५२ ई०]



'जोश' मलसियानी

[१८८२—.....ई०]

उर्दू पुस्तके खरीदते हुए 'बादये-सर-जोश'को मैने शायरे-इन्कलाब हजरते 'जोश' मलीहाबादीकी नवीन रचना समझकर उठाया, तो उसमें रचयिताका नाम प० लभ्भूराम 'जोश' मलसियानी पढकर हैरत-सी हुई। या अल्लाह ! कोई नकली 'जोश' भी पैदा कर दिया तूने ? खीझकर वरक पलटता हूँ तो जिस कलामपर भी नजर पडी, पडी रह गई। अब ये आलम है कि पुस्तक-विक्रेता पुस्तकोका ढेर लगाये जा रहा है और मैं हूँ कि 'बादये-सर-जोश'से सरशार हूँ।

माशा अल्लाह ! नाम भी अजीब दकियानूसी और तसवीर भी एक देहाती पंजाबी-जैसी ! दिलको यक़ीन न हुआ कि श्रीमान्‌जी भी शायर हो सकते हैं। हिन्दी कवि ऐसी वेष-भूषा और नामके निकल आये तो कोई अचम्भा नही, मगर जिस उर्दू-अदबके तकल्लुफ, सलीके, तौर-तरीके, नफासत-लताफत ही रूहेरवाँ (प्राण) हो, उसका दिलदादा भी ऐसी पुरानी वजअ-क़तअका हो सकता है, कुछ समझमे न आया ! मगर हाथकगनको आरसी क्या ? पूरी किताब पढे बगैर जी न माना।

'जोश' साहब कस्बा मलसियाँ, ज़िला जालन्धरके रहनेवाले हैं। आप १ फरवरी १८८२ ई०मे उत्पन्न हुए। १४ वर्षकी आयुमे ही आपके

सरसे पिताका साया उठ गया। घरेलू-स्थिति ऐसी न थी कि अंग्रेज़ी-जैसी खर्चीली शिक्षा जारी रखते। फिर भी आपने मुशीफाजिल और अदीब-फाज़िल दो परीक्षाएँ पास की और एक हाई स्कूलमे फारसीके शिक्षक हुए। देहातका जीवन और पारिवारिक वातावरण शायरीके अनुकूल नही था। फिर भी प्रकृतिका खेल देखिए कि आपको शायरीका चसका ऐसा लगा कि आज उस्तादोमे आपका शुमार है। वचपनसे ही ज़हीन थे। सहपाठी नही चाहते थे कि क्लासमे आप अव्वल रहे। उन्होने शायरी-का चस्का इस नीयतसे लगाया कि हजरत कहीके न रहेगे। मगर आपने शिक्षा भी आवश्यकतानुसार प्राप्त की और फन्ने-शायरीमे भी कमाल हासिल किया।

चमकीली आँखे, चौडी पेशानी, खसखसी सफेद दाढी, वेसँवरी मूँछ, वन्द गलेके कोटमे मलबूस सरपर देहाती पजाबी पगडी लगाये जो सजीदगीसे वैठे है, वही है हज़रते 'जोश' मलसियानी।

वर्त्तमानमे जो अच्छे नज्म-निगार है, उन्होने पहले गज़लकी मश्क की, बादमे नज्म लिखना शुरू किया। मगर जोश साहबने शुरू-शुरूमे नज्में लिखी, बादमें गज़लगोईकी तरफ माईल हो गये। १९०२मे नवाव-मिर्ज़ा दागके शिष्यत्वका गौरव प्राप्त किया, किन्तु १९०६मे दागके परलोक सिधारनेके बाद स्वय धीरे-धीरे कलामकी मश्क इस खूवीसे की, कि आज वे स्वय एक अच्छे उस्ताद है।

'जोश' साहवका १९४०मे प्रकाशित सकलन 'वादये-सर-जोश' हमारे सामने है। भूमिका जोशके गुरु-भाई हजरत 'नूह' नारवीने लिखी है। सकलनमें २३ नज्मे, ८५ गज़ले, ८ रुवाइयाँ और चन्द मनोरजक शेर है। 'जोश' साहव छन्द और व्याकरणके नियमोका इतना ध्यान रखते है कि सकलनके प्रारम्भमें ४२ ऐसी वातोकी सूची दे दी है, जिनसे आपने अपने कलामको अछूता रखा है। इस सूचीसे अनेक उपयोगी सूचनाएँ प्राप्त होती है।

'असद' मुलतानीके शब्दोमे—"जोशके यहाँ कोई खास निजामे-फिक्र (व्यवस्थित विचार-धारा) या पैगामे-हयात (जीवन-सदेश) नही। वे न शायरे-इन्कलाब (युग परिवर्त्तनकारी) है, न शायरे-तखरीब (विध्वस-कारी)। बस शायर है, सिर्फ शायर। पहलूमे एक हिसास दिल (भावुक हृदय) रखते है, और मुँहमे एक सुलझी हुई जबान। जिस बातसे मुतास्सिर (प्रभावित) होते है, सीधे-साधे अल्फाज और दिलनशी अन्दाजसे शेरमे ढाल देते है। उन्होने अपने लिए कोई नया असलूबे-सुखन (नवीन ढग) नही निकाला। लेकिन यही जौके-शेरी (कविता-अभिरुचि)के साथ जबानके गहरे मतायले (गम्भीर अध्ययन) और उसूलेफन (छन्द-शास्त्र) की पूरी पाबन्दीसे उन्होने रस्मी शायरीके अन्दर अपने लिए एक इनफरादी रग (पृथक् ढग) पैदा कर लिया है। उनके यहाँ अल्फाजकी जाहिरी शानो-शौकत, बयानकी मसनूई (बनावटी) रगीनी और मजामीनकी पेचीदगी मुतलक (लेशमात्र) नही पाई जाती। बल्कि खयालकी लता-फत और जबानकी सलासत (भाषाका प्रवाह) उनकी शायरीकी नुमायाँ खसूसियत है।"[1]

प्रारम्भमे 'जोश' साहबकी २३ नज्मोमेसे दो नज्मोके चन्द शेर बतौर नमूना मुलाहिजा फरमाये—

---

[1]आजकल, उर्दू, १५ मार्च १९४५ ई०, पृ० ५।

गरीबोंकी दुनिया

.. ..

गरीबोके घरमे मसर्रत[1] भी ग़म है,
गरीबोंके दिलमे ख़ुशी भी अलम[2] है।
गरीबोकी गर्दन है, तेगे-सितम[3] है:
गरीबोंकी हस्ती[4] अदम[5] है, अदम है।
गरीबोकी दुनियामें राहत[6] न ढूँढ़ो ।।

.. . .

ख़ता हो किसीकी ख़तावार[7] ये है,
कुसूर औरका हो, गुनहगार[8] ये है।
शफ़ा[9] जिनसे भागे, वे बीमार ये है,
नही जिसका चारा[10], वे लाचार ये है।
गरीबोकी दुनियामें राहत न ढूँढ़ो ।।

. . ..

वतन

तमाशा देखनेको आग ख़ुद घरमें लगा ली है।
मेरे अहले-वतनकी दीपमाला क्या निराली है!

'वादये सरजोश' मे 'जोश' साहबकी २३ अत्यन्त सफल नज्में हैं, किन्तु उनका कवित्व पूर्णरूपसे गजलोमे ही चमक पाया है। अत उनकी ८५ गजलोमेसे ७६ अशआर चुनकर दिये जा रहे है—

---

[1]प्रसन्नता, ख़ुशी; [2]रज; [3]अत्याचारकी तलवार, [4]अस्तित्व; [5]मनहूस, [6]सुख-चेन; [7]अपराधी, [8]पापी, मुजरिम, [9]आरोग्यता, [10]उपाय।

ना-शगुफ़्ता[1] ही रही दिलकी कली।
मौसमे-गुल[2] बार-हा[3] आता रहा॥
जौर[4] तो ऐ 'जोश'! आख़िर जौर थे।
लुत्फ़[5] भी उनका सितम ढाता रहा॥

अल्लाह! अल्लाह!! मंजरेबर्के-जमाल[6]।
देखती है आँख, लब ख़ामोश है॥

आबे-कौसर[7] 'जोश' हो जिसपर फ़िदा[8]।
वह मेरा अश्के-नदामत[9] कोश है॥

जीते जी मै किस तरह आज़ाद हूँ।
आप अपनी कैदकी मीयाद हूँ॥
बूए-गुल[10] बनकर हुआ क्या फायदा?
हाय! अब भी खानुमाँ[11] बरबाद हूँ॥
और भी इस शर्मने मारा मुझे।
आपका बन्दा हूँ, फिर नाशाद[12] हूँ॥*

सोज़े-गममें[13] दीदयेतर[14] काम आ सकता नही।
यह वह आतिश[15] है, जिसे पानी बुझा सकता नही॥

---

[1]अनखिली, [2]बहार, [3]सदैव, वार-बार, [4]अत्याचार, [5]कृपा, आनन्द; [6]सौन्दर्यरूपी बिजलीका दृश्य; [7]वहिश्तमे वहनेवाली शराबकी नहरका मद्य, [8]न्योछावर, [9]प्रायश्चितरूपी आँसू [10]फूलकी सुगन्ध, [11]बे-घरबार, [12]पीडित, बेचैन, [13]रजो-मुसीबतकी आगमे, [14]आँसू भरे नेत्र, [15]आग।

*जिन्दगी अपनी जब इस शक्लसे गुजरी या रब!
हम भी क्या याद रखेंगे कि खुदा रखते थे॥
—ग़ालिब

मंज़रे-तस्वीर[1] दर्दे-दिल मिटा सकता नही।
आइना पानी तो रखता है, पिला सकता नही॥
मेरी रुसवाईका[2] आलम[3] दावरे-महशर[4] न पूछ।
मै भरी महफ़िलमें यह क़िस्सा सुना सकता नही॥

इक मै कि इन्तज़ारमें[5] घड़ियाँ गिना करूँ।
इक तुम कि मुझसे आँख बचाकर चले गये॥

दाद[6] देता हूँ तुझे या रब[7]! मै इस तख़सीसकी[8]।
मेहरबाँ सबके लिए, नामेहरबाँ मेरे लिए॥
मौसमे-गुल[9] ही पै थी, मौकूफ फ़िक्रे-आशियाँ[10]।
अब तो हर उजडा चमन है आशियाँ मेरे लिए॥

इतना गुमराह न कर नासिहेनादाँ[11]! मुझको।
बढ़के ईमाँसे है वह दुश्मने-ईमाँ[12] मुझको॥
घर बयाबाँमें[13] बनाया तो यह रुतबा पाया।
सरपै देते है जगह ख़ारे-मुग़ीलाँ[14] मुझको॥
आज वे शाने-करीमी[15] है दिखानेवाले।
कहीं रुसवा[16] न करे तंगिये-दामाँ[17] मुझको॥
उसके चक्करमें दुबारा तो मै आनेका नहीं।
ढूँढती फिरती है क्यो गर्दिशे-दौराँ[18] मुझको॥

---

[1]चित्र-अवलोकन, [2]बदनामीका, [3]कारण, [4]स्वर्गके न्यायाधीश; [5]प्रतीक्षामे, [6]अभिनन्दन करता हूँ; [7]हे ईश्वर! [8]विशेषताकी; [9]फूलोकी बहार, [10]घोसला बनानेकी चिन्ता, [11]मूर्ख उपदेशक; [12]ईमानका दुश्मन, प्रेयसी; [13]उजाड जगलमे, [14]कीकरके काँटे, [15]ईश्वरीय कृपालुताका रूप; [16]बदनाम, [17]मेरा ओछा दामन, (कही उनके दानके लिए मेरा वस्त्र ही छोटा न पड जाये); [18]सासारिक आपत्तियाँ।

हश्रमें[1] था नामये-ऐमाल[2] सबके हाथमें।
मेरे हाथोमें मेरा टूटा हुआ पैमाना था॥

छीन ली क्यों आपने मुझसे मताए-सब्रो-होश[3]?
क्या सजाए-कंदे-गमके साथ कुछ जुर्माना था?

सितमको[4] भी करम[5] समझा, जफ़ाको[6] भी वफ़ा[7] समझा
मगर उसपर भी उनकी चीने-पेशानी[8] नहीं जाती॥
वही रिन्दी[9] है जिसके साथ शाने-पारसाई[10] है।
वह मय क्या दामने-तक़वामें[11] जो छानी नहीं जाती॥

ऐ दिलेमर्ग-आश्ना[12]! ख़तका जवाब सुन लिया!
और तू बेकरार हो, और तू इन्तज़ार कर!!

कहूँ शरहे-जुनूँ[13] क्योंकर ख़िरदमन्दोंकी[14] महफ़िलमें।
यह वोह नुक़्ते हैं जिनको अहले-दानिश[15] कम समझते हैं॥
शबे-तारीके-गममें[16] जिन्दगीका है यक़ीं किसको?
सफ़े-अंजुमको[17] हम अपनी सफ़े-मातम[18] समझते हैं॥
हमारे इश्कने मफ़हूम[19] लफ़्ज़ोंका बदल डाला।
कि जो दमपर बना दे हम उसे हमदम[20] समझते हैं॥
हुए जो ख़ूगरेग़म,[21] ऐशका उनपर असर क्या हो?
ख़ुशीको वोह ख़ुशी समझें जो गमको ग़म समझते हैं॥

---

[1]स्वर्गमे न्यायके दिन, [2]करनीका लेखा; [3]सब्र और होशकी दौलत, [4]अत्याचारोको, [5]मेहरबानी, [6]जुल्मोंको; [7]नेकी; [8]माथेकी त्यौरी, [9]शराबीपन, [10]सदाचारकी आन, [11]ईश्वरीय भय, सयमरूपी वस्त्रमें, [12]प्रेयसीपर मिटा हुआ हृदय; [13]उन्मादका भाष्य, [14]अक्लमन्दोंकी; [15]चतुर, समझदार, [16]आपदाकी अँधेरी रातमे; [17]सितारो के समूहको; [18]शोक-सभा; [19]तात्पर्य, [20]जीवन-साथी; [21]आपत्तियोंसे परिचित।

निगहे-नाज़पै[1] क़ुर्बान[2] है ख़लकत[3] कैसी !
हर जगह होती है इस चोरकी इज्जत कैसी !
मुझपै दुनियामें रही रोज कयामत[4] बरपा[5] ।
और ऐ दावरे-महशर[6] ! यह कयामत कैसी !
जान देकर भी रसाईकी[7] नही है उम्मीद ।
हाय ! दुशवार है यह मंज़िले-उलफत कैसी !

इश्क़ने हमको ज़ियारत-गाहे-आलम[8] कर दिया ।
गर्दे-गमसे हो गया तामीर काबा एक और ॥
वहरे-गमकी[9] गोद ख़ाली हमने देखी ही नही ।
एक अगर मँझधारसे निकला, तो डूबा एक और ॥

यह तेरी किस्मतने काँटे बो दिये, ऐ अन्दलीब[10]!
बेतरह उलझा हुआ है तेरा दामन फूलमें ॥
इनमे जो अच्छा है चुन ले, ऐ निगाहे-इन्तख़ाब[11] !
एक गुलशन ख़ारमें है, एक गुलशन फूलमें ॥
ऐ ख़िज़ा[12]! अब ख़ारोख़समे[13] भी जगह पाता नही ।
आह ! वोह तायर[14] कि था जिसका नशेमन[15] फूलमें ॥

हयाते-जाविदाँ[16] आई है जाँबाज़ोके[17] हिस्सेमें ।
हमेशा जीनेवाले है यह जितने मरनेवाले है ॥

निकम्मा हो गया मैं इस कदर मसरूफे-गम[18] होकर ।
मेरे ऐमालके कातिब[19] भी अब बेकार बैठे है ॥

---

[1]प्रेयसोकी चितवनपर, [2]न्योछावर, [3]जनता, [4]प्रलय, [5]आती रही; [6]प्रलयके बाद न्याय करनेवाले, [7]पहुँचकी, मुलाकातकी; [8]दुनियाके लिए उपास्य, [9]रंजोके समन्दरकी, [10]बुलबुल, [11]पारखी दृष्टि; [12]पतझड़; [13]काँटोमे, [14]पक्षी, [15]घोसला, [16]अमर जीवन, [17]वीरोके । [18]विपत्तियोमे व्यस्त; [19]भाग्य-रेखा लिखनेवाले ।

खुदा जाने सबा[1] हर रोज क्या पैगाम[2] लाती है।
कि पहरों काँपते रहते है तिनके आशियानोंमे॥
बस अब दो-चार ताइर[3] जो हैं, ऐ सैय्याद ! रहने दे।
इन्हे इनकी कजा खुद ढूँढ लेगी आशियानोंमे॥

दहरमें[4] जिन्सेवफाका[5] कोई गाहक न मिला।
हमी घाटेमें रहे मोल यह झगडा लेकर॥
ऐ अजल[6] ! तेरे गिरायेसे अगर गिर भी गये।
दोशे-अहबाबका[7] उठ्ठेंगे सहारा लेकर॥

कफेअफसोस[8] ही मलता मेरी बरबादीपर।
कोई पत्ता भी तो अब शाखे-नशेमनमें[9] नही॥
इस कदर रहती है नादीदा[10] बलाओकी[11] हविस[12]।
गरदन उस तौकमें है तौक जो गरदनमें नही॥

रजे-दुनिया, खौफे-उकबा,[13] बारे-गम[14] फिक्रे-मआश[15]।
एक जाने-नातवाँपर[16] सौ अजाबे-जिन्दगी॥

उठ गये महशर-खरामीके[17] फिदाई,[18] उठ गये।
अब जरा चलना जमानेकी हवाको देखकर॥
बदगुमानीने मेरी वहशत बढा दी और भी।
और भी गुम हो गया मै रहनुमाको देखकर॥

---

[1]हवा, [2]सन्देश, [3]पक्षी, [4]दुनियामे, [5]भलाई-रूपी वस्तुका; [6]मृत्यु, [7]इष्ट-मित्रोके कन्धेका, [8]अफसोससे हाथ, [9]घोसलकी शाखमे; [10]अनदेखी, [11]मुसीबतोकी [12]तृष्णा; [13]परलोक-भय, [14]मुसीबतोका बोझ, [15]आजीविकाकी चिन्ता, [16]निर्बल प्राणोपर, [17-18]कयामत-की चालपर आसक्त।

आलमे-हैरत ही मेरी मंजिले-मकसूद थी।
नक़्शे-पा खुद बन गया हूँ नक़्शे-पाको देखकर ।।

इक फक़त मैं ही तो नाकाम न आया ज़ालिम
खाक उड़ाती तेरे कूचे से, सबा भी आई !!

मौतकी ज़दसे बच गया जो कोई।
उसको उम्रे-दराज़ने[1] मारा ।।

नक़्शे-उल्फत मिट गया तो दाग़े-उल्फत हैं बहुत।
शुक्र कर, ऐ दिल ! कि तेरे घरकी दौलत घरमें है ।।
नज़अमें[2] पेशे-नज़र है उम्र भरके वाकियात।
सारी दुनियाका मुरक़्क़ा[3] आख़िरी मंज़रमे है ।।

कामिलकी[4] जो पूछो तो नहीं खिज्र[5] भी कामिल।
जीना उसे आता है तो मरना नही आता ।।
ना-अहल[6] है वह अहले-सियासतकी[7] नज़रमें।
वादेसे कभी जिसको मुकरना नही आता ।।

यह जवानी ? यह तर्के-सुहबते-मय !
आपकी अक़्लको हुआ क्या है ?
आप बेवजह मुद्दई क्यों है ?
आपका इससे मुद्दआ क्या है ?

हुस्न और महरबानी ! इश्क और शादमानी !!
ऐसा कभी न होगा, ऐसा कभी हुआ है ?

---

[1]लम्बी उम्रने, [2]मृत्युके समयमें, [3]चित्र ; [4]सिद्धहस्तकी ; [5]भूले-भटकोंको मार्ग बतानेवाला एक फरिश्ता, [6]मूर्ख, [7]राज-नीतिज्ञोंकी दृष्टिमें ।

बिजलीने किया ख़ाक चमन जिसका जलाकर।
आँधी भी उसी सोख़्ता-सामाँके लिए है॥

ग़म जो खाता हूँ तो मुझको खाये जाता है यह ग़म—
"खाऊँगा फिर क्या मैं दुनिया भरका गम खानेके बाद ?"

माहे-नौपर[1] भी उठी हैं हर तरफसे उँगलियाँ।
जो कोई दुनियामें आया उसकी रुसवाई हुई॥

तेरे अन्दाजपर उम्रे-रवाँ कुछ शक गुजरता है।
लिये जाती है तू मुझको किधर आहिस्ता-आहिस्ता॥

नाकामे-तमन्ना[2] हूँ मैं उस अश्ककी[3] मानिन्द।
मरते हुए आशिककी जो आँखोंमें रुका हो॥

मेरे दिलकी तड़पने जान तक छोड़ी न कालिबमें।
बुझा डाला चरागे-उम्र इस पंखेने हिल-हिलकर॥*

जिन्दा-दिलीके कुछ नमूने—

अहले-मगरिबके[4] फरेबावादमें[5]।
सुलहका चर्चा पयामे-जंग है॥

दिल लेके कहते हैं कि "नविश्त इसकी दीजिये।
ऐसा न हो कि बादमें झगड़ा करे कोई॥"

---

[1]दूजके चाँदपर, [2]असफल अभिलाषी, [3]आँसूकी, [4]पश्चिमी देशोंके; [5]झूठ फरेब-रूपी देशमें,

*जो उखड़ी साँस तो बीमारेगम सँभल न सका।
हवा थी तेज, चरागे-हयात जल न सका॥

चरागे-हुस्न तेरा, और मेरा चरागे-दिल।
वह जलके बुझ न सका और यह बुझके जल न सका॥ —'नानक' लखनवी

रोजके मिलनेमे यह डर है उन्हें।
दिलबरी नौकरी न हो जाये॥

राहे-अदममे चोर ही इतना करम करे।
चुपके-से ले उडे मेरी गठरी गुनाहकी॥

हाथसे कासा[1] गदाईका[2] न छूटा एक दिन।
और मुँहसे ताजे-शाहीके है दावेदार हम॥

आइये हर नौजवाँके दोशपर।
तन्दुरुस्तीका जनाजा देखिये॥
दुश्मनोंकी दुश्मनीका जिक्र क्या ?
दोस्तोमें जौरे-बेजा देखिये॥

मुनहसिर कुव्वते-बाजूपै है दौलतमन्दी।
देख लो जोरमें मौजूद है जर दो-बटे-तीन॥
मलिक-उल्-मौतसे दुनियामें हिरासाँ नही कौन ?
जिसको कहते है निडर उसमे है डर दो-बटे-तीन॥
जालिमो ! खौफ करो आह को समझो न हकीर।
लफ़्ज-अल्लाहमें है इसका असर दो-बटे-तीन॥

'जोश' साहबको शतरजका भी अच्छा शौक है। खेलते तो खूब है ही, उस पर कभी-कभी कहते भी खूब है—

मुझ-से जाँबाजको गुरबत[3] है बिसाते-शतरंज।
जो न पलटे कभी वापिस वह पियादा मैं हूँ॥

समझते खूब थे हम शातिरे-गरदूँकी चालोको।
मगर नक्शा पड़ा ऐसा कि बाजी हार बैठे हैं॥

---

[1]पात्र, बर्तन, [2]फकीरीका; [3]भ्रमण।

'जोश'! बिसाते-शौक़मे मर्ग है अस्ल ज़िन्दगी।
बाज़िये-इश्क जीत ले बाज़िए-उम्र हारकर॥

जोश साहबका उक्त परिचय एव कलाम हमने ११ मई १९४९को पूर्ण किया था। जो मार्च १९५२की कल्पनामे प्रकाशित हुआ था। इसके बाद हमारी प्रार्थनाको मान देकर स्वय जोश साहबने ९ जून १९५२को अपने दस्तेमुबारकसे ताजा कलाम इनायत फर्माया। जिसे हम तबर्रुकन यहाँ दे रहे है—

ऐ शेख अगर खुल्दकी[1] तारीफ यही है।
मै इसका तलबगार[2] कभी हो नही सकता॥
ऐमालकी[3] पुरसिश[4] न कर ऐ दावरे-महशर[5]!
मजबूर तो मुख्तार कभी हो नही सकता॥
मुमकिन है फरिश्तोसे कोई सहव[6] हुआ हो।
मै इतना गुनहगार कभी हो नही सकता॥

ना-करदा गुनाहोंमे[7] गिरफ़्तार हुआ हूँ।
अब देखिये इस जुर्मकी मिलती है सज़ा क्या?
महफिलसे निकालो हमें कुछ सोच-समझकर।
जब हम न रहे आपकी महफिलमे रहा क्या?
यह हर्फे-तसल्ली भी सितमसे नही ख़ाली।
कहते है—"सितम कोई हुआ भी तो हुआ क्या?"
क्या दाद मुझे गिरयए-पैहमकी[8] मिली है।
कहते है कि—"आता है तुम्हे इसके सिवा क्या?"

---

[1]जन्नतकी, [2]इच्छुक, [3]कृत्योकी, [4]जाँच, [5]महशरके न्यायाधीश। [6]भूल-चूक, [7]विना किये हुए पापोमे, [8]निरन्तर रोते रहनेकी।

बात रिन्दीकी मुझको आती है।
पारसाईकी पारसा जाने॥

हरमसे कुछ आगे बढे हम तो देखा।
जबींके लिए आस्ताँ और भी हैं॥
बना दी मेरे दमपर एक आस्माँने।
गज़ब है कि छःह आस्माँ और भी हैं॥

चुनेंगे एक मुझीको वोह हर सितमके लिए।
ख़ता करे नज़रे-इन्तख़ाब क्या मानी?
हदे-शुमारसे बाहर हैं जब गुनाह मेरे।
हिसाबके लिए यौमे-हिसाब क्या मानी?

नातवानी भी तेरे कूचेमें।
पाये रफ़्तार हुई जाती है॥

तेरे ग़मसे सोज़े-दिलकी[1] वोह शररफिशानियाँ[2] हैं।
कि असर भी जल गया है, मेरी गरमिये-फुग़ाँसे[3]॥
तुझे देखनेका सौदा[4] तो जहानमें है सबको।
मगर आँख देखनेकी कोई लायगा कहाँसे?

ला और भी इक जाम कि आई हैं घटायें।
ऐ साक़िए-मैख़ाना! तेरी दूर बलायें॥
पीलोगे तो ऐ शेख़! ज़रा गर्म रहोगे।
ठंडा ही न कर दें कहीं जन्नतकी हवायें॥
दो-चार जगह ख़त्तेजलीमें[5] जो लिखी हैं।
वोह दफ़्तरेइसियाँमें[6] हैं मेरी ही ख़तायें॥

---

[1]दग्धहृदयकी, [2]आगकी लपटें, [3]आहकी गरमीसे; [4]उन्माद; [5]बड़े-बड़े और आकर्षक अक्षरोंमें; [6]पाप-पुण्यके कार्यालय में।

कुमरीकी हो फरियाद कि बुलबुलका हो नग्मा ।
दोनो हैं मेरे साज़े-मुहब्बतकी सदायें ॥

उनसे हम तर्के-तग़ाफुलका तक़ाज़ा न करें ।
इसका मतलब है कि जीनेकी तमन्ना न करें ॥
वादा करके वोह अगर वादेका ईफ़ा न करे ।
उससे बहतर तो यही है कोई वादा न करें ॥
उनसे तौकीरे-मुहब्बत नहीं होती न सही ।
इतनी तहक़ीरे-मुहब्बत भी ख़ुदारा न करें ॥
यह तो है शर्ते-मुहब्बत कोई इंसाफ नहीं ।
हम तमन्ना तो करें अर्ज़-तमन्ना न करें ॥

क्यों फलसफीको गुर्रा अपने कमालपर है ।
जितना वोह बाख़बर है, उतना ही बेख़बर है ॥

ऐ शेख़ ! किस जगहको तेरा मुकाम समझें ।
तू कुछ ज़मीनपर है, कुछ आसमानपर है ॥
थोड़ा-सा और सुन लो अफसानये-मुहब्बत !
दो हिचकियोंमें अब तो क़िस्सा ही मुख़्तसर है ॥

हूरो-ग़िलमाँसे मुहब्बत मुझे मंज़ूर नहीं ।
तेरा कूचा हो तो जन्नत मुझे मंज़ूर नहीं ॥

आप क्या पूछते हैं किस्मते-खुद्दारियेदिल ?
सारी दुनियाकी भी दौलत मुझे मंज़ूर नहीं ॥
क्यों मेरे जज़्बये-मासूमको देता है फरेब !
साफ कह दे कि मुहब्बत मुझे मंज़ूर नहीं ॥
तर्के-दुनिया भी करूँ, तर्के-तमन्ना भी करूँ ।
तौबा-तौबा यह मुसीबत मुझे मंज़ूर नहीं ॥

अब इस शिकवेसे क्या हासिल कि "रहबर ख़ुदग़रज़ निकला।"
पराई आस जो तकते हैं अक्सर ख़्वार होते हैं ।।

अक़्लसे क्या पूछता आफ़तको सरपर देखकर ।
वह तो ख़ुद चकरा गई क़िस्मतका चक्कर देखकर ।।

सरगुज़श्ते-अहले-महफ़िल है बहुत नागुफ़्तनी ।
शमअ़को मालूम है सब कुछ मगर ख़ामोश है ।।

दिनको तारे तो मुक़द्दरने दिखाये मुझको ।
फिर भी आती है सदायें—"अभी देखा क्या है ?"

न दुनियामें निभी अपनी, न रास आया अदम हमको ।
कभी इस घरसे निकले हैं, कभी उस घरसे निकले हैं ।।

या रहे इसमें अपने घरकी तरह ।
या मेरे दिलमें आप घर न करें ।।

सूफ़ियाना कलाम

नज़र-नज़रमें तमाशे दिखा दिये ऐसे ।
मुझे भी एक तमाशा बना गया कोई ।।
दिखाके शोख़निगाहीका जलवये-बेताब ।
मेरी नज़रको तड़पना सिखा गया कोई ।।
नमूदेहुस्नको[1] ख़िलवतमें[2] था करार कहाँ ?
तअ़य्युनातकी[3] दुनियामें आ गया कोई ।।
दिया वोह दर्द कि थी जिसमें एक लज़्ज़ते-ख़ास ।
सितममें शाने-करम[4] भी दिखा गया कोई ।।

---

[1]रूपके जलवेको, [2]एकान्तमे; [3]आलोचकोकी, [4]दयालुताकी शान ।

यह मोजजा[1] है कि जिन्दा है अब मेरे अरमाँ।
मरे हुओंको भी जीना सिखा गया कोई॥

नकाब रुखसे उठा दी मगर कमाल यह है।
मेरी नजरका भी परदा उठा गया कोई॥

वतन (नज्म)

हर इक शमअ् है अंजुमनके लिए।
सब अहले-वतन है वतनके लिए॥

न रख पास कौड़ी कफनके लिए।
खजाने लुटा दे वतनके लिए॥

वही नब्ज है जिन्दगीका निशाँ।
तड़पती रहे जो वतनके लिए॥

वतनकी गरीबीपै नालाँ न हो।
खजाना है तू खुद वतनके लिए॥

ढलक आये हैं आँखोसे कुछ अश्केगम।
यह मोती है तोहफा वतनके लिए॥

मुसीबत है तेरा यह ख्वाबेगराँ।
न हो बारेखातिर वतनके लिए॥

इसी मौतमें है मसीहाइयाँ।
मुबारक है मरना वतनके लिए॥

अगर तेग रखते नही 'जोश' तुम।
कलम हाथमें लो वतनके लिए॥

---

[1] चमत्कार।

रुबाइयात

क्यों तर्के-मएनाब गवारा कर लूँ ?
क्यों ख़ूने-रगे-हयात ठंडा कर लूँ ?
ताइब हों अगर निजातके क़ाबिल हूँ।
बहतर है कि तौबा ही से तौबा कर लूँ ॥

दुनियाको हुनर, विकार खोकर न दिखा।
जौहर अपना ज़लील होकर न दिखा ॥
आलमको दिखा तो आबदारी अपनी।
लेकिन कभी आबरू डुबोकर न दिखा ॥

अब नाचने-गानेमें बुराई न रही।
उरयानिए-ज़न, यह जग हँसाई न रही ॥
आवारगिये तबक़ेसे नफरत तो कुजा।
ज़ाहिर कोई अंगुश्त-नुमाई न रही ॥

कुछ अपनी करामात दिखा दे साक़ी !
जो खोल दे आँख वोह पिला दे साक़ी !
हुशयारको दीवाना बनाया भी तो क्या,
दीवानेको हुशयार बना दे साक़ी !



"नातिक" गुलावठी

[१८८६ — .... ई०]

अबुलहसन 'नातिक'के पिता जहीरुद्दीनको भी शेर कहनेका शौक था। आपके पूर्वज अहमदशाह अब्दालीके साथ भारत आये थे। आप गुलावठी जि० मेरठके रहनेवाले है। व्यापारके सिलसिलेमे अर्सेसे नागपुरमे निवास करते है।

११नवम्बर १८८६ ई०को आपका जन्म हुआ। १८५७के विप्लवमे आपके बड़ोकी समस्त जायदाद लुट गई थी, साथ ही आपके एक ताया (ताऊ) विद्रोही होनेके कारण फाँसी चढा दिये गये थे।

नातिकने देववन्दके प्रसिद्ध इस्लामिया स्कूलसे अरवीकी सनद हासिल की। १६०० ई०मे आपने शायरी प्रारम्भ की और १६०४ ई०मे मिर्जा 'दाग'के शिष्य हुए। अभी ५-६ गजलोपर ही इस्लाह लेने पाये थे कि 'दाग'का इन्तकाल हो गया। फिर आपने अन्य किसीसे इस्लाह नही ली। आपके शिष्योमे अब्दुलवारी 'आसी' जैसे मशहूर शायर भी है।

मेरे सब्रने भी ग़ज़ब किया कि उदूकी जानपै बन गई।
यह कहाँकी चोट कहाँ लगी, यह कहाँका दर्द कहाँ उठा ॥

ले जा रहे हैं दोस्त मुझे, आ रहा है दोस्त।
क्या मौतको भी आज ही मरना ज़रूर था ?

जिसकी हसरत थी, उसे पा भी चुके खो भी चुके।
अब किसी चीज़का हमको नही अरमाँ होता ॥

बेखुदी आई थी उनके बाद बज़्मेनाज़मे।
फिर नही मालूम हमको, कौन आया किसके बाद ॥

ज़िन्दगीका सुबूत नालयेज़ार ?
वह भी क्या इक मरी हुई आवाज़ !

सहराये-ज़िन्दगीसे न माँगूँ तो क्या करूँ ?
आख़िर कहाँतक उसमें भटकता फिरा करूँ ॥
बाक़ी नही जहाँमें कोई माँगनेकी चीज़।
अब हाथ भी उठाऊँ तो मै क्या दुआ करूँ ॥

ग़ामेग़मको तो अभी देर है आनेके लिए।
दो घड़ी दिनसे न हम कूचका सामाँ करदें ॥

चारागर ! मस्तकी दुनिया है ज़मानेसे जुदा।
होशमें आ कि जहाँ हम है, वहाँ होश नहीं ॥

याद करनेकी तो बातें है बहुत-सी 'नातिक़' !
पहले वोह भूल तो जाऊँ जो फ़रामोश नहीं ॥

अभी हम जान देकर सोये हैं, दम लेके उट्ठेंगे।
न छेड़ ऐ शोरेमहशर! हट जरा आराम लेते हैं॥

कहते हैं जिसे वहशत, वोह बात कहाँ साहब!
क्या कहते हो? मजनूँ है देखा हुआ दीवाना॥

हाँ आग लगानेके लिए मेरे घर आये।
कासिद! वोह इसी वास्ते आये, मगर आये॥

उदूसे वादा किया, वादा करके टाल गये।
चलो वोह अब भी बहुत बातको सम्भाल गये॥
हलाल कर गये कहकर कि अब न आयेंगे।
वोह जाते-जाते तड़पते पै हाथ डाल गये॥

साथ भी छोड़ा तो कब, जब सब बुरे दिन कट गये।
जिन्दगी तूने यहाँ आकर दिया धोका मुझे॥

हिचकियोंपै हो रहा है जिन्दगीका राग खत्म।
झटके देकर तार तोड़े जा रहे हैं साजके॥

क्या इरादे हैं वहशते-दिलके?
किससे मिलना है, खाकमें मिलके?
ऐ दिले शिकवासंज! क्या गुजरी?
किस लिए होंट रह गये सिलके?

खत्म होती है कहीं मंजिले-आराम अभी।
पूछता क्या है चलाचल दिले-नाकाम अभी॥

यह मुद्दत हस्तीकी आखिर यूँ भी तो गुजर ही जायेगी।
दो दिनके लिए मैं किससे कहूँ आसान मेरी मुश्किल करदे॥

कौन आये मरनेको, वोह हमारी बस्ती है ।
जिन्दगी जहाँ आकर मौतको तरसती है ॥

गये हैं जबसे वोह, अपने भी आये गैर भी आये ।
सब आये भी गये भी, घरकी वीरानी नही जाती ॥

वोह गये, हिम्मत गई, रुखसत शकेबाई हुई ।
रफ़्ता-रफ़्ता अपनी दुनिया ही गई-आई हुई ॥

अपनी रुसवाईका गम था, जब हमें, वोह दिन गये ।
अब तो यह गम है कि ऐसी फिर न रुसवाई हुई ॥

उनका हरीमेनाज, मेरा परदये-निगाह ।
छुपते हैं इस अदासे कि देखा करे कोई ॥

मेरे गमकी उन्हें किसने खबर की ।
गई क्यो घरसे बाहर बात घरकी ?
गये थे पूछने अपना पता आज ।
हमें उसने बता दी राह घरकी ॥
बताऊँ क्या वोह दिल लेते है क्योकर ।
जरा-सी इक सफाई है नजरकी ॥

या दुनिया हमपर हँसती थी, या हम हँसते हैं दुनियापर।
जब हम रो बैठें दुनियाको तो दुनिया हमको रोती है ॥

लाता सनमकदेसे, थी क्या मजाले वाइज ?
जी हाँ, हमें उठाता? हम राहमे पड़े थे ?

१८ मई १९५२ ई०] निगार जनवरी १९४१ ई०



नवाब 'साइल' देहलवी

[१८६७ ...... ई०]

नवाब सिराजुद्दीनख़ाँ 'साइल' १८६७ ई०मे उत्पन्न हुए। आपके जन्मकी खुशीमे मिर्जा 'गालिब'ने सात अशआरका किता लिखा था। आप मिर्जा शहाबुद्दीन अहमदखाँ 'साकिब'के पुत्र और नवाब ज़ियाउद्दीन अहमदखाँ 'नैयर दरख़्शाँ' जागीरदार लोहारूके पौत्र थे। मिर्जा 'गालिब' जियाउद्दीनके बहनोई होते थे। यानी नवाब 'साइल'के पिताके रिश्तेमे मिर्जा 'गालिब' फूफा लगते थे।

नवाब 'साइल' अभी चार वर्षके ही हुए थे कि आपके सरसे आपके पिताका साया उठ गया। १४ वर्षकी उम्रतक अरबी-फारसीकी शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद कूचये-शायरीमे कदम रक्खा। आप मिर्ज़ा दागके प्रिय शिष्य थे, और उनकी सुपुत्रीको पत्नी बनानेका भी आपको सौभाग्य प्राप्त हुआ। मुद्दतो उस्तादकी खिदमतमे रहकर शायरीकी बारीकियो और देहलीकी टकसाली जबान सीखनेका आपको फख्र हासिल हुआ। आपके वास्ते कोई उपयुक्त और मौजूं तखल्लुसकी तलाश थी कि एक रोज एक शरीफ और सवाली सूरतने आकर सलाम किया। आनेका सबब पूछनेपर उसने कहा कि साइल (भिक्षुक) हूँ। तखल्लुसके लिए मौजूं शब्दकी चरचा चल ही रही थी कि एक शरीफ इन्सानके मुँहसे 'साइल' शब्द

सुना तो उस्तादको वह इतना भाया कि उसी रोजसे आप 'साइल' कहलाने लगे। यह भी कुदरतकी सितम ज़रीफी ही समझिये कि जिसका पाँच वर्गोसे नवाबका खिताव चला आ रहा हो, जो शक्लो-शवाहतमे नवाबो, वादशाहोको दूर बिठाता हो, जिसका व्यक्तित्व इतना आकर्षित हो, वह 'साइल' नामसे ख्याति पाये। दोस्तोके छेडनेपर तख़ल्लुसके सम्बन्धमे आपने फरमाया था—

रफीक[1] करते है ईराद[2] क्यो तखल्लुसपर[3] ?
हुनरको[4] छोडके निस्बतसे[5] बा-विक़ार हूँ[6] मैं ।।
'ज़हीर'-ओ-'ग़ालिब'-ओ-'अरशद' का हूँ जिगरगोशा[7]।
जनाब 'दाग़'का तलमीज़[8]-ओ-दामाद हूँ मैं ।।

अमीर करते है इज्जत मेरी वोह 'साइल'[9] हूँ।
गुलोंके पहलूमे रहता हूँ ऐसा ख़ार[10] हूँ मैं ।।

तख़ल्लुसमे मुआनीका अगर कुछ परतवा होता।
तो 'साइल' आपमे यह शान, यह शौकत कहाँ होती ?

'साइल'को तुम न चश्मे-हिकारतसे देखना।
नव्वाव पाँच पुश्तसे उसका ख़िताब है ।।

नवाव 'साइल'के सम्बन्धमे यह वात मशहूर थी कि जिसने मिर्ज़ा 'गालिव'को न देखा हो, वह आपको देख ले। लम्बा कद, भरा हुआ गोरा-चिट्टा जिस्म, सुर्ख़-ओ-सफेद किताबी चेहरा, बडी-बडी कटीली आँखे, रेशम-

---

[1]मित्र, [2]एतराज़, [3]उपनामपर, [4]शायरीके अतिरिक्त, [5]वशसे [6]प्रतिष्ठित, [7]कलेजेका टुकडा, [8]शिष्य, [9]भिक्षुक; [10]काँटा।

सी मुलायम सुफ़ेद दाढी। पॉच पी०के लठ्ठेका चूडीदार पायजामा, तनज़ेब अथवा रफलका अगरखा पहनकर अपने हाथकी सिली हुई मखमली चौगोशिया टोपी जब सरपर रखते थे, तब देखते ही बनता था। ऑखोमे बारीक सुर्मा, मुँहमे पान, सुनेहरी चश्मा, उनको खूब फबते थे।

मुझे उनको पहले-पहल १९२४मे रायबहादुर पारसदासके मुशायरेमे देखनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। तकरीबन उस वक्त उनकी उम्र साठके लगभग होगी, लेकिन बुढापेका कोई खास हमला नही हुआ था। वही चौडा-चकला सीना, वही जवानोकी तरह चाल, वही बातचीतका तरीका, वही आवाज़। हॉ बाल ज़रूर सुफेद हो गये थे, जो कि उनके व्यक्तित्वको और भी प्रतिष्ठित कर रहे थे। बहुत ही वज़अ-कतअके बुजुर्ग थे। उनको देखनेसे आभास मिलता था कि यही पोशाक-ओ-लिबास कभी अहले देहलीका रहा होगा।

मुशायरोमे शिरकत फरमानेको तशरीफ लाते थे तो मुशायरोके सयोजक और श्रोता बहुत ही उत्सुकतापूर्वक उनकी बाट जोहते रहते थे, और जब आनेकी सूचना मिलती थी तो, सयोजक, मित्र-अहबाब, मुख्य-मुख्य शिष्य उनको लिवा लानेके लिए दरवाज़ेतक दौड़ पडते थे। अन्दर तशरीफ लानेपर प्रायः सभी शायर बा-अदब खड़े हो जाते थे, और आप मुसकराते हुए, अभिवादनोका जवाब देते हुए, अपनेसे उम्रमे बडोको सलाम करते हुए सलीकेसे अपनी नियत जगहपर बैठ जाते थे। आप बहुत ही आकर्षक ढगसे तरन्नुममे गज़ल पढते थे और कहते है कि मुशायरोमे सबसे पहले आप ही ने तरन्नुमसे पढनेका श्रीगणेश किया। आपका एक खास किस्मका तरन्नुम था, जो कि आपका ही तर्ज़ेखास समझा जाता था।

नवाब 'साइल'को पचासो मुशायरोमे 'देखने-सुननेके अतिरिक्त मुझे आपके दौलतखानेपर हमकलाम होनेका भी फख्र हासिल हुआ है। आपने स्वप्नमे श्रीकृष्णको देखा तो श्रद्धा-भक्तिसे ओत-प्रोत होकर उनकी शानमे मसनवी लिखी थी। उस मसनवीके चन्द शेर मुझे सुनाये, दो-तीन सेहरे

और चन्द गजलोके अशआर भी। और सबसे बडी स्मरण रखने योग्य बात तो यह हुई कि उनकी बेगम जो मिर्जा 'दाग'की लाडली बेटी थी, उनके चन्द फिकरे परदेमेसे ही सही, सुननेका मुझे सौभाग्य प्राप्त हुआ। उर्दू जबान उनके घरकी लौण्डी थी, और वे आकाये-जबान थे।

जीवनके अन्तिम दिनोमे वृद्धावस्थाके कारण चलने-फिरनेमे दिक्कत होती थी। उस लाचारीका बयान आपने कितने करुणाभरे शब्दोमें किया है—

रखा है तखल्लुस ब-मजबूर 'साइल' हुई इतनी जब अहतयाजोकी मुश्किल।
मिले दाना खानेको जब दाना मॉगूं, मयस्सर हो पीनेको पानी कहो तो॥

इस लाचारीके बावजूद भी वजअदारीका यह आलम था कि जिन इष्ट-मित्रोकी मिजाज-पुर्सीके लिए जाना आप आवश्यक समझते थे, रिक्शामे बैठकर उनके यहॉ हो आते थे। मृत्युसे एक रोज़ पूर्व आप पाटोदी रियासतसे शामको दिल्ली आये थे। आते ही रिक्शामे सवार हुए और उन इष्ट-मित्रोसे मिल आये, जिनसे वे रोजाना मिला करते थे। यह किसीको क्या मालूम था कि नवाब 'साइल'का देहलीके गली-कूचोमे यह अन्तिम फेरा है।

७८ वर्षकी आयुमे १५ सितम्बर १९४५को दिनके दस बजे जन्नत नशीन हुए। आपकी मृत्युपर कितने ही शायरोने नौहे और तारीखे कही। सैकडो आपने शिष्य छोड़े हैं।

नवाब 'साइल'ने गजलोके छ दीवान और एक मसनवीका दीवान छोडा है। इन दीवानोमे अनुमानत. एक लाख शेर होगे। खेद है कि अभीतक एक भी प्रकाशित नही हुआ है। यहाँ हम उनके चन्द अशआर दे रहे है—

कल शबको बज़्मे-मयमें उदू मेहमाँ न था ?
बिगड़ो नही, ख़फा न हो, जाने दो, हाँ न था ॥
मूसासे क्यो खुला वोह, किया हमसे क्यो हिजाब ?
ज़ौके-जमाले-यार यहाँ था, वहाँ न था ॥

ख़ामोशीमें है अर्ज़ेहाल क्या-क्या ।
कोई समझे हमारा मुद्दआ क्या ॥

दिलमें है दर्द, दाग कलेजेमें, लबपै आह ।
'साइल'को जो नसीबसे मिलता गया, लिया ॥

वादा किया था आपने और फिर मुकर गये ।
दमभरका तज़करा है, यह आधी घडीकी बात ॥
मै पीके वाज़ सुनता हूँ, हुरमत[1] ज़रूर है ।
मशरबके[2] गो ख़िलाफ सही शेख़जीकी बात ॥

वोह आशोबे-तजल्ली हँस रहा है गो पसेपरदा ।
मगर अक्से तबस्सुम आ पड़ा है सारा चिलमनपर ॥
हमेशा ख़ूने-दिल रोया हूँ मै, लेकिन सलीकेसे ।
न कतरा आस्तीपर है , न धब्बा जेबो-दामनपर ॥

जो हम है शौकसे बेताब, तो वोह शोख़ीसे ।
करारसे न वही है न है करारसे हम ॥

गलत है नामये-एमाल सब यह दावरे-हश्र !
हम अपनी मासियतोका[3] शुमार रखते है ॥

---

[1]इज़्ज़त, [2]धर्मके; [3]अपराधोका ।

ख़ुदाजोई है जाहिदमें, ख़ुदासाजी बिरहमनमें।
है दो रिश्ते तआल्लुकके पडे दोनोकी गरदनमें॥

शेख़ ! मैख़ानेमें हुश्यार ज़रा चलियेगा।
मुँहके बल गिरते है, जब पैर रिपट जाते हैं॥

नज़ाकतपर यह दावा है कि हम तलवार मारेंगे।
तुम ओछे हो, तुम्हारा हाथ भी लाखोंमें ओछा है॥

सरेबाली खड़े हैं अपने बीमारे-मुहब्बतको।
नज़र है लाशपर और हाथ है आमादा मातमको॥

यह भी कोई रोना है, कि दो अश्क भर आये।
आँखोमें लहू बनके दिल आये, जिगर आये॥

आया भी रहम तुझको किसी ख़स्ता हालपर ?
तूने कभी सुनी भी किसी दादख़्वाहको ?

आसान नज़र आये हरइक मुश्किले-दुनिया।
दे साथ अगर हिम्मते-मर्दाना किसीका॥

मालूम नहीं किससे कहानी मेरी सुन ली।
भाता ही नहीं अब उन्हे अफसाना किसीका॥

उम्र भरमें एक तो पहचान हमको हो गई।
उसको आशिक जान लेना, जिसको हैराँ देखना॥

"हर्फ़े-मतलब सुनके 'साइल'का शरारतसे कहा—
इनकी सूरत, इनकी जुरअत, इनका अरमाँ, देखना॥"

इस क़दर लुत्फ असीरीका मिला है सैयाद !
याद मुतलक न रहा, मकसदे-परवाज़ मुझे॥

'साइल' सवाल करके न खोना तुम आबरू।
दुनियामें एक चीज है, बस आदमीकी बात॥

साक़ीने बादा-ख्वारको दी मैं न शेख़को।
उसने कहा मुझे मिले, उसने कहा मुझे॥

परवाने मिट रहे हैं, तेरी शमए-बज़्मपर।
यह अजुमन इक और तेरी अंजुमनमें है॥

अमल सब जुहदोतक़वाके धरे रह जाये ऐ 'ज़ाहिद'!
कोई कामिल अगर मिल जाय तो कपडे उतरवा ले॥

न कीजो एतबारे-जुब्बह-ओ-दस्तार ऐ साक़ी!
शराबे-नाब पीछे दीजो, पहले दाम धरवा ले॥

बन गये 'साइल' तो क्या शाने-इमारत मिट गई।
देखनेवाले नही खाते है धोखा नामसे॥

——ख़ुमख़ानयेजावेद भाग चार

सुना भी कभी माजरा दर्देग़मका, किसी दिल जलेकी ज़बानी, कहो तो?
निकल आयें आँसू कलेजा पकड़ लो, करूँ अर्ज अपनी कहानी, कहो तो?
वफ़ापेशा आशिक़ नहीं देखा तुमने, मुझे देख लो, जाँच लो, आज़मा लो।
तुम्हारे इशारेपै कुर्बान कर दूँ, अभी माययेज़िन्दगानी[1], कहो तो?
करमको[2] उम्मीदोपै बीमारे-उल्फत, बताओ जिये रोज़ मर-मरके कबतक?
किया जाये दशनेसे[3] या जहरसे खुद-मदावाये-दर्दे-निहानी[4] कहो तो॥

---

[1]जीवन-धन, [2]कृपाओकी, [3]खंजरसे, [4]छुपे दर्दकी दवा।

मिले ग़ैरोंसे मुझसे रंज, ग़म यूँ भी है और यूँ भी।
वफ़ा दुश्मन जफ़ाजूका, सितम यूँ भी है और यूँ भी॥
शबेवादा वोह आ जाये, न आयें मुझको बुलवाले।
इनायत यूँ भी और यूँ भी, करम यूँ भी है और यूँ भी॥

किये जाइयो ऐशो इशरतमे हा-हू, न कीजो नज़र बावफ़ाकी तरफ़ तू।
तुझे क्या ख़बर ऐ सितमगर जफ़ाजू! कि दम मरनेवालेने क्योंकर दिया है?
मेरा दाग़ दिलका चमकता जो देखा, तो पूछा सितमगरने—"है चीज़ यह क्या"?
कहा जोड़कर हाथ मैंने, बस इतना—"तुम्हींने यह ऐ बन्दापरवर! दिया है"॥

दिले-नाकामको उम्मीदे-करम है तो सही।
देखनेको सूयेदर,[1] आँखोंमें दम है तो सही॥
हो परिस्तारको[2] क्या तेरे, तमन्नाये-बहिश्त?
हूरेपैकर[3] तेरा घर, रश्केइरम्[4] है तो सही॥
किस बिनापर हो शकोशुबह, ग़लतगोई का।
उनके हर क़ौलमें पैवन्देक़सम है तो सही॥

नाम 'साइल' है मगर, चश्मेतमअ़से[5] उसने।
कभी देखी ही नहीं, साहबे-ज़रकी[6] सूरत॥

मज़ा यह दाग़े-उल्फ़तका है, दिलमें हज़रते 'साइल'!
उभरकर आबला हो, बैठकर नासूर हो जाये॥

रखनी है बरक़रार अगर आबरूये-दिल।
गोश आशनाये ग़ैर न हो आरज़ूये-दिल॥

---

[1]द्वारकी तरफ़, [2]आसक्तको, [3]परीका शरीर; [4]स्वर्गसे बढ़कर; [5]अभिलाषा दृष्टसे; [6]धनिककी।

सितमगारीकी तालीमें उन्हें दी हैं, यह कह-कहकर ।
कि रोता जिस किसीको देख लेना, मुसकरा देना ।।

सरे बज़्मे-सुख़न 'सायल'के चर्चे हो चले देखो—
"जनाबे दागके दामाद हैं, यह दिल्लीवाले हैं ।।"

यही ख़त उसके मुंहपर मार दीजो, बेधड़क क़ासिद !
अगर तुझको कड़ी नज़रोंसे, उसका पासबाँ देखे ।।
फरेबे-दामोदानासे' बचा ले दम', अगर बुलबुल ।
तो रोशन आँधियोंमें भी, चराग़े आशियाँ देखे ।।

२६ मई १९५२ ई०]



आशियाँ

आग़ा 'शाइर' क़िज़िलबाश

[१८७१–१९४० ई०]



आगा मुजफ्फरबेग 'शाइर' दिल्लीमे १८७१ ई०मे उत्पन्न हुए थे और मिर्ज़ा दागके प्रिय शिष्योमेंसे थे, और वर्षो उस्तादकी सेवामे हैदराबाद रहे थे। आपने बडे अदबके साथ अपने लेखोमे उस्तादका उल्लेख किया है और यह भी बताया है कि हम कितने डरते हुए इस्लाहके लिए उस्तादके पास जाया करते थे और उस्ताद कितनी मेहनत और लगनसे गज़लोका सशोधन किया करते थे।[1] आपके सैकडो शिष्य थे। मुशी महाराज बहादुर 'बर्क' और प० जिनेश्वरदास 'माइल'-जैसे सुयोग्य शायर आप ही के शिष्य थे।

मैंने आपको कई मुशायरोमे देखा है। गज़ल पढनेका ढग इतना आकर्षक और मोहक होता था कि श्रोता मत्रमुग्धसे हो जाते थे। शेर पढते हुए स्वय शेर बन जाते थे, और व्यथापूर्ण शेर पढ़ते हुए अक्सर रो पडते थे। वह गज़ल तो मुझे अब याद नही, हाँ वह दृश्य अब भी ज्यो-का-त्यो आँखोमे घूम रहा है। 'वोह आ रहे हैं' शेरका कुछ ऐसा मतलब था कि आपने शेर पढते हुए कुछ इस अदासे दाहिने दरवाज़ेकी तरफ देखा कि

---

[1]शेरोसुखन प्रथम भागमें मिर्ज़ा दागके परिचयमे इस तरहके १-२ अवतरण दिये गये है।

तमाम श्रोता गर्दन फेर-फेरकर उधर देखने लगे, जैसे कि कोई सचमुच आ रहे हैं; और जब आपने इसी मिसरेको पढ़ते हुए बायें दरवाजेकी ओर सकेत किया तो दर्शक उधर देखने लगे थे। उनकी समूची ग़ज़लका अन्दाज यही होता था।

आपका रगे-शायरी वही 'दाग़' स्कूलका है। आप शायर होनेके अतिरिक्त बहुत अच्छे गद्य-लेखक और अनुवादक थे। आपके साहित्यिक और आलोचनात्मक २७ लेखोंका सकलन 'ख़ुमारिस्तान' प्रकाशित हो चुका है। उमर ख़ैयामकी फ़ारसी रुबाइयोंको उर्दू रुबाइयों-का रूप इस सलीक़ेसे दिया है कि उमर ख़ैयामकी अस्ल रुबाइयाँ मालूम होती हैं। आपने कितने ही उपन्यास और नाटक भी लिखे थे।

मझोला कद, जिस्म दुहेरा गुदाज़ था। चेहरा गोल, आँखे बड़ी-बड़ी चमकदार और रसीली। सरपर पठानी ढगका साफ़ा, आवाज दर्दीली और पाटदार। १२ मार्च १९४०को आपका निधन हुआ तो दिल्लीके एक अख़बारने लिखा—"दिल्लीका जवानदाँ, हिन्दू-मुस्लिम इत्तहादका सच्चा आशिक़ चल बसा"। दूसरे अख़बारने लिखा—

मर गया नाविक फ़िगन मारेगा दिलपर तीर कौन ?

आपकी क़ब्रपर जो कुतबा लगा हुआ है, उसमें एक मिसरा यह भी है—

आख़िरी शायर जहाँनाबादका ख़ामोश है

आगा शाइर सहृदय और कोमल स्वभावके थे। नफ़ीस और नाज़ुक तबीयत पाई थी। अपनी पोशाकको इत्रोंमें बसाये रखते थे वही आगा शाइर अपने इन शेरके अनुसार मिट्टीके नीचे दबे पड़े हैं—

लहदमें उनके जिस्मे-नाज़नींपर क्या गुज़रती है।
[illegible][1] जिनको बेचैनी रही हो चोबेबिस्तरकी[2] ॥

---

[1] [illegible]; [2] बिस्तरकी लकड़ी।

आगाशाइर साहबका पहला दीवान 'तीरोनश्तर' १९०९मे प्रकाशित हमारे सामने है। जिसमे नज्मो, कसीदोके अतिरिक्त १०० पृष्ठोमे ३०० गजले है। तीरो-नश्तरसे और कुछ पत्र-पत्रिकाओसे, चन्द अशआर चुनकर यहाँ दिये जा रहे है—

क्या बात है कि आँखमें सुर्मा नहीं है आज।
ख़ाली धरा हुआ है तमचा चला हुआ॥
उसको ही अद-बदाके मिलाया है ख़ाकमे।
देखा है जिसको चर्ख़ने फूला-फला हुआ॥

कहा जो मैंने कि "पहले तो सीधे-सादे थे।
यह बाँकपन न था, इस तरह पेचोताब न था॥
ख़मोश रहते थे गोया ज़बाँ न थी मुँहमे।
यह शोख़ियाँ, यह तलव्वुन, यह इज़्तराब न था॥
हमेशा फिरते थे बेपरदा सामने मेरे।
खुले थे बन्देकबा और कुछ हिजाब न था॥
यकायक ऐसा हुआ क्या, यह इनकलाब न था।
कि परदे लग गये और कोई बारयाब न था॥"
तो मुसकराके कहा—"दूर अक़्लके दुश्मन!
समझ ले इतना कि जब आलमे-शबाब न था।"

सर काटकर न आँखोसे लड़ियाँ बहाइये।
हमको वफ़ाका लुत्फ़ जफ़ा ही में आ गया॥

पहले इसमें इक अदा थी, नाज था, अन्दाज़ था।
रूठना अब तो तेरी आदतमें दाख़िल हो गया॥

यह किसने रोज़ने-दीवारसे हँसकर मुझे झाँका?
कि शोला फिर गया आँखोमें मेरी बर्केसोज़ाँका॥

नब्ज़ देखी, हाल पूछा, उठ चले।
बैठिये साहब, भला यह आये क्या ?

किस तरह जवानीमें चलूँ, राहपर नासेह !
यह उम्र ही ऐसी है, सुझाई नही देता ॥

जवानी भी अजब शै है कि जब तक है नशा उसका।
मज़ा है सादे पानीमें शराबे-अर्गवानीका ॥

तग आकर जब कहा मैंने—"नही मिलनेके तुम ?"
हँसके बोले—"बस यही फिक़रा जवाबी हो गया ॥"

हाय इस कहनेके सदके क्यो न मर जाये कोई।
"मर मिटा कोई तो फिर अहसान हमपर क्या हुआ ?"

जीते-जी तो लाख झगड़े थे बतानेके लिए।
यह किसीने भी न समझाया कि मरकर क्या हुआ ॥

किस अदासे पूछते है, मेरी सूरत देखकर—
"यह तेरा क्या हाल है, दो दिनमें कैसा हो गया ?"

जिस खाकमें हो चाँदके टुकडे हजार-हा।
निसबत है आसमानको फिर उस ज़मीसे क्या ?

जब कहा महशरमे—"सच्चा चाहनेवाला है कौन ?"
उफरे शोख़ी मुझको उँगलीसे बताकर रह गया ॥

पहन लें कफन अब यह नौबत है अपनी।
मगर है वही हमसे परदा तुम्हारा ॥

कहा जलके यह ज़िक्रे-मर्गे-उदूपर।
"उठाते हैं चलकर जनाज़ा तुम्हारा॥"

आँखें नशीली, बाल खुले, मुसकराहटें।
इस वक़्त यह नशा है तुम्हे किस बहारका ?

किसीके रुखपै हैं ज़ुल्फ़े कि आफताबमें साँप।
खुदाकी शान है रहने लगे नक़ाबमें साँप॥

दो इजाज़त तो कलेजेसे लगा लूँ रुख़सार।
सेंक लूँ चोट जिगरकी, इन्ही अंगारोंपर॥

लाखमे एक कोई निकलेगा।
कौन करता है, मुफलिसीमें लिहाज़ ?

'शाइर' किसे दिखाऊँ गज़ल हाय क्या करूँ ?
मेरे तो दिलसे जा नहीं सकता है दागे 'दाग'॥

न क्यो गालियाँ खाके होंट उसके चूमूँ।
कि देती है तल्ख़ी शराब अव्वल-अव्वल॥
वोह भी न चैनसे कहीं दमभरको रह सका।
दुनियामें जिसने आके सताये पराये दिल॥

पहले यह हुक्म था आवाज़ न निकले मुँहसे।
अब यह ज़िद है कि तड़पते हुए फरियाद करें॥

जब कभी हमने बुलाया उनको।
यही कहते हैं—"कहो आते हैं॥"

आगाशाइर किज़िलबाश

मिलना न मिलना यह तो मुकद्दरकी बात है।
तुम खुश रहो, रहो मेरे प्यारे, जहाँ कहीं ।।
मैकश हूँ वोह कि पूछता हूँ उठके हश्रमें—
"क्यों जी शराबकी है दुकानें यहाँ कहीं ?"

माना कि देखनेसे भी जीता है आदमी।
वोह क्या करे जिसे तेरे दरतक गुज़र न हो ।।

हुस्ने-रफ़्ताका अब मलाल ही क्या ?
आरज़ी चीज़ थी रही-न-रही ।।

देखना उनकी शरारत कि उदूकी ख़ातिर ।
मेरे मरनेकी ख़बर झूठ उड़ा रक्खी है ।।

तुम कहाँ, वस्ल कहाँ, वस्लकी उम्मीद कहाँ ?
दिलके बहलानेको इक बात बना रक्खी है ।।

पामाल करके पूछते है किस अदासे वोह—
"इस दिलमें आग थी ? मेरे तलवे झुलस गये ।।

बहुत सुन ली बस अब आपेमें रहिये ।
निकल जाये न कुछ मेरी ज़बाँसे ।।

हमारी दास्तानेगम सुनी, सुनकर यह फ़र्माया—
"जिसे तुम कह रहे हो क्यों जी यह किस्सा कहाँतक है ?"

क्यो कर गया, मिला न मिला, उसने क्या कहा ?
ऐ नामाबर ! सिरेसे सुना, दास्ताँ मुझे ।।

ख़ुदाकी शान क्या तक़दीर आई है बिगड़नेपर।
हमारी बात भी जब तुमको गाली होती जाती है ॥

दरवाज़ेपै उस बुतके सौ बार हमें जाना।
अपना तो यही काबा, अपना तो यही हज है ॥
ऐ अबरूए जानाँ ! तू, इतना तो बता हमको।
किस रुख़से करें सजदा क़िब्लेमें ज़रा कज है ॥

न छेड़ो अब शिकिस्ता ख़ातिरोंको।
कोई गमज़े उठायेगा कहाँतक ॥

बस चलो हो चुका इतना नहीं बनते तौबा।
देखना रात गुज़र जाय न सामानोंमें ॥
माशा अल्लाह रक़ीबोंका यह जमघट आहा।
आज तो शमअ़ बने बैठे हो परवानोंमें ॥

ग़रीबोंके मरक़दको ठुकरानेवाले।
सँभल जानेवाले, सँभल जानेवाले ॥

ख़याले-अबरुये-पुरख़मसे इक तसवीर पैदा है।
ज़रा तुम सामने आना कि हमने चाँद देखा है ॥

उधर जो देखता है, वोह इधर भी देख लेता है।
तेरी तसवीर बनकर हम तेरी महफ़िलमें रहते हैं ॥

यह चमनका है तसव्वुर कि क़फ़समें पहरों।
डालियाँ झूमती हैं मुर्ग़े-गिरफ़्तारके पास ॥

दम न निकला सुबहतक शामे-अलम।
हसरतोंने रातभर पहरा दिया ॥

काबेसे दैर, दैरसे काबा।
मार डालेगी राहकी गर्दिश ॥

तुम क्या सुनोगे, वाह सितमगरसे क्या कहे ?
हाँ कोई अहले-दर्द हो, पत्थरसे क्या कहे ?

सिधारें भला आप क्या देखते हैं ?
जनाज़ा किसीका, तमाशा किसीका ॥

आदमी-आदमीसे मिलता है।
बात करनी तो कुछ गुनाह नहीं ॥

रोज फ़र्माते हैं—"हम चाहे तो मिट जाओ अभी।"
देखना क्या मेरी तकदीर बने बैठे हैं ॥

इनकारे-गिरियापै मेरे किस नाज़से कहा—
"आँसू नहीं तो पूछते हो आस्तीसे क्या ?"

लो आओ मैं बताऊँ तिलस्मे-जहाँका राज़।
जो कुछ है सब ख़यालकी मुट्ठीमें बन्द है ॥

बुरे हालसे या भले हालसे।
तुम्हे क्या ? हमारी बसर हो गई ॥

जो बर्कोबादपै कादिर वह इस कदर मजबूर।
कि एक साँस बढ़ानेका अख़्तियार नहीं ॥

हम जिलाये गये है मरनेको।
इस करमकी सहार कौन करे ?

हश्रमें इन्साफ़ होगा, बस यही सुनते रहो।
कुछ यहाँ होता रहा है, कुछ वहाँ हो जायगा॥

फिर मेरे सरकी क़सम खाकर चले।
फिर मुझे सरकारने धोका दिया॥

कोसते हैं सतानेवालेको।
आपसे तो कोई ख़िताब नहीं॥

तुम भला कौन थे दिलमें मेरे आनेवाले।
देखना जान-न-पहचान चले आते हैं॥

तिनकेकी तरह सैले-हवादस लिये फिरा।
तूफ़ान लेके आये थे हम जिन्दगीके साथ॥

उफ़री शबनम इस कदर नादारियाँ।
मोतियोंको घासपै फैला दिया॥

ऐ शमअ़! हमसे सोज़े-मुहब्बतके ज़ब्त सीख।
कम्बख़्त एक रातमें सारी पिघल गई॥

बर्क़े-ख़िरमन सोज़! अब रखना ज़रा चश्मेकरम।
चार तिनके फिर जुड़े हैं, आशियानेके लिए॥

लो हम बतायें गुंच-ओ-गुलमें है फ़र्क़ क्या?
इक बात है कही हुई, इक बे-कही हुई॥

९ जून १९५२]



'बेख़ुद' देहलवी

[१८६०—.... ई०]

हाजी सैयद वहीदुद्दीन अहमद 'बेखुद' १८६० ई०मे भरतपुरमे उत्पन्न हुए, और दो माहके बाद ही आपके पिता अपने वतन दिल्ली ले आये। ४ वर्षकी आयुसे शिक्षा प्रारम्भ हुई।

फारसीका अभ्यास तो पूर्णरूपेण हो सका, किन्तु शायरीके चस्केके कारण अरबी-शिक्षा अधूरी रह गई। १२ वर्षकी उम्रसे आपने शेर कहना शुरू कर दिया था। आपने जो पहले-पहल शेर कहा वह यह था—

दिलसे निकल गया कि जिगरसे निकल गया॥
तीरे-निगाहे-यार किधरसे निकल गया॥

आपके बाबा 'सालिक' उपनामसे शायरी करते थे और मिर्जा गालिबके शिष्य थे। आपके पिता भी 'सालम' उपनामसे शायरी करते थे। और आपके दो चाचा—'मौजूँ' और 'फर्द' भी शायर थे। आपके मामा 'शैदा' उपनाम फर्माते थे और 'आज़ुर्दा' आपकी माताके फूफा थे। गोया यूँ कहना चाहिए कि—

पुश्तें गुजरी है इसी दश्तकी सैयाहीमें[1]।

---

[1]इसी मार्गकी यात्रामे।

आपके शेर कहनेका यह आलम था कि रोज़ाना १-२ गज़ल कह लेते थे, और रोजाना फाड़ डालते थे। इस तरह आपने तकरीबन एक दीवानके योग्य गज़ले स्वयं ही नष्ट कर डाली।

एक रोज आपके चचा 'मौज़ूँ' साहब गजल कह रहे थे। आपने दरियाफ्त फर्माया कि—"आप क्या लिख रहे है" ? जवाब मिला—"गज़ल कह रहा हूँ।" आपने फर्माया कि —"इजाज़त दे तो मैं भी इस ज़मीनमे तबअ आज़माई करूँ।" चचा बोले—"तुम क्या कहोगे" ?

यह बात आपको नागवार हुई ! अदबसे चुप हो रहे, कुछ जवाब न दिया। लेकिन दिलमे कहा—"हम गज़ल जरूर कहेगे।" उस वक्त आप १४ वर्षके थे। फिर क्या था, आपने इस फनमे वोह महारत हासिल की, कि इस घटनाके २५ वर्ष बाद आपके वही चचा साहब अपनी ग़ज़लोका सशोधन आपसे कराने लगे।

एक दिन आपके मामा 'रसा' साहब—'हाल कब', 'ख़ाल कब'—काफिया-रदीफपर गजल कह रहे थे, रसा साहबने यह किता कहा—

देखो तो आईना ज़रा ऐ हज़रते 'रसा' !
चेहरेसे आश्कार[1] था, रंजो-मलाल कब ?
हमने न कह दिया था कि अच्छा नहीं है इश्क।
कब तुम थे बेकरार, हुआ था यह हाल कब ?

'बेख़ुद' भी पास ही बैठे थे, आपने तुरन्त ये मिसरे लगाये—

मेरी ख़ता मुआफ हो, है शर्मकी यह जा।
यह हाले-ज़ार, और हो हज़रत-सा पारसा॥

---

[1]प्रकट।

बेख़ुदकी शक्लको भी तो दिलसे भुला दिया।
देखो तो आईना जरा ऐ हजरते 'रसा'!
चेहरे-से आश्कार था रंजो-मलाल कब ?

था कौल आपका तो कि गरदूँ नशी है इश्क।
या कहते हो कि मौतसे बदतर कही है इश्क॥
क्यो है जबाँपै दुश्मने-दुनिया-ओ-दी है इश्क।
हमने न कह दिया था कि अच्छा नहीं है इश्क॥
कब तुम थे बेकरार, हुआ था यह हाल कब ?

हज़रत 'हाली' उन दिनो आपको 'गालिब'का फारसी दीवान पढाया करते थे। उन्हे जब ये मिसरे सुनाये गये तो बहुत खुश हुए और उन्होने आपको हज़रत दागका शिष्य होनेका मशविरा दिया। मौलवी 'बेदिल' साहब आपको 'दाग'की ख़िदतममे ले गये और आपकी तरफ इशारा करके बोले—"इनको अपना शागिर्द कीजिये।" हजरत 'दाग'ने बेखुदसे अपनी कोई गजल पढनेको कहा। आपने जब यह शेर पढा—

जब आँख पड़ी अपनी, इक बात नई पाई।
इन देखनेवालोंने तुझको अभी क्या देखा ?

शेर सुना तो दाग फडक गये। बहुत तारीफ की और मौलवी साहबसे फर्माया कि—"कोहना मश्क (पुराने अभ्यासी) मालूम होते है।" आख़िर आपको बताना पडा कि १२ वर्षकी उम्रसे रोजाना गज़ल कहता हूँ और फाड डालता हूँ। हजरत 'दाग' आपसे बहुत प्रसन्न हुए और पूरी तवज्जहके साथ आपकी गजलोका सशोधन करने लगे।

बेखुद छ. माह उस्तादके पास हैदराबाद भी रहे और बहुत शीघ्र आप सशोधन करानेके बन्धनसे मुक्त कर दिये गये।

आपकी जबान देहलीकी टकसाली जबान है, और आपका भी विश्वास है कि आपको उस्तादकी जबान अता हुई है। फर्माते हैं—

ज़बाँ उस्तादकी 'बेख़ुद' तेरे हिस्सेमे आई है।
फिर इतना भी नही कोई, ख़ुदा रक्खे तेरे दमको ॥

और उर्दू-जबान आपको इस कदर प्रिय है कि उसके समक्ष फारसीको हेच समझते हैं—

बोलनी आ गई जिसे उर्दू।
सामने उसके फारसी क्या है ?

आप अपने उस्ताद 'दाग'के रगमे ही शेर कहते है। वही शोख़ी, वही छेड-छाड, वही ताने-शिकवे, वही हरजाई माशूक जो 'दाग'के यहाँ है, वही आपके कलाममे घुले-मिले है। 'दाग'की शायरीका युग लद गया। दर्जनो इन्कलाब सरसे गुजर गये। नज्मको तो छोडिये गजलकी कायापलट हो गई। मगर आप अपने उसी रगमे बेख़ुद है।

आप 'दाग'के प्रसिद्ध शिष्योमे-से है, और उनके शायरीमे उत्तराधिकारी समझे जाते है। ३००के लगभग आपके शिष्य है। कई मुशायरोमे मुझे भी आपका कलाम सुननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मेरी शादीपर आपने सेहरा लिखकर अता फर्माया था। वडे दवदवेके पुरानी वजअ-कतअके बुजुर्ग है। देहलीकी पुरानी यादगारोमे आपका दम गनीमत है।

जनवरी १९३८मे मुद्रित ३३८ पृष्ठका आपकी गजलोका सग्रह 'गुफ़्तारे बेख़ुद' हमारे सामने है, उसमे-से आपका चुना हुआ कलाम पेश किया जाता है—

जो तमाशा नज़र आया उसे देखा समझा।
जब समझ आ गई दुनियाको तमाशा समझा॥
गैरियत तक था परेशानि-ओ-फुरक़तका गिला।
कुछ शिकायत ही न थी, जब उसे अपना समझा॥

क्या हूँ मैं? मेरे समझनेको समझ है दरकार।
ख़ाक समझा जो मुझे ख़ाकका पुतला समझा॥
एक वोह हैं, जिन्हे दुनियाकी बहारें हैं नसीब।
एक मैं हूँ, कफसे-तगको दुनिया समझा॥

यह दिल कभी न मुहब्बतमें कामयाव हुआ।
मुझे खराब किया, आप भी ख़राब हुआ॥
अज़लमें, जीस्तमें, तुरबतमे, हश्रमे, जालिम!
तेरे सितमके लिए मैं ही इन्तख़ाब हुआ॥
निगाहे-मस्तको साकीकी कौन दे इलज़ाम?
मेरा नसीब कि रुसवा मेरा शबाब हुआ॥
हमारे इश्कको दस-बीसने भी दाद न दी।
किसीका हुस्न ज़मानेमें इन्तख़ाब हुआ॥
फनाका दावा हज़ारोको था ज़मानेमें।
हुबाबने[1] मुझे देखा, तो आब-आब[2] हुआ॥

खा के आये हो कसम आज किसीकी झूठी।
लबे-रगीमें वोह शीरीनिये-गुफ्तार नहीं॥
मेरे मसकनका[3] पता, तुझको यही काफी है।
वोह मेरा घर है जहाँ दर नहीं, दीवार नही॥

---

[1]बुलबुलेने, [2]पानी-पानी, [3]घरका।

सांस गिनता हूँ, तेरी यादमें कितने गुज़रे।
रात-दिन काममें मसरूफ हूँ, बेकार नहीं॥

अदा सीखो, अदा लानेके दिन हैं।
अभी तो दूर शरमानेके दिन हैं॥

तुम्हे राज़े-मुहब्बत क्या बतायें?
तुम्हारे खेलने-खानेके दिन हैं॥
छुपाओ मुँह नकाब उठने न पाये।
कि रगे-रुख़ निखर जानेके दिन हैं॥

कहें किस मुँहसे अपना आईना-बरदार[1] रहने दें।
तमन्ना है गुलामीमें हमें सरकार रहने दें॥

यह परदेकी निराली तर्ज़ ऐ परदानशीं निकली।
जब आँखें बन्द होती हैं नज़र आता है तू मुझको॥
जनाबे शेख़की दावत भी हो, रोज़ा-कुशाई भी।
कहींसे हाथ आ जाये, अगर बेरंगो-बू मुझको॥
शराबे-इश्कसे मदहोश रहता हूँ मगर 'बेख़ुद'!
फरिश्ता भी तो छू सकता नही है बेवज़ू मुझको॥

काबा-ओ-दैरकी राहे तो खुली है हर-सू।
कोई इतना नहीं, जो दश्ते-मुहब्बतमे रहे॥
हमसे दुनियाका न सुलझेगा यह गोरखधन्धा।
कौन इस गममें फँसे, कौन मुसीबतमें रहे॥
बे-ख़लिश जिन्दगिए-इश्क मज़ा देती है।
कामयाबीकी न उम्मीद मुहब्बतमें रहे॥

---

[1]दर्पण थामनेवाला।

वाये[1] वोह आँख जिसे दीदये-मुश्ताक़[2] कहे।
हाय वोह दिल जो गिरफ़्तार मुहब्बतमें रहे॥

लड़ना था अगर मुझसे ख़िलवतमें[3] लड़े होते।
महफ़िलमें जो तुम बिगड़े दुश्मनकी बन आई थी॥

वोह बन्देका ख़ुदा है, उससे बन्दा छुट नही सकता।
ज़रा-सी बातपर इन्साँको इन्साँ छोड़ सकता है॥

खामोश हूँ मैं और वोह कुछ पूछ रहे हैं।
माथेपै शिकन भी है, इनायतकी नज़र भी॥

कुरबान उस ज़बानके, सदके बयानके।
नासेहकी बात ही नही, जो बेतुकी न हो॥

ख़ाक भी हम तो न ऐ नासहे-नादाँ समझे।
जाके समझा तू उसे जो तुझे इन्साँ समझे॥

चार दागोपै न अहसान जताओ इतना।
कौन-से बख़्श दिये तुमने ख़ज़ाने हमको ?

बिगड़ना उसका गुस्सेमें भी शोख़ीसे नही ख़ाली।
मज़ेकी बात कह जाता है, ज़ालिम बेमज़ा होकर॥

अब नाम भी वफ़ाका न लूँगा तमाम उम्र।
मुझसे ख़ता हुई, मुझे बख़्शो किसी तरह॥

हिजाब दूर तुम्हारा शबाब कर देगा।
यह वोह नशा है, तुम्हे बे-हिजाब कर देगा॥

---

[1]हाय, [2]देखनेकी अभिलाषी, [3]एकान्तमें।

दम है बाक़ी, न तग़ाफ़ुलका गिला है बाक़ी ।
कहरकी आँखसे यह किसने इधर देख लिया ?

'हाँ'को इतना खींचते क्यों हो ख़ुदाके वास्ते ?
फिर तो इस वादेका मतलब दूसरा हो जायगा ।।

जो बात न कहनी थी गुस्सेने उगलवा दी ।
शरमाये बहुत दिलमें, वोह मुझपै ख़फ़ा होकर ।।

सोगवारोंमें मेरे हुस्ने-अदा भी हो शरीक ।
आईना देखके ज़ुल्फ़ोंको परेशाँ करना ।।

हमें तुरबतमें आई नींद यह उनकी इनायत है ।
कफ़नमें सरके नीचे अपनी ख़ाके-आस्ताँ[1] रख दी ।।
हमें पीनेसे मतलब है, जगहकी क़ैद क्या 'बेख़ुद' !
उसीका नाम काबा रख दिया बोतल जहाँ रख दी ।।

तुम कहते हो "दिलमें न कोई मेरे सिवा आये"
क्या टाल दूँ उसको भी मुहब्बत अगर आये ?

बेकसीमें था तो ले-देके सहारा उसका था ।
मौत भी आकर कफ़े अफ़सोस मुझपर मल गई ।।

वही 'बेख़ुद' हूँ मैं समझे हो बेख़ुद जिसको तुम अपना ।
तुम्हारी याद कैसी मै तो ख़ुद अपनेसे ग़ाफ़िल हूँ ।।

नाम 'बेख़ुद' है तो मैख़्वार भी होगा वोह जरूर ।
पारसा हम तो समझते नहीं, कहता है वही ।।

---

[1]चौखटकी मिट्टी ।

उनसे कहदे यह कोई, दिलको अलग दफ़्न करें ।
क्यो कयामतका यह फित्ना मेरी तुरबतमें रहे ।।

गैरके साथ जो वोह फूल चढाने आये ।
हट गया अपनी जगह छोडके मदफन मेरा ।।

तू-ही-तू हो, जिस तरफ देखें उठाकर आँख हम ।
तेरे जलवेके सिवा पेशेनजर कुछ भी न हो ।।

अभी यह जलवानुमाई, अभी कुछ खाक नहीं ।
बुल-बुला पानीका इन्सानकी हस्ती कर दी ।।

गुजर जाते हैं दो-दो दिन हमें बेदाना-पानीके ।
कफसमें कौन खाये बैठकर सैयादके टुकडे ?

खाकमें मिलके भी दावा है मुहब्बतका मुझे ।
नही मिटती है मिटायेसे भी हैरत तेरी ।।

नजाकत आईना तक अक्सको जाने नहीं देती ।
यही नक्शा है तो बस खिच चुकी तसवीर रहने दो ।।

ऐ काश मेरी आहमें इतना असर तो हो ।
मेरा खयाल उसको, मुझे देखकर तो हो ।।
यह क्या कि आज कुछ है तो कल कुछ जबानपर ।
शिकवा हो या हो शुक्र, मगर उम्रभर तो हो ।।

ना-उमीदीने मिटा दी 'आरजू' ।
काम यूँ निकले दिले नाकामके ।।

फर्क कुछ आलमे-ईजादसे पहले तो न था ।
एक ही रंग था, उस वक्त तो मेरा-तेरा ।।

गुस्ताख़ो-बेअदबकी नजरसे निहाँ है आप।
इतना तो चश्मेगैरसे परदा जरूर था॥

✓ वही हम हैं, वही रातें, वही है जुस्तजू तेरी।
वही आँखोंकी हालत है, इधर देखा, उधर देखा॥

शमएमज़ार थी न कोई सोगवार था।
तुम जिसपै रो रहे थे, वोह किसका मज़ार था?

सौदाये-इश्क और है वहशत कुछ और चीज।
'मजनूँ'का कोई दोस्त फ़सानानिगार था॥
जादू है या तिलस्म तुम्हारी जबानपै।
तुम झूठ कह रहे थे, मुझे एतबार था॥

क्या-क्या हमारे सजदेकी रुसवाइयाँ हुईं।
नक़्शे-कदम किसीका सरे रहगुज़ार था॥

जवाब सोचकर वोह दिलमें मुसकराते हैं।
अभी ज़बानपै मेरा सवाल भी तो न था॥

बागे-आलमके तमाशाई मुझे भी देख लें।
मैं भी इस गुलशनका हूँ एक फूल कुम्हलाया हुआ॥

या तो है देखनेमें नजरका मेरी कुसूर।
या कुछ बदल गया है, जमानेका हाल अब॥

फिर बेवफासे अहदेवफा ले रहे हैं हम।
बेएतबारियोंका नहीं एतबार आज॥

हम उसे देखा किये जबतक हमें ग़फ़लत रही।
पड गया आँखोंपै परदा होश आ जानेके बाद॥

मैं हकीकत-आश्ना[१] हूँ हस्तिये-मोहूमका[२]।
देखता हूँ गौरसे फूलोको मुरझानेके बाद ॥
राहमें बैठा हूँ मैं, तुम सगेरह[३] समझो मुझे।
आदमी बन जाऊँगा कुछ ठोकरें खानेके बाद ॥

चोट खाकर ही तो इन्सान बना करता है।
दिल था बेकार अगर दर्द न होता पैदा ॥

जबाँपर राजकी बातें है 'बेखुद'!
कहीसे आज भी आया है तू क्या?

तुमसे खुलने नही देता दिले-बदजन[४] मेरा।
मेरे पहलूमें छुपा बैठा है दुश्मन मेरा ॥

छुपकर मेरे दिलमे, सुनो कानोसे मेरे तुम।
कहता है जमाना सरेबाजार तुम्हे क्या ॥

वही है बेखुदे-नाकाम तुम समझ लेना।
शराबखानेसे जो होशयार आयेगा ॥

आप ही के तो इशारेसे हरइक काम हुआ।
छुप गये आप तो मैं मुफ्तमें बदनाम हुआ ॥

मशरिककी[५] सिम्त[६] क्यो शबेवादा[७] है रोशनी।
निकलेगा आज रातको भी आफताब[८] क्या?

---

[१]वास्तविकताका पुजारी, [२]कल्पित जीवनका, [३]मार्गका रोडा, पत्थर, [४]अविश्वासी हृदय, [५]पूर्वकी, [६]तरफ; [७]वायदेकी रात्रि, [८]सूर्य्य।

दमभरके बाद तुम मुझे पहचानते नहीं।
अब इससे बढकर और मिटेगा शबाब क्या?
बैठे हुए हैं सामने सूरत तो देखिये।
'बेख़ुद' है नामके ये पियेंगे शराब क्या॥

तुम्हारे बाद सुना है मेरी अजल आई।
तुम्हारे साथ सुना था मेरा शबाब गया॥

गिनती मुसीबतोंकी शबेगम न पूछिये।
ऐसा हजूम था कि मेरा दम उलट गया।
दामन किसीका खींच रहा था ख़यालमें।
अब देखता हूँ मेरा गरेबान फट गया॥

मुझे किस तरह बावर हो, कि वोह तशरीफ लाते हैं।
कलेजेमें न टीस उठ्ठी न दिलमें इज़्तराब आया॥
तुम्हारी एक महफिल, उसमें यह दो रंग कैसे हैं?
कहीं आँखोंमें अश्क आये, कहीं जामेशराब आया॥

तेरे दीदारसे बढ़कर नहीं कोई ख़ुशी हमको।
हिलालेईद[1] भी हमने तेरा मुँह देखकर देखा॥
मुहब्बत दिलमें लाये थे, मुहब्बतसे ग़रज़ रक्खी।
गरज़ यह है यही इक ख़्वाब हमने उम्रभर देखा॥

जफायें तुम किये जाओ, वफ़ायें मैं किये जाऊँ।
तुम अपने फनमें कामिल हो, मैं अपने फ़नमें यकता हूँ॥
अजलने मुँहपै मुँह रखकर दमे आख़िर कहा मुझसे—
"इधर तो देख, आँखें खोल, मैं तेरी तमन्ना हूँ॥"

---

[1] ईदका चाँद।

गाफिल है वोह मुझसे, मुझे किस तरह यकीं हो।
आँखोमे फिरा करता है हर वक़्त कही हो॥
जब अर्शपै[1] रहते थे, तो अब दिलके मकीं[2] हो।
पहचान लिया मैंने तुम्हीं थे वोह, तुम्ही हो॥

क्या आग लगाये कोई नालेके असरको।
पहलूमें वोह बैठे है झुकाये हुए सरको॥
मैं चश्मे-इनायतका भरोसा न करूँगा।
सौ रंग बदलते हुए देखा है नज़रको॥

मिला होगा न मुझ-सा कद्रदाँ दर्दे-मुहब्बतको!
निकल जाता है दम मेरा अगर तस्कीन[3] दमभर हो॥

हाथसे जिबह करो, उठ नहीं सकती जो छुरी।
हम तो बेमौत भी मौजूद है मरजानेको॥

चौंक उठता हूँ कि दुनियासे सफर करना है।
कोई तैयार जो होता है कहीं जानेको॥
कई मैदान तो ऐसे है जो तड़पा देंगे।
खत्मतक कौन सुनेगा मेरे अफसानेको॥

तुम्हे गरज़ जो दिले-दाग़दारको देखो।
तुम अपने हुस्नको, अपनी बहारको देखो॥

पहले तो मुँह-ही-मुँहमें खुदा जाने क्या कहा?
अब मुझपै यह अताब है, तूने सुना नहीं॥

---

[1]आकाशमे, [2]वासी; [3]चैन।

ख़िलवत[1] समझ रहा हूँ तेरी बज़्मे नाज़को[2]।
मै क्या करूँ कि ग़ैर मुझे सूझता नही॥

मेरे मदफ़नपै[3] क्यों रोते हो आशिक मर नही सकता।
यह मर जाना नही है, सब्र आना इसको कहते है॥

ज़मानेकी अदावतका सबब थी दोस्ती जिनकी।
अब उनको दुश्मनी है हमसे, दुनिया इसको कहते है॥

ग़ैरकी बज़्मसे आये थे अयादतके[4] लिए।
याद है, याद है, वोह आपका अहसाँ मुझको॥

दरे-मस्जिद ही पै मयख़ाना है 'बेख़ुद'! अफसोस।
मुझको बदनाम मेरे नक्शे-कदम करते है॥

२ जून १९५२]



---

[1]एकान्त, [2]प्रेयसीकी महफिलको, [3]कब्रपर; [4]मिज़ाज-पुर्सीको।

'बेख़ुद' बदायूनी

[१८५७ — १९२६ ई०]

मौलवी अब्दुलहई 'बेखुद' १७ सितम्बर १८५७ ई०मे बदायूंमे उत्पन्न हुए। आपके पिताका नाम मौ० गुलाम सरूर था। अरबी-फारसीकी शिक्षाके लिए कई उस्ताद नियुक्त किये गये, किन्तु पूर्णरूपेण शिक्षा प्राप्त नही कर सके। इसकी वजह स्वय फर्माते है—"आँखे-हुस्नतलब, दिल-दर्द आश्ना, तबीयत-नफासत-पसन्द और मिज़ाज आज़ादीजू था। १४-१५ बरसकी उम्रसे शेर कहने लगे।"

जब तबीयतका यह हाल हो, तब पढना-लिखना क्या खाक होता? फिर भी आश्चर्य है कि १८७५ ई०मे आपने वकालत पास कर ली। कुछ दिनो शाहजहाँपुरमे वकालत करनेके बाद राजस्थानकी सरोदी रियासतमे जुडीशियल आफीसर हो गये। वहाँसे रिटायर होकर जोधपुरमे स्पेशल मजिस्ट्रेट नियुक्त हुए और मृत्युपर्यन्त १९२६ ई० तक वही रहे।

प्रारम्भमे आपने 'हाली'से मशवरये-सुख़न लिया। बादमे आप दागके शिष्य हो गये, और उनकी सेवामे रहनेका भी आपको सौभाग्य मिला। जब ३६ वर्ष निरन्तर शायरी करते हुए हो गये और एक भी शेर आपने किसी पत्र-पत्रिकामे छपने नही भेजा। तब आपके इष्ट-मित्रोने किसी तरह आपसे कलाम लेकर प्रकाशित कराया। ब-मुश्किल ५३ वर्षकी आयु होनेपर आपका पहला दीवान प्रकाशित हुआ। खेद है कि

हमे आपका दीवान दस्तयाब नही हो सका। यहाँ हम बहार कोटी द्वारा सकलित 'शायर' जून १९४४मे प्रकाशित अशआरमेसे चन्द शेर दे रहे हैं—

असर दुआका न हो, जहरकी तो हो तासीर।
कोई सबील तो निकले क़ज़ाके आनेकी।।

दिल दिया, दर्द दिया, दर्दमें लज्जत दी है।
मेरे अल्लाहने क्या-क्या मुझे दौलत दी है।।

दी कसम वस्लमे उस बुतको खुदाकी तो कहा—
"तुझको आता है ख़ुदा याद हमारे होते?"

सच है 'बेख़ुद'से क्या मिले कोई।
आदमी-आदमीसे मिलता है।।

हमीं ने मसलहतन की तलबमें कोताही।
असर तो दौडके आता जो हम दुआ करते।।

गैर अच्छा ही सही, 'बेख़ुद' निकम्मा ही सही।
आप ऐसा ही समझते हैं तो ऐसा ही सही।।

नाज़ाँ है इसपै वोह कि बड़े बे-वफा हैं हम।
अब बेवफाइयोका गिला कोई क्या करे?

किस आजिजीसे हमने कहा—"बेकरार हैं"।
किस बेरुख़ीसे उनने कहा "कोई क्या करे?"

क्या हश्र किया है, निगहे-शर्मने बरपा।
इतना तो कोई आँख उठाकर जरा देखे।।

रंज हो, दर्द हो, वहशत हो, जुनूँ हो, कुछ हो।
आप जिस हालसे खुश हो, वहीं हाल अच्छा है॥

उदूसे बज़्ममें तुम तो इशारा कर बैठे।
हमारे मुँहसे भी नाले अगर निकल जाते?

७ जून १९५२ ई०]





'नूह' नारवी

१८७६ ई०

नूह साहब मिर्जा दागके ख्यातिप्राप्त शिष्योमे-से है, उन्हीके रगमें शेर कहते है। वही टकसाली, चुस्त और मुहावरेदार भाषा, वही रगीनी और शोखी, वही बातमे बात पैदा करनेका हुनर, वही परम्परागत भाव, जो दाग स्कूलकी विशेषता है, आपके कलाममे पाई जाती है। आपके 'सफीनये-नूह' और 'तूफाने-नूह' दो दीवान प्रकाशित हो चुके है। तीसरा दीवान मुद्रणकी प्रतीक्षामे है। आपके ४००के लगभग शिष्य है।

उनमेसे कितने ही शिष्योके कलाम प्रकाशित हो चुके है और वे भी अनेक शिष्योके उस्ताद है। गोया 'नूह' साहब सैकडो शायरोके दादा उस्ताद है। श्री सुखदेवप्रसाद 'बिस्मिल' इलाहाबादी आपके ही योग्य शिष्योमे-से है।

'नूह' साहब मुद्दतो उस्तादके पास हैदराबाद रहे है, और अपनेको उनका जाँनशीन कहते है।

आपका जन्म १८ सितम्बर १८७६ ई०मे हुआ। इलाहाबाद ज़िलेके नारागाँवके आप रईस है। यह गाँव १८५७ ई०के विप्लवमे खैरख्वाही करनेके एवजमे अग्रेजी सरकारसे आपके पिताको मिला था। वार्षिक आय दस हज़ार रु० है। आपने अरबी-फारसीके अतिरिक्त अग्रेजी शिक्षा भी प्राप्त की है।

'नूह'की आँखोंसे निकले सैकड़ो तूफाने-अश्क ।
उसका रोना भी है तो दरियादिलीके साथ है ॥

फलकके पार होती है, कलेजेमें उतरती है।
हमारी एक-इक फरियाद दो-दो काम करती है ॥
हमारा दिल हो या उनकी जबाँ, दोनो ही आफत हैं।
यह सब कुछ कर गुजरता है, वह सब कुछ कह गुजरती है ॥

बयानेगमका कोई कद्रदाँ नहीं मिलता।
मुझीको लोग सुनाते हैं दास्ताँ मेरी ॥

निगाहे-गौरसे सैयाद उसको देखते हैं।
हिलाले-ईद है, क्या शाखे-आशियाँ मेरी ?

खारे-सहरा खुद कफे-पासे अलग हो जायेंगे।
आप वोह काँटा निकालें जो हमारे दिलमें है ॥

बाद मरनेके भी दिल लाखो तरहके गममें है।
हम नहीं दुनियामें लेकिन एक दुनिया हममें है ॥

जो न दिनको पास आया, जो न ठहरा रातको।
है उसीका जिक्र, उसीकी याद सोते-जागते ॥

खुदाके डरसे तुमको हम, खुदा तो कह नहीं सकते।
मगर लुत्फे-खुदा, कहरे-खुदा, शाने-खुदा, तुम हो ॥

गुजरती है बशरकी जिन्दगी किस-किस तव्वहुममें।
जो ऐसे हो तो ऐसा हो, जो ऐसा हो तो, ऐसा हो ॥

तुम्हारे वादयेफरदापै क्योकर एतबार आये ?
कभी कुछ हो, कभी कुछ हो, कभी क्या हो, कभी क्या हो ॥

हजारो शोखियाँ, फिर शोखियोमे सैकड़ों गमजे ।
तुम्हे दुनियासे क्या मतलब कि तुम खुद एक दुंनिया हो ।।

मेरी तदबीरने मुझको मेरी तकदीरपै टाला ।
मगर अब देखिये तकदीर क्या तदबीर करती है ।।

उसे सौ तरहका खयाल है, हमें सौ तरहका लिहाज है ।
कही आये क्यों, कही जाये क्यो ? कहीं आयें क्या, कहीं जायें क्या ?

तुम्हारी तमन्ना भी क्या दिलनशीं है ?
वहीं थी जहाँ है, जहाँ थी वही है ।।

वोह लिये जाते है दिलको अपने साथ ।
देखता जाता है मेरा दिल मझे ।।

नब्ज साकित, सर्द जिस्म, अहबाब चुप, हैराँ तबीब ।
अब मेरे अल्लाहको कुछ और ही मंजूर है ।।*

लडखड़ाकर कभी कदमोंपै जो साकीके गिरे ।
फेककर जामो-सुबू, उसने सम्भाला हमको ।।

और तो उलफ़त न निभनेका सबब कोई नहीं ।
या बुराई आपमें है या बुराई हममें है ।।

ब जाहिर तो हमारे इश्ककी तारीफ होती है ।
समझते हैं वोह जैसा दिलमें, उसको हम समझते हैं ।।

---

*उन्हे हिजाब, उदू शादमाँ, अजीज निढाल ।
मेरा जनाजा भी कोई उठायगा कि नहीं ?
—सीमाब अकबराबादी

शमअ़के सर भी मुसीबत आई परवानेके साथ।
कर दिया दोनोंको उसने अपनी महफ़िल्से अलग ॥

आजकल १ नवम्बर १९४५ ई०

वफ़ा-ओ-मेहरके[1] बाद आपका मग़रूर[2] हो जाना।
यह ऐसा है कि जैसे पास होकर दूर हो जाना ॥

क्योंकर बसर हुई शवेफ़ुरकत न पूछिये।
सब मुझसे पूछिये, यह हकीकत न पूछिये ॥*

असीराने-क़फ़सको वास्ता क्या इन झमेलोंसे।
चमनमें कब खिज़ाँ आई, चमनमे कब बहार आई ॥

आप हैं, हम हैं, मय है, साक़ी है।
यह भी एक अम्र[3] इत्तफ़ाकी है ॥
हो गई ख़त्म हिज्रकी घड़ियाँ।
और थोड़ी-सी रात बाक़ी है ॥

दिल है तो उसीका है, जिगर है तो उसीका।
अपनेको रहे-इश्कमें बरबाद जो कर दे ॥

यह मैं तस्लीम करता हूँ कि इससे तुमको नफरत है।
मगर इतना समझ रक्खो मुहब्बत फिर मुहब्बत है ॥

---

[1]नेकी और कृपाके, [2]अभिमानी, [3]घटना।

*इसी काफ़िये और बहरमे तस्कीन कुरैशीने क्या खूब शेर कहा है—

कुछ और पूछिये यह हकीकत न पूछिये।
क्यो आपसे है मुझको मुहब्बत, न पूछिये ॥

हम उनसे क्यो कहें आजारे-दुनिया[1] मुल्तवी कर दो।
तबीयत रफ़्ता-रफ़्ता खूगरे-ग़म[2] होती जाती है॥

हर सदाये-इश्कमें एक राज है।
नालये-दिल गैबकी पहचान है॥

कुछ न कहना भी किसीके सामने।
इक तरहका इंकशाफ़े-राज[3] है॥
इश्कने दिलको पुकारा इस तरह।
मैं यह समझा आपकी आवाज है॥
उनसे मिलकर मैं उन्हीमें खो गया।
और जो कुछ है, वह आगे राज[4] है॥
हुस्नके जलवोको अपने दिलमें देख।
लनतरानी दूरकी आवाज है॥

कब्रोके मनाजिरने करवट न कभी बदली।
अन्दर वही आबादी, बाहर वही वीराना॥

वोह नादिम[5] हुए कत्ल करनेके बाद।
मिली जिन्दगी मुझको मरनेके बाद॥
रहा जिन्दादरगोर[6] मरनेसे कब्ल[7]।
खुदा जाने क्या होगा मरनेके बाद॥

अब और इससे सिवा हालेजार क्या होगा?
वोह मुझको देखने आये, मगर न देख सके॥

---

[1]ससारके दुख, [2]दुखोकी अभ्यस्त, [3]भेदका प्रकट करना; [4]भेद। [5]शर्मिन्दा; [6]जीवित ही मृतकके समान, [7]पूर्व।

हम बड़ी देरसे यह देखते हैं।
इस तरफ़ कोई देखता भी नहीं॥

—निगार जनवरी १९४१ ई०

सिवा इसके दुनियामें क्या हो रहा है।
कोई हँस रहा है, कोई रो रहा है॥
अरे चौंक यह ख्वाबे गफ़लत कहाँतक ?
सहर हो गई और तू सो रहा है॥

सितम अपने ही अहले-इश्को-वफ़ापर।
यह क्या कर रहे हो, यह क्या हो रहा है ?
मुझी तक नहीं ज़ुल्म महदूद तेरा।
मेरे साथ सारा जहाँ रो रहा है॥

—आजकल १५ अगस्त १९४९ ई०

कुछ मजाकिया कलाम—

अहले मशरिकसे नहीं करते वोह बात !
अहले मगरिबकी यही पहचान है॥
रोज़के चन्दोसे आजिज़ आ गये।
लीजिये हाज़िर हमारी जान है॥

रेलपर कुर्बान, होटलपर निसार।
बाप-दादाकी कमाई हो गई॥
पास आयाके जो मैं आया-गया।
ख़ानसामासे लड़ाई हो गई॥

पहले लेते थे ख़बर अख़बारसे।
अब वोह् लेते हैं ख़बर अख़बारकी॥
हैटको मिलने लगी सरपर जगह्।
ख़ैर मॉंगो शेख़जी दस्तारकी॥

—आजकल १ नवम्बर १९४५ ई०

२ मई १९५२]



'अहसन' मारहरवी

[१८७६–१९४० ई०]



सैयद अलीहसन, मारहरह जिला एटा निवासी थे। आपका जन्म ई० स० १८७६मे और निधन ३० अगस्त १९४०मे हुआ। १८९४ ई०मे आप मिर्ज़ा 'दाग'के शिष्य हुए। प्रारम्भमे पत्र-व्यवहारद्वारा अपना कलाम सशोधन कराते रहे, वादमे उस्तादके चरणोमे रहनेका भी काफी अर्से सौभाग्य प्राप्त हुआ।

उस्तादके पास हैदराबादमें रहते हुए, आपने उस्तादका जीवन-चरित्र "जलवये दाग" लिखा। उस्तादकी मृत्युके वाद आप वहाँसे चले आये। 'कुलियातेवली' और 'तारीखेनस्रे उर्दू' आपके दो ग्रथ प्रकाशित हो चुके हैं। आपने अत्यन्त परिश्रम करके उस्तादके वृहत चारो दीवानोका सक्षिप्त संकलन किया था। खेद है कि वह आपके जीवनकालमें प्रकाशित न होकर एक वर्ष बाद प्रकाशित हुआ।

आपका सरमायये-कलाम और शिष्य वहुत है। अफसोस है कि अभीतक आपका दीवान प्रकाशित नही हुआ। 'मुन्तखिवेदाग'मे आपके १५०के करीब अशआर परिचयके साथ दिये हुए है। उन्हीमेंसे चन्द यहाँ दिये जा रहे है।

अहसन पुराने उस्तादोमे-से थे, मगर कलाम वही दाग स्कूलके नमूने-

का पुराने ढर्रेका है। हम उनका कलाम सनवार दे रहे हैं, इससे मालूम होगा कि उनके कलाममे उत्तरोत्तर विकास और परिवर्तन होता गया है।

१८९५ से १९०५ ई० तकके प्रारम्भिक चन्द शेर—

ऐसे दीदारमें मजा क्या था?
न सुना कुछ, न कुछ कलाम किया।
उस तरफ़ आँखने उसे देखा।
इस तरफ दिलने अपना काम किया॥
वस्लकी शबका इन्तज़ार न पूछ।
हमने मर-मरके दिन तमाम किया॥

१९१०के लगभगका कलाम—

न दफ्तर खोल तू ऐ नामाबर! इतना बता मुझको।
गया था जिस गरजसे तू वहाँ वोह बात भी ठहरी॥
कयामत भी उसी दिन 'अहसन' अपना सर उठायेगी।
हमारी साँस जिस दिन चलते-चलते इक घड़ी ठहरी॥

दिल गया है जरूर उनके साथ।
क्यो गया यह ख़बर नहीं मुझको॥
कब्रमे भी तो मरके पहुँचा हूँ।
रास कोई सफर नही मुझको॥

बहुत बढ़-चढ़के दावे चौदहवींका चाँद करता है।
तुम्हे मेरी कसम उठना, जरा तुम भी सँवर जाना॥
कलाई जिनकी शाखे-गुल है, वोह क्या तेग उठायेंगे।
उठायें भी तो क्या उन फूलकी छडियोसे डर जाना?

क्या करे उम्रे-दोरोज़ामें कोई सैरे-जहाँ?
खेल है खत्म खुद अपना ही, तमाशा किसका?

आये तो तेरा जिक्र किसीकी जबानपर।
हो गैर भी तो चूम लूं मुँह इस बयानपर॥

१९२३का कलाम—

सगेदर[1] बनकर भी क्या हसरत[2] मेरे दिलमें नहीं।
तेरे कदमोमें हूं लेकिन, तेरी महफ़िलमें नहीं॥

रोक ले ऐ जब्त ! जो आँसू कि चश्मेतरमें है।
कुछ नही बिगड़ा अभी तक घरकी दौलत घरमें है॥

लोग महफिलमें तुझे ऐ इशवागर देखा किये।
हम अलग बैठे हुए सबकी नजर देखा किये॥
हमने देखा एक ही शब ख्वाब उनके वस्लका।
और ताबीर उसकी दुश्मन उम्रभर देखा किये॥
देखना तदबीरेमंजिल वहशयाने-इश्ककी !
करके वीराँ अपने घरको उनका दर देखा किये॥

न सही कब्रमें आकर मुझे राहत न सही।
तेरे चक्करसे तो ऐ गर्दिशेदौराँ ! निकला॥

१९२४का कलाम—

दिल इधर है पजमुर्दा, जाँ उधर है अफसुरदा।
किसको इन हवादसपर ऐतबारे-हस्ती है ?

देखते और वोह क्या, हाले-मरीजे-वहशत।
जाँ-ब-लब देख लिया, खाक-ब-सर देख लिया॥

---

[1]दरका पत्थर; [2]अभिलाषा।

न मिली सैले-हवादससे कहीं मुझको पनाह ।
मैंने साहिलको भी ब-दीदयेतर देख लिया ।।

ज़माना बदलता रहा लाख चालें ।
मगर फ़र्क़ आया न उनके चलनमें ।।
यह है मरके भी शर्मे-इसयाँका आलम ।
कि हम मुँह लपेटे पड़े हैं कफ़नमें ।।
हुआ चाक जिस वक़्त दामानेहस्ती ।
लगा फिर न पेवन्द इस पैरहनमें ।।

दुनियाकी ऐवगोई, ऐ इश्क़ ! तूने देखी !
आबादियोंको तेरी वीराना कह रही है ।।

पयाम आया न ख़त आया, न वोह आये, न मौत आई ।
मेरी सइयेतलब सब रायगाँ मालूम होती है ।।
मज़े ले-लेके ज़िक्रे-हूरो-गिलमाँ शेख़ करते हैं ।
तबीयत पीरेमुरशदकी जवाँ मालूम होती है ।।

खुल गया, ख़ाली हवाबन्दी है राज़े-ज़िन्दगी ।
यानी इकतारे-नफ़स है, नग़मासाज़े-ज़िन्दगी ।।

कभी सुलह हो, कभी जंग हो, कभी संग हो, कभी मौम हो ।
जो यह हर घड़ी तेरा ढंग हो, तो हो कौन ऐसी अदासे ख़ुश ।।

१९३६का कलाम—

बड़े नाफ़हम हैं, वोह जो उन्हे क़ातिल समझते हैं ।
हम उनकी दिल-सताईको हयाते-दिल समझते हैं ।।
मआलिम ही सही वाबस्तगी तो उनसे क़ायम है ।
ग़नीमत है कि वोह हमको किसी क़ाबिल समझते हैं ।।

खुदावन्दाने-उल्फतका भी उलटा कारखाना है।
कि खुद दिल माँगते हैं, और हमें साइल समझते हैं ।।

खुदकशीका शबेगम तजरुबा करने न दिया।
मौतने वक़्तसे पहले मुझे मरने न दिया ।।

फना वगैर बकाका मजा नहीं मिलता।
खुदी मिटाओ न जबतक खुदा नही मिलता ।।

किसीको भेजकर खत, हाय ! कैसा यह अताब आया।
कि हर इक पूछता है "नामाबर आया, जवाब आया" ?

जमाकर हुस्ने-बेपरवाने सिक्का वेनियाजीका।
चलन उठवा दिया कम-हिम्मतोसे इश्कबाजीका ।।

जबीं काबेमें रख दी या सरे कूए-बुताँ रख दी।
गरज अब उठ नहीं सकती, जहाँ रख दी, वहाँ रख दी ।।

अन्तिम गज़ल, जो उन्होने जुलाई १९४०मे कही, उसके चन्द अशआर–

दामनोको बाँध लेते क्यो गिरेवानोके पास ?
अक्ल अगर होती गिरहकी तेरे दीवानोके पास ।।
वस्लमें भी सोजे-फुरकतका मजा जाता नहीं।
शमा रो-रोकर जला करती है परवानोके पास ।।
दब सकी पस्ती बुलन्दीकी, जबरदस्तीसे कब ?
झोपड़े अक्सर नजर आते है ईवानोके पास ।।
तेरे दीवानोका आबादीमें जी लगता नहीं।
बस्तियाँ उनकी बसा करती है वीरानोके पास ।।

२७ मई १९५२ ई०]

नसीम भरतपुरी

[१८५९—१९०९ ई०]

सैयद शबीरहुसैन जाफरी 'नसीम'के पिताका नाम मीर इल्तमास हुसेन था। आप भरतपुर निवासी और मिर्जा दागके शिष्य थे और उनके रगमे बहुत खूब कहते थे। हमे खेद है कि प्रयत्न करनेपर भी आपका दीवान हमे प्राप्त नही हो सका। मालूम हुआ है कि आपका एक दीवान प्रकाशित हुआ था। न किसी तज़किरेमे ही आपका परिचय और कलाम दिखाई दिया। सौभाग्यसे अध्ययन करते हुए जनाब मुहम्मद बशीर साहबका डेढ पृष्ठका लेख 'आजकल'के १ सितम्बर १९४५के अकमे दिखाई दे गया, उसीसे परिचय और कलाम यहाँ दिया जा रहा है।

नसीमका व्यक्तित्व कैसा था, इसका कुछ अन्दाजा उनके इस मक्तेसे लगाया जा सकता है—

रईसज़ादा था, बावज़अ़ था, मुहज्ज़ब था।
तुम्हे 'नसीम'से कुछ तो कलाम करना था॥

नसीम बलाके ज़हीन और तेज़ थे। अरबी-फारसीकी शिक्षा आपने शीघ्र ही प्राप्त कर ली। मिर्जा 'दाग' उन दिनो रामपुरमे कयाम फर्माते थे, तभी आप १८७६ ई०मे पत्र-व्यवहार द्वारा उन्हे अपना गुरू बनाकर ग़ज़लोपर सशोधन लेने लगे।

मिर्ज़ा दागको होनहार शिष्यकी तेज़ तबीयत भाँपते देर न लगी और उन्होने आपको अपने पास रामपुर बुला लिया।

वहाँ एक रोज़ ख्वाजा 'कलक'ने नसीमसे अपना कलाम सुनानेकी

फर्माइश की। नसीम सगलाख जमीनोके आशिक थे। उन्होने अपनी ताजा गजल—'मिनकार चुटकीमे' सुनाई—

नहीं करते उन्हे कुछ देर लगती है, न हाँ करते।
अभी इनकार चुटकीमें, अभी इकरार चुटकीमें॥

कलकको शक हुआ कि यह गज़ल 'नसीम'की नही है। दागने शागिर्द-का दिल बढानेके लिए दे दी है। नसीमसे और दो-चार शेर इसी जमीनमे कहनेकी फर्माइश की। उन्होने फिलवदी एक और गजल 'चुटकीमे' वही कहकर पढी—

हकीकत कबक[1]-ओ-ताऊसे[2] गुलिस्ताँकी भला क्या है?
कयामतको उड़ाती है तेरी रफ़्तार चुटकीमें॥
लिया था इस जमींमें, इम्तहाने-तबअ् यारोने।
किये मौज़ूं यह हमने ऐ 'नसीम'! अशआ़र चुटकीमें॥

इस फिलवदी गजलकी 'अमीर' मीनाई, 'मुनीर' शिकोहाबादी, और 'कलक'ने बेहद तारीफ की। जौहर-शनास उस्तादने बहुत कद्रकी नज़रसे शागिर्दको देखा और उसकी हिम्मत बढाई।

दागने जब हैदराबादसे अपना दीवान 'महताबे दाग' प्रकाशित करना चाहा तो 'नसीम'को भरतपुरसे हैदराबाद बुलाकर उसकी तरतीबका कार्य आपके सुपुर्द कर दिया था। 'दाग'की ख्यातिसे कुढ कर जब कुछ ईर्ष्यालुओने आलोचनात्मक हमले किये तो अकीदतमन्द शागिर्द 'नसीम'ने सीनासिपर होकर बडे दन्दानशिकन जवाब दिये और इन ऐतराज़ोके जवाबमें 'ताज़याना' नामक पत्रका प्रकाशन शुरू किया। कहते है कि एक मर्तबा किसीने कहा कि 'अमीर' मीनाईके शागिर्दोमे 'रियाज' खैराबादीका जवाब

---

[1]चकोर; [2]मोर।

नही है तो 'दाग'ने मुसकराकर नसीमकी तरफ देखा और कहा—"मेरा रियाज नसीम" है। हैदराबादमे एक बहुत मार्केका मुशायरा हुआ। मिसरा इस तरह था—

यह चोटी किस लिये पीछे पड़ी है ?*

मिर्जा दागने अपने एक ख़तमे लिखा था—"तमाम शहरने इसमे गज़ल कही है। लखनऊतकसे गजले चली आ रही है।" 'नसीम'ने भी गजल कही। सुनते हैं यह गज़ल दागने अपनी गज़लके साथ 'अमीर' मीनाईको लखनऊ भेजी थी—

वोह आयें ऐसी उनको क्या पड़ी है ?
यह तूने दिलसे ऐ कासिद ! घड़ी है ॥
बुरा है इश्क यह मै जानता हूँ।
मगर नासेहसे जिद-सी आ पड़ी है ॥

मर्सियेगोईमे भी 'नसीम'ने अपने खूब जौहर दिखलाये है, अफसोस है कि मर्सियेका दीवान अभीतक प्रकाशित नही हो पाया है ।

नसीम निहायत खलीक और बावज़अ आदमी थे। रियासत भरतपरमें

---

*इस मिसरेपर 'रियाज़' खैराबादीने यह गिरह लगाई थी—

रहे सीना तना लंगरसे इसकी।
यह चोटी इसलिये, पीछे पडी है ॥

[पतगमे वाज दफा नीचेकी तरफ़ कपडेकी धज्जी-सी वाँध देते है, ताकि पतंग हवाके रुख़पर ठीक तनी रहे। उसी ख़यालको किस खूबीसे रियाज़ने वाँधा है।]

सब इन्सपेक्टर पुलिस थे। आपका इन्तकाल १९०९ ई०मे हो गया था। 'नसीम'ने अपने उस्तादके प्रति कृतज्ञता इन शब्दोमे व्यक्त की है—

आ गया और ही कुछ रंग तबीयतमें 'नसीम'!
हाथ जब 'दाग़' सुख़नसज-सा उस्ताद आया॥

इस मक़्तेको पढकर ही सम्भवत सर इकबालने यह शेर कहा होगा—

'नसीम'-ओ-'तिश्ना' ही 'इकबाल' कुछ इसपर नहीं नाज़ाँ।
मुझे भी फ़ख़्र है शागिर्दिये-दाग़े-सुख़नदाँपर॥

नसीम भरतपुरीके चन्द चुने हुए शेर दिये जा रहे हैं—

ग़ैरके घर हैं वोह मेहमान, बड़ी मुश्किल है।
जान जानेके हैं सामान, बड़ी मुश्किल है॥

सुबह चलना कूए-जानाँमें 'नसीम'!
अब यह क्या मौका है? आधी रात है॥

वफ़ा अग़यार तुमसे क्या करेंगे?
जो यह होगी तो कुछ होगी हमीसे॥

ख़तमें उसने ग़ैरका लिक्खा सलाम।
यह भी लक्खा था मेरी तकदीरमें॥

आप नाराज़ न हो, आपका कुछ जिक्र नहीं।
अपने दिलसे है गिला आपसे किस्सा क्या है?

तुम सुनोगे उसे? तुम सुनके तसल्ली दोगे?
व्वाह, क्या ख़ूब! कहूँ तुमसे फसाना दिलका!!

कल दाम भीक माँगके भी देंगे साक़िया !
पिलवादे बहरे-साक़िये-कौसर उधार आज ॥

क़यामत भी क़ल आई जाती है ऐ हज़रते वाइज़ !
तुम्हे अल्लाह हूरें बख़्श देगा, हम भी देखेंगे ॥

ख़ुदा-ख़ुदा करो मैं कब गया था मस्जिदमें ?
मुझे लगाओगे इलज़ाम पारसाईका !!

'नसीम' ! मैंसे उज़र इस कदर, जवानीमें ।
डरो ख़ुदासे, यह है अहद पारसाईका ?

लज़्ज़ते-जौर ख़ुदाकी कसम अहसाँमें नहीं ।
जो मज़ा तेरी 'नहीं'में है, तेरी 'हाँ'में नही ॥

न मौअज़्ज़नका[1] है खटका, न गजरका धड़का ।
यह शबेवस्लके झगड़े, शबे हिजराँमें नही ॥

क्या बताऊँ कि ख़ुदा जाने जवानी क्या थी ?
जागते-जागते एक ख़्वाब मगर देखा था ॥

तर्के-उल्फ़तका ग़म उधर भी है ।
कलसे चुप-चुप वोह फ़ित्नागर भी है ॥

हिज्रमें जानसे जाना है निहायत आसाँ ।
इसमें जीना ही मेरी जान बडी मुश्किल है ॥

१४ मई १९५३ ई०]

---

[1] अज़ान देनेवालेका ।

हुस्न बरेलवी

[१८५५—१९०७ ई०]

हाजी मुहम्मद हुस्नरजाखाँ साहब 'हुस्न' १८५७ ई०मे पैदा हुए। आपके पूर्वज दिल्लीके रहनेवाले थे, किन्तु फिर स्थाई रूपसे बरेलीमे बस गये। मिर्जा 'दाग' जब रामपुरमे कयाम फर्माते थे, तब आप उनके शिष्य हुए, और प्रत्येक वर्ष एक-दो मास उस्तादकी सेवामे रहते थे। १९०७ ई०मे आपका निधन हो गया। खुमखानये-जावेद भाग २से कुछ अशआर चुनकर दिये जा रहे है—

क्यो दिलेजार ! मुहब्बतका नतीजा देखा ?
दर्दे-फुरकतका कोई पूछनेवाला देखा ?
बस रुखेयारसे उठता हुआ परदा देखा।
फिर खबर ही न रही, क्या कहे फिर क्या देखा ?
कान वोह कान है, जिसने तेरी आवाज सुनी।
आँख वोह आँख है, जिसने तेरा जलवा देखा॥

मै क्या पूछूँ कि है मेरी खता क्या ?
अताबे-बेसबबका पूछना क्या ?

जरा आहे-पुरदर्दसे बचते रहना।
नहीं दिल्लगी दिल दुखाना किसीका॥

जलवेकी रोक-थाम करेगा हिजाब क्या ?
दरियाके आगे आबेरवाँकी नकाब क्या ?

ऐसेसे दिलका हाल कहें भी तो क्या कहें ?
जो वे कहे, कहे कि "चलो बस सुना, सुना" ।।

दर्दे-उलफतमें जिन्दगी कैसी ?
मौतका कौन चारागर[1] होगा ।।

मौत भी क्या जाने कुछ बीमार हैं ।
क्यों नहीं आती तेरे बीमारतक ।।

जबाने रुक गईं, सर झुक गये, ख़ैरा[2] हुईं आँखें ।
नकाब उलटे हुए कौन आ गया महशरके मैदाँमें ।।

'हुस्न' इस आहके, इस आहकी तासीरके सदके ।
मुझे दरसे उठाने घरसे वोह बाहर निकलते हैं ।।

वोह हुस्न है कि कब्जा करे दो जहानपर ।
वोह इश्क है कि कुछ न रहे अख्तियारमें ।।

दिलमें ख़यालें-आरिजे-पुरनूरे-यार[3] है ।
हम शमअ़ लेकर आये हैं, अपने मजारमें ।।

मर्गेआशिककी जो मानें मिन्नतें ।
वोह मेरे मरनेका मातम क्या करें ?
दे दिया है सब अतिब्बाने जवाब ।
तुम न कह देना कही, "हम क्या करें ?"

ख़ुद मुआलिजकी[4] जरूरत है मुआलिजको मेरे ।
मेरे नुस्ख़ेमें कहीं शरबते-दीदार नहीं ।।

---

[1]चिकित्सक; [2]चकाचौंध; [3]प्रेयसीके प्रकाशमान कपोल; [4]चिकित्सककी ।

हुस्न बरेलवी

सब हसी एक ही आदतके हुआ करते हैं
फूल भी नाल-ए-बुलबुलपै हँसा करते हैं ।।

बन सँवरकर नाशपै[1] आये तो हैं ।
इससे बढ़कर वोह मेरा गम क्या करें ?

मेरे लाशेपै[2] वोह किस वास्ते बैठे हैं मुँह ढाँके ।
कोई पूछे तो अब भी क्या मुझे जिन्दा समझते हैं ?

लोग कहते हैं उदूसे दोस्ती अच्छी नहीं ।
क्या यह आदत आपके नजदीक भी अच्छी नही ।।

मौत अच्छी है, जो दम निकले तुम्हारे सामने ।
आँखसे ओझल हो तुम तो जिन्दगी अच्छी नही ।।

दोनों हाथोसे कलेजा थामे बैठा है 'हुस्न' ।
या खुदा अब कौन पकड़े दामने-दिलदारको ।।

मैं से मैंने कब की तौबा ?
तौबा, तौबा ! कैसी तौबा ?

मैं जानता था मेरी ही उलफतकी हद नहीं—
लेकिन तुम्हारे जुल्म भी हदसे गुजर गये ।।

उस बदगुमानने यह कहा मेरी लाशपर ।
"अल्लाहरे फरेब कोई जाने मर गये ।।"

दिलमें तुम, आँखोमें तुम, छुपते हो फिर किस वास्ते ?
तुमको शर्म आती नहीं, आशिक़से शर्माते हुए ।।

---

[1]लाश पै,   [2]अर्थी पै ।

जाँ-ब-लब हूँ इक नज़रके वास्ते आँखें न फेर।
जानेवाले इक नजर फिर देख ले जाते हुए ॥

देख आओ मरीज़े-फ़ुरक़तको।
रस्मे-दुनिया भी है, सवाब भी है ॥

कहो तो हमसे भी ख़तका जवाब क्या आया ?
'हुस्न' ! जो आज क़दम तुमने नामाबरके लिये ॥

वोह अगर याद करे हमको तो भूलें किसको ?
हम अगर उनको भुलायें तो किसे याद करें ?

हज़रते ज़ाहिद तुम्हे जन्नत दिखा लायेंगे रिन्द।
फूल खिलने दीजिये चश्मे उबलने दीजिये ॥

कैसके हालको सुन-सुनके जिगर फटता है।
साथ खेलेकी मुहब्बत भी बुरी होती है ॥
आपकी ज़िदने मुझे और पिलाई हज़रत !
शेख़जी इतनी नसीहत भी बुरी होती है ॥

२३ मई १९५३ ई०]

हैरत

[१८६०—ई०]

सैयद इनायत अहमद 'हैरत' ग्वालियरमे १८६० ई०में जन्मे। 'दाग'के शिष्य थे। आपका वहुत-सा कलाम नष्ट हो गया। चन्द गजले बची हैं। उनमेसे चन्द शेर 'खुमख़ानये-जावेद' भाग २ से चुनकर दिये जा रहे हैं—

बडा ही तीर मारा आँख उठाकर मुझको क्या देखा ?
यह कुछ मिन्नत है मिन्नतमें, यह कुछ अहसाँ है अहसाँमें ?

खुली आँखें तो आँखे बन्द हो जानेका वक़्त आया।
मुझे जिन्दा जभीतक जानियो, जबतक कि ग़ाफ़िल हूँ ॥

हुए जाते हैं बाहर आप तो जामेसे गुस्सेमे।
अगर इस तरह कोई देख ले फरमाइये क्या हो ?

गैरको आने न दूँ, तुमको कहीं जाने न दूँ।
काश मिल जाये तुम्हारे दरकी दरबानी मुझे ॥

क्या अब न होगी मेरी तरफको निगाह भी।
आख़िर कोई ख़ता भी है, कोई गुनाह भी ॥

चाहा तुम्हे, ख़ता हुई, फरमाइये मुआफ।
होता है आदमी ही से आख़िर गुनाह भी ॥

बेतरह घातमें हैं दुज़दे-निगाह[1]।
कुछ इधरका उधर न हो जाये॥
है क़यामतकी धूप महशरमें।
खुश्क दामाने-तर न हो जाये॥

—२३ मई १९५३ ई०]



[1]छुपी नज़रोंसे देखना।

रसा

[१८७५—१९२३ ई०]

मुंशी हयातबख्श 'रसा' मुस्तफाबाद जिला बुलन्दशहरके रहनेवाले थे। १८७५ या ७४के लगभग पैदा हुए। ४८-४९ वर्षकी आयुमें निधन हो गया। 'खुमखानये जावेद' भाग ३से आपके चन्द अशआर चुनकर दिये जा रहे हैं—

आप-सा कोई नहीं दुनियामें।
आपने यह तो सुना ही होगा॥

जानेकी जो ज़िद है तो मुझे जहर दिये जा।
इतना तो कहा मानले, इतना तो किये जा॥

मेरी फरियादपै अनजान बनकर मुसकराते हैं।
कयामतमें वोह इस अन्दाजसे झूठा बनाते हैं॥

पीके कर लेता हूँ तौबा जबसे यह दस्तूर है।
दिल भी रोशन है मेरा मुँहपर भी मेरे नूर है॥

सुनाया हालेदिल उनको तो यूँ मुँह फेरकर बोले—
"किसीने मुँह लगाया, छेड़ बैठे दास्ताँ दिलकी॥"

उनकी यह ख़ूबिये अख़लाक कि वादा तो किया।
मेरी यह शूमिये-तकदीर[1] कि ईफा[2] न हुआ॥

---

[1]भाग्यहीनता; [2]पूरा।

सजदोंका भी मौका न रहा अहले-वफ़ाको।
फिर-फिरके मिटाते हैं, वोह नक़्शे-कफ़े-पाको ।।
यूँ हमने छुपाई है तेरे वस्लकी हसरत।
जिस तरह छुपाता है, ख़तावार ख़ताको ।।

उनतक तो रसाई नहीं कहनेको 'रसा' है।
कम्बख़्तने यह नाम भी बदनाम किया है ।।

वफ़ा करते हैं हम, फिर भी हमें तुमसे नदामत है।
इसे कहते हैं, उल्फ़त, बन्दापरवर यह मुहब्बत है ।।

मुझे कुछ और भी कमबख़्तके सिवा कहिये।
कि यह तो लफ़्ज़ अजलसे मेरे ख़िताबमें है ।।

बड़ी ही धूमसे दावत हो फिर तो ज़ाहिदकी।
यह मय जो चार घड़ीको हलाल हो जाये ।।

—२३ मई १९५२ ई०]



ज़ाहिद

अहसान रामपुरी

[१८४८—१९०८ ई०]

मुंशी अहसानअलीखाँ १८४८ ई०मे उत्पन्न हुए। अरबी-फारसीकी अच्छी योग्यता रखते थे। मिर्ज़ा 'दाग'के शिष्य थे। उनके रगको निभानेका भरसक प्रयत्न किया। आपने काफी पुस्तके लिखी, परन्तु आपके निधनके बाद उत्तराधिकारियोने बाज़ारमे बेच दी। अब सिर्फ एक दीवान हस्त-लिखित शेष है। रामपुरमे आपके शिष्य बहुत थे। १९०८ ई०मे समाधि पाई।

जिस नातवाँसे नाज़ तुम्हारे न उठ सके।
किस तरह वोह उठायेगा सदमे मलालके?

झपकेगी बर्केतूरसे हरगिज़ न मेरी आँख।
जलवे निगाहमें हैं, किसीके जमालके॥

कुछ अजब हाल है जबसे उसे देखा क्या है?
हम नहीं आपमें 'अहसाँ' यह तमाशा क्या है?

शुक्रेजफाको शिकवा समझकर खफा हुआ।
लो मैंने क्या कहा, बुते बदज़नने क्या सुना॥

परदा ढक दे अजल आकर कहीं बेचारोंका।
हाल देखा नहीं जाता तेरे बीमारोंका॥

काश इससे तो बेज़बाँ होते।
हर्फे-मतलब कभी अदा न हुआ॥

क्या कहे हिज्र बुरा और विसाल अच्छा है।
यार जिस हालमें रक्खे वही हाल अच्छा है॥

दिलेर मारहरवी

सैयद अमीरहसन 'दिलेर' १८७० ई०मे पैदा हुए। पहले मुजतर खैरावादीके शिष्य हुए, बादमे मिर्जा दागके। १९१० ई०मे रामपुर रियासतमे मुलाजिम हो गये। आपने हजलियातका मजमूआ भी छोड़ा है।

रोता हूँ देख-देखके दीवारोदरको मैं।
बैठे-बिठाये आज मुझे हो गया है क्या॥

है सब खयालो-ख्वाबकी बाते यह हमनशी!
आँखोमे रह गया न कोई दिलमे रह गया॥

दम निकल जाय तो हो हिज्रकी मुश्किल आसाँ।
मौत काम आये अगर आज तो कुछ काम चले॥

अफसोस दिलका हाल कोई पूछता नही।
यह कह रहे है सब तेरी सूरत बदल गई॥

जुल्मते-शामे-जुदाई कब हटायेसे हटे।
सामने आँखोके इक दीवार होकर रह गई॥

शागल देहलवी

[१८४१—१९४० ई०]

मुहम्मद आगा 'शागल' मिर्जा 'दाग'के भाई थे, और शायरीमे उन्हीसे सशोधन लेते थे। १८४१ ई०मे उत्पन्न हुए और ९९ वर्षकी आयु पाकर १९४०मे जन्नतनशीन हुए। १८५७के विप्लवके वाद आप भी 'दाग'के साथ रामपुर चले गये थे। १८९१ ई०में आपका मर्तबा भी अमीर, जलाल, और तस्लीम-जैसे उस्तादोके वरावर समझा जाता था। आप दागके साथ हैदरावाद नही गये और रामपुरमे ही सन्तोषपूर्वक जीवन-यापन करते रहे। एक दीवान हस्तलिखित छोडा था, मगर न जाने उसका क्या हुआ ?

नीची नज़रोसे न हरइकको खुदारा देखिये।
खाकमें मिल जायगा सारा जमाना, देखिये ॥

गो तडपता है वतन जानेको जी 'शागल' मगर।
देखी है जिसकी बहार, उसकी खिज़ाँ क्या देखिये ॥

आखिर कोई हद भी तेरी ऐ उम्रे-रवाँ है ?
हर दमका सफर अव तो मुसाफिरपै गराँ है ॥

इक दिल मिला हमें, जो कभी शादमाँ नहीं।
इक दिल उन्हे मिला कि गमे दो जहाँ नहीं ॥

कयामतमें मेरा वोह मुँह तकें और खुशनिगाहीसे।
खुदाके वास्ते मैं वाज आया, दाद ख्वाहीसे ॥

शबीर रामपुरी

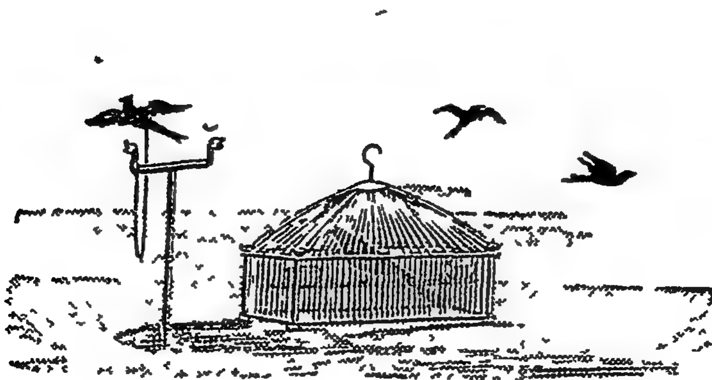
[१८८२—१९३१ ई०]

मुहम्मद शबीरअलीख़ाँ 'शबीर' रामपुरके नवाब कल्ब अलीख़ाँके साहबज़ादे थे और १८८२मे पैदा हुए थे। आप मिर्जा दागके शिष्य थे। १९३१मे मृत्यु पाई। दो दीवान हस्तलिखित छोडे थे, मगर नष्ट हो गये।

मुझसे हाले-दिले-बीमार सुनाया न गया।
जब वोह आये मेरे घर होशमें आया न गया॥

उसका शिकवेपर यह कहना, दिलमें कट जाना मेरा।
"शिकवा किस मुँहसे किया, चाहा था किस दिलसे मुझे ?"

मेरी बलासे गिरे बर्क़ या चले आँधी।
ग़म आशियाँका हो क्या, मैं जब आशियाँमें नहीं॥



क़फस

अज़मत रामपुरी

[१८५५—१९०६ ई०]

मुहम्मद अज़मतअलीखाँ 'अजमत' १८५५ ई०मे रामपुरमे पैदा हुए। मिर्ज़ा 'दाग'के शिष्य थे। ६ नवम्बर १९०६ ई०मे मृत्य पाई। हस्तलिखित दीवान छोडा था, मगर उसका पता नही।

रातें गुज़र ही जायेंगी, दिन कट ही जायेंगे।
ऐ सोज़े-हिज्र ! सब्र मुहब्बतकी जानपर ॥

वह भी निकलके सीनेसे लब तक न आ सकी।
जिस आहे-दिलगुदाज़का था आसरा मुझे ॥

'अजमत' यह बेख़ुदी नहीं बेवजह, बेसबब।
फिर याद कूए-यारकी आई हवा मुझे ॥

अब रश्केग़ैर है, न तेरी इल्तजा मुझे।
किस्मतसे मिल गया दिले-बेमुद्दआ मुझे ॥



गौहर

जुल्फकार अलीखाँ, मौलाना मुहम्मद अलीके वडे भाई हैं। आजकल रावलपिण्डीमे मुकीम हैं। 'दाग'के शिष्य हैं।

मुझे ऐ ज़ब्तेगम सर फोड़ने दे, शोर करने दे।
मुझे रो-रोके मरना है मुझे रो-रोके मरने दे ॥

दिले बीमार तेरे हल्कये गेसूसे क्या निकले।
यह है किस्मतका फन्दा जो न जीने दे न मरने दे ॥

कभी करना न तू ऐ आबे ख़ंजर तिश्ना लब हूँ मैं।
मेरे सरसे अगर पानी गुज़रता है गुज़रने दे ॥

फ़ीरोज़ रामपुरी

फीरोज़शाहख़ाँ १८६० ई०मे रामपुरमे उत्पन्न हुए। दागके शिष्य

तेरी आँखोमें है एजाजका अन्दाज़ नया।
मुझको जीने न दिया, ग़ैरको मरने न दिया॥

दर्दे-दिल सुनके उसे रहम कुछ आ ही जाता।
दास्ताँ ग़मकी मगर मुझसे सुनाई न गई॥

फिर हो रही है वहशते-दिलमें तरक़्क़ियाँ।
फिर आ रहा है बाग़में मौसम बहारका॥

क्या पूछते हो मुझसे मेरे दिलकी आरज़ू।
ख़ुद देख लो, फकीरकी सूरत सवाल है॥



फकीर

महमूद रामपुरी

[१८६५—१९३४ ई०]

महमूद अलीखाँ 'महमूद' १८६५ ई०मे रामपुरमे उत्पन्न हुए और १९३४ ई०मे मृत्यु पाई। 'दाग'के शिष्य थे। आपने भी सैकडो शिष्य छोडे है। आपका हस्त लिखित दीवान आपके भतीजेके पास मौजूद है।

आँसू भरे हैं आँखमें उस मस्ते-हुस्नकी।
लबरेज किसकी उम्रका पैमाना हो गया ?

मैं कुछ इस तरह तेरे दरसे पलटकर आया।
कि मुझे देखके गैरोंका भी जी भर आया॥

उल्फ़तमें जो हो जाता है, वोह हाल है मेरा।
यह देखनेवाले मुझे क्या देख रहे हैं॥

तुम शक्लसे हो हमारी बेज़ार।
अल्लाह अब ऐसे हो गये हम॥

जब कहा उसने "आज क्यों चुप हो" ?
फिर शिकायतका हौसला न हुआ॥

ज़ाहिद ! यह छेड खूब नहीं है, ख़ुदासे डर।
तौबाके बाद पूछना मैख्वारका मिज़ाज॥

नज़्फ़ रामपुरी

[१८४७—१८८७ ई०]

हाफिज मुहम्मद अली 'नज्फ' १८४७ ई०मे पैदा हुए। और १८८७ ई०मे मृत्यु पाई। हस्तलिखित दीवान छोडा था, सो नष्ट हो गया।

कल थी सीनेमें जुस्तजू दिलकी।
आज पहलूमें है जिगरकी तलाश ॥

आखिर ऐयामे-जुदाईकी भी हद है कि नही।
कबतक अल्लाह रहेगी यह मुसीबत बाकी ?

तुझे खुलती जब हकीकत मेरे दर्दे-गमकी नासह !
तेरे पहलूमें जो मेरा दिले-बेकरार होता[1] ॥



[1] 'निगार' जून १९५३मे प्रकाशित हज़रत कल्बअलीखाँ 'फाइक' द्वारा सकलित 'यादेरफ्तगाँ'से 'अहसान' रामपुरीसे 'नज्फ' रामपुरी (न० १४से २२) तकका सक्षिप्त परिचय-कलाम साभार उद्धृत।

अख़्तर नगीनवी

सैयद मुहम्मद 'अख़्तर' नगीना जिला विजनौरके थे। आपके तीन दीवान प्रकाशित हो चुके है। आप दागके शिष्य थे।

क्या नही करते, क्या नही होता ?
उनसे वादा वफा नहीं होता॥

यही दीवानगी है, और क्या दीवानगी होगी ?
युँ ही बैठे-बिठाये क़स्दे-जिन्दाँ कर रहा हूँ मैं॥

अश्क देहलवी

सैयद कुतवुद्दीन अहमद 'अश्क' मिर्ज़ा दागके शिष्य थे। दीवान नही छपा है।

खौफ़े-रंजिश न कुछ अन्देशये-बेदाद आया।
लिख दिया ख़तमें उन्हे वक़्तपै जो याद आया॥

जो ख़ूँ-आलूदपैकाँ हो, निकालो मेरे सीनेसे।
जो ख़ूँ-आलूद हसरत हो, वोह मेरे दिलमे रहने दो॥

उन्हे और है कौन बहकानेवाले।
यही आनेवाले, यही जानेवाले[1]॥

---

[1]इस शेरको वाज़ लोग 'दाग'का शेर समझते है। वास्तवमें यह 'अश्क'का शेर है।

नवाब आसफ़

[१८६४---१९१० ई०]

निज़ामउलमुल्क मीर महबूब अलीखॉ 'आसफ' १८६४ ई०मे पैदा हुए, १९१०मे मृत्यु पाई। आप हैदराबादके नवाब थे। आप ही के शासन कालमे मिर्जा 'दाग' हैदराबादमे आपके उस्तादके पदपर नियत हुए थे।

अभी आँसू पलकतक आया था।
अभी देखा तो एक दरिया था॥

अंजाम देखना दिले-खानाख़राबका।
इसपर पड़ेगा सब्र मेरे इज़्तराबका॥

झगडे तो हजारो है मगर बात है इतनी।
हम तुमसे वफा करके पशेमान बहुत है॥

तहरीरे-मुहब्बतने किया उनको ख़फा और।
तद्बीर तो की और थी, किस्मतसे हुआ और॥



बेबाक शाहजहाँपुरी

सैयद अहमद हुसेन बेबाक शाहजहाँपुरके थे। दागके शिष्य थे।

यहाँ यह हाल कि हम दिलको खाक कर बैठे।
वहाँ यह ज़िक्र कि अहले-वफासे कुछ न हुआ॥

यह भी ख़ुदाकी शान कि इक हर्फ़े-आरज़ू।
उस बेवफाके वास्ते अफसाना हो गया॥

काबिलेदाद है यह शाने-करम भी उनकी।
कुश्तयेनाज़के जीनेकी दुआ करते हैं॥

करते हैं आप किससे तगाफ़ुल कि हम नहीं।
यह आख़िरी निगाह है, आँखोंमें दम नहीं॥

मैं जिसको कह सकूँ, वोह नहीं मुद्दआ मेरा।
तुम जिसको सुन सको, वोह मेरा हालेगम नहीं॥

महर ग्वालियरी

मुशी नारायणप्रसाद वर्मा 'महर' ग्वालियर-रियासत निवासी थे। और 'दाग'के शिष्य थे। उनके हिन्दू शिष्योमे आपसे बेहतर कहनेवाला और कोई नही था। आपका दीवान 'शुआएमहर' छप चुका है।

अभी कुछ और परवाने गले मिलनेको बाकी है।
ज़रा थमना अभी रुख़सत न ऐ शमए-सहर होना॥

कुछ कह सके न दावरे-महशरके सामने।
आँखें भर आईं उसको गुनहगार देखकर॥

जानकर तुमको जफाकार, वफा की मैंने।
जो ख़ता की नहीं जाती, वोह ख़ता की मैंने॥

तैश मारहरवी

मुहम्मदयूसुफहसन 'तैश' मारहरह ज़िला एटाके रहनेवाले थे और रामपुरके दरबारी शायर थे। दागके शिष्य थे।

निगाहे मिलते ही यूँ काम कर जाना मुहब्बतका।
न उनको कुछ ख़बर होना, न मुझको कुछ ख़बर होना ॥

कितना तवील उम्रे-दो रोज़ाका है बयाँ।
दो दिनकी ज़िन्दगीका इक अफ़साना हो गया ॥

वहाँ तो सहल है, हरबार जलवागर होना।
यहाँ तो होशमें आना, मुहाल होता है ॥

मतीन मछलीशहरी

मौलवी मतीनउद्दीन अहमद 'मतीन' मछलीशहर ज़िला जौनपुरके रहनेवाले हैं, और दागके शिष्य है।

निगाहे-महर अगर मुझपर तेरी ऐ माहरू! होती।
यह क्यों जौरे-फ़लक होता, यह क्यो दुनिया उदू होती ?

अल्लाहरे बदगुमानी उन्हे ख़तमें लिख दिया।
"बातें न कीजियेगा मेरे नामाबरसे आप ॥"[1]

१२ जून १९५३

---

[1]निगार जनवरी १९५२ मे प्रकाशित प्रोफेसर नफीससन्देलवी द्वारा सकलित लेखसे अख़्तर नगीनवीसे मतीन मछलीशहरीका सक्षिप्त परिचय और कलाम साभार दिया जा रहा है।

आसी उलदनी

[१८६३———— ई०]

शेख अब्दुलबारी 'आसी' मेरठ जिलेके उलदन गाँवमे १८६३ ई०में उत्पन्न हुए। आपके पिता मिर्जा गालिबके शिष्य थे और 'हस्साम' उपनामसे शायरी करते थे। आपके पितामह 'आजिज' और परपितामह 'आशिक' तख़ल्लुस फरमाते थे। 'आशिक' साहब ख्याति प्राप्त 'मीर'के समकालीन हुए है, और कितने ही मुशायरोमे 'मीर'के साथ-साथ गज़ल पढनेका इत्तफ़ाक हुआ है।

'आसी'का अरबी-फारसीका शिक्षारभ १८६८मे हुआ। हिकमतका भी अध्ययन किया। १६११-१२ ई०मे फारसी अध्यापक रहे। १६१३-१४ ई०मे दिल्लीमे 'हमदर्द' अखबारमे कार्य किया। इसके बाद आप लखनऊ चले गये और वही रहने लगे।

अध्ययनकालमे ही शायरीका शौक हो गया। एक रोज मार्ग चलते हुए खुद-ब-खुद आपसे यह शेर मौजूँ हो गया—

यह क्या तुमने ज़ख़्मी किया दिल हमारा।
बड़ा तीर मारा, बड़ा तीर मारा॥

सम्भवतः यह घटना १६०४ ई०की है। इसके बाद रोज़ाना शेर कहने लगे। एक मित्रके सुझावपर 'आसी' उपनाम रख लिया। धीरे-धीरे आपके पिताजीके कानमें भी आपके शौककी भनक पडी। उन्होने मिसरा दिया—

"उठाओ गठरी, सँभालो बिस्तर कि रात अब कुछ नहीं रही है"

उक्त मिसरेपर गज़ल सुनकर आपके पिता प्रसन्न तो अवश्य हुए, किन्तु साथ ही यह भी फरमाया कि अभी बहुत कमी है। कभी-कभी वे स्वय इस्लाह भी देते रहते थे। १९१० ई० में आप मिर्ज़ा दागके शिष्य 'नातिक' गुलावठीके शिष्य हुए और उन्होने आपका खूब उत्साह बढाया।

'आसी'ने अनेक रगोमे डुबकियाँ लगाई है। प्रारम्भमे आप 'नासिख'-के रगमे कहते थे। जब उस शब्दाडम्बरी शायरीके दोषोसे आप अवगत हुए तो 'हाली'का रग अपनाया। इसी जमानेमे यह भी शौक हुआ कि हर शेरमे कोई-न-कोई मुहावरा नज्म होना चाहिए। कभी दुअर्थक शेर कहनेका शौक चर्राया तो कभी 'दाग'के रगीन और शोख़ कलामका अनुसरण किया।

१९१४ ई०मे लखनऊ पहुँचनेपर चित्त स्थिर हुआ। वहाँ 'अजुमने-मियार' नामक साहित्यिक सस्थाका उन दिनो काफी प्रभाव था और इसातज़ए-लखनऊ 'गालिब'के रगमे तवाआज़माइयाँ कर रहे थे। आप भी उसी रगमे लिखने लगे। इसके बाद तसव्वुफ एव दार्शनिक रगकी तरफ झुके, मगर शीघ्र सँभल गये और अपना एक मत स्थिर कर लिया, और वह यह कि शेर किसीके भी रगका हो, मगर अपना रग भी उसमे झलकना चाहिए और उसमे हृदय-स्पर्शकी शक्ति होनी चाहिए।

यूँ तो 'आसी' गजल, नज्म, कसीदे, मसनवी, रुबाइयात सभी कुछ कहते है। लेकिन गजले और रुबाइयात कहनेकी ओर विशेष रुचि है। आप ३०-३२ पुस्तकोके रचयिता है। शिष्योकी सख्या १५०के लगभग है। उनमे—शौकत थानवी, अमीर सलौनवी, उमर अन्सारी, शहीद बदायूनी, आज़ाद लखनवी विशेष तौरपर उल्लेखनीय है।

आपका एक दीवान गज़लोका, एक नज्मोका और एक रुबाइयातका मुद्रणकी प्रतीक्षामे है। आपके स्वयके पसन्दीदा २०० अशआर जनवरी

१९४१के 'निगार'मे प्रकाशित हुए है। जिनमेसे ७३ साभार यहाँ दिये जा रहे है—

खुल गया दुनियापै राज़े-हुस्नो-इश्क़[1]।
वोह हँसे, मुझको पसीना आ गया॥

जब चमनमे कुछ इनकलाब[2] हुआ।
इक-न-इक आशियाँ ख़राब हुआ॥

जो छुटे तो फिर मिलेंगे, न छुटे तो यह समझना।
यह सलाम आख़िरी है, तुझे ऐ बहार! अपना॥

दिल रहीनेआरज़ू[3] है, आरज़ू मरहूनेयास[4]।
घर हमें बरबाद करनेको बनाना चाहिए॥

मुझे तो याद नही है कोई ख़ुशी ऐसी।
शरीक जिसमें किसी तरहका मलाल न था॥

उस साल फ़स्लेगुलमें उजड़ा था बनते-बनते।
रहता तो आशियाँको अब एक साल होता॥

बुझा दे ऐ हवाएतुन्द[5]! मदफनके[6] चराग़ोको।
सियहबख़्तीमें[7] यह इक बदनुमा धब्बा लगाते है॥
मुरत्तिब[8] कर गया इक इश्कका क़ानून दुनियामें।
वोह दीवाने है जो मजनूँको दीवाना बताते है॥
उसी महफिलसे मै रोता हुआ आया हूँ ऐ 'आसी'!
इशारोंमे जहाँ लाखों मुकद्दर बदले जाते है॥

---

[1]सौन्दर्य और प्रेमका भेद, [2]परिवर्तन; [3]अभिलाषाओंके पास गिरवी, [4]और अभिलाषाएँ निराशाओके पास गिरवी हैं; [5]तेज़ हवा; [6]समाधिके, [7]अभाग्यरूपी अँधेरीमे, [8]निर्माण।

फूल हँस-हँसकर दिखाते हैं जहाँको दागे-दिल।
मुख़्तलिफ़ शकलें हैं, इज़हारे-ग़मो-आलामको[1] ॥

मेरा दौरेगुज़िश्तह[2] भी यूँ ही गुज़रा है ऐ हमदम[3] !
बना रक्खी थी इक सूरत ख़ुशीकी, शादमाँ[4] क्या था ?

हमीं नावाक़िफ़े-रस्मे-चमन थे ऐ क़फ़सवालो !
फ़लकसे अहद ले लेते तो फ़िक्रे-आशियाँ करते ॥

ख़ारोख़स[5] जमअ़ करे, नाम नशेमन[6] रख दे।
जिसको मंज़ूर हो, गुलशनको बयाबाँ करना ॥

नक़्क़ाशिए-फ़रेबे-मआसी[7] न पूछिये।
जन्नत बनाके रख दी गुनहगारके[8] लिए ॥

इब्तदा[9] वोह थी कि दुनिया थी मलामतगर[10] मेरी।
इन्तहा[11] यह है कि कोई कुछ नहीं कहता मुझे ॥*

अहदे-वफ़ाएदोस्त[12] बजा, लेकिन ऐ नदीम[13] !
क्योंकर कहूँ कि भूल गया आसमाँ मुझे ॥

शराबेज़ीस्त[14] अभी सैर होके पी भी नहीं।
कि सुन रहा हूँ सदाएँ शकिस्तेसाग़रको[15] ॥

हज़ार तरह तख़य्युलने[16] करवटें बदली।
क़फ़स-क़फ़सही रहा, फिर भी आशियाँ न हुआ ॥

---

[1]दुःख शोककी, [2]भूतकाल; [3]मित्र, [4]प्रसन्न, [5]काँटे-तिनके; [6]घोंसला; [7]पापोंकी ऐय्याराना कला, [8]पापीके, अपराधीके।

*आग थे इब्तदाए-इश्क़में हम।
हो गये ख़ाक इन्तहा है यह ॥—मीर

[9]शुरुआत, [10]छिद्रान्वेषी, [11]आख़िरी, [12]प्रेयसीका नेकीका संकल्प; [13]साथी, [14]ज़िन्दगीकी शराब, [15]मद्य-पात्र टूटनेकी आवाज़, [16]कल्पनाने।

कहते हैं कि उम्मीदपै जीता है ज़माना।
वोह क्या करे, जिसको कोई उम्मीद नही है ॥

नसीहतको आते हैं, गमख्वार 'आसी'!
गरेबाँको फिर आज सीना पड़ेगा ॥

अदब आमोज़[1] है मयख़ानेका ज़र्रह-ज़र्रह।
सैकड़ों तरहसे आ जाता है सजदा[2] करना ॥
इश्क पाबन्देवफा है, न कि पाबन्देरसूम[3]।
सर झुकानेको नहीं कहते हैं सजदा करना ॥

जो फूल आता है गुलशनमें गरेबाँ चाक आता है।
बहारे-रंगोबूमे ख़ून दीवानोंका शामिल है ॥*

इस फकीरीमे यह हालत मेरे इनकारकी है।
बादशाही कही मिल जाये तो आफत हो जाय ॥

आलामेज़िन्दगीकी[4] हकीकत न पूछिये।
लाखों तो ऐसे है जो मुझे याद भी नही ॥

ऐ दुश्मने मुरव्वत[5]! कुछ हक भी है हमारा।
बरसों तेरे लिए हम अहबावसे[6] लड़े हैं ॥

---

*चमन सैयादने सींचा यहाँतक ख़ूने-बुलबुलसे।
कि आख़िर रग बनकर फूट निकला आरिज़े-गुलसे ॥ अज्ञात

[1]विनय सिखाने वाला, [2]ईश्वरके ध्यानमे झुकना; [3]रस्म रिवाजोका पावन्द, [4]जीवनके कष्टोकी; [5]प्रेमके वैरी; [6]इष्ट-मित्रोसे।

मुझे अहसास[1] कम था, वरना दौरे-जिन्दगानीमें।
मेरी हर साँसके हमराह मुझमें इन्कलाव[2] आया॥

रह गई दिलमें तो क्या हाल करेगी दिलका?
वोह शिकायत कभी लबतक जो न लाई जाये॥

हज़ारो नग़मये-दिलकश[3] मुझे आते हैं ऐ बुलबुल!
मगर दुनियाकी हालत देखकर चुप हो गया हूँ मैं॥

खुला यह राज़[4] बज़्मेनाज़का[5] परदा उठानेपर।
कि जिसपर तेरा धोका था, वह इक तसवीर थी मेरी॥

हुआ अहसास पैदा मेरे दिलमें तर्केदुनियाका[6]।
मगर कब? जब कि दुनियाको ज़रूरत ही न थी मेरी॥

अपनी हालतका खुद अहसास नही है मुझको।
मैंने औरोंसे सुना है कि परेशान हूँ मैं॥
ऐ गमेदोस्त! बता दे मुझे मरज़ी अपनी।
जितनी ख्वाहिश हो तेरी, उतना परेशान हूँ मैं॥

हैं कुछ ख़राबियाँ मेरी तामीरमें[7] ज़रूर।
सौ मर्तबा बनाके मिटाया गया हूँ मैं॥

नई राहे बताता है, नये रस्ते दिखाता है।
नहीं मालूम ज़ालिम इश्क, रहज़न[8] है कि रहबर[9] है॥

---

[1]चेतना, [2]परिवर्तन, क्रांति, [3]चित्ताकर्षक गीत, [4]भेद; [5]प्रेयसीकी महफिलका, [6]ससार-त्यागका, [7]निर्माणमे, [8]लुटेरा; [9]पथ-प्रदर्शक।

रंगेनिशात[1] देख, मगर मुतमइन[2] न हो।
शायद कि यह भी हो कोई सूरत मलालकी॥

गुलशन बहारेपर है, हँसो ऐ गुलो! हँसो।
जबतक ख़बर न हो, तुम्हें अपने मआलकी[3]

अहसास अब नहीं है, मगर इतना याद है।
शक्ले जुदा-जुदा थीं, उरूजो[4]-ज़वालकी[5]॥

यह सब फरेब है, नजरे-इम्तयाजका[6]।
दुनियामे वरना कोई भी अच्छा-बुरा नही॥
अब कौन है रमूजे-मुहब्बतका[7] राज़दाँ[8]।
इक हम रहे हैं, हमको कोई पूछता नही॥

रफ़्ता-रफ़्ता यह जमानेका सितम होता है।
एक दिन रोज मेरी उम्रसे कम होता है॥
बाग रोता है असीरानेकफ़सको[9] शायद।
दामने-सब्ज-ओ-गुल[10] सुबहको नम[11] होता है॥

क़ैदसे पहले भी आजादी मेरी खतरेमें थी।
आशयाना ही मेरा सूरतनुमाएदाम[12] था॥

हज़ारो बार कोशिश कर चुका हूँ।
नही छुपती मुहब्बतकी निगाहे॥

---

[1]ऐश्वर्यकी रगीनियाँ, [2]आश्वास्त, [3]भविष्यकी [4]-[5]उत्थान-पतनकी, [6]दृष्टिभेदका, [7]प्रेमके भेदोका; [8]भेदी; [9]पिंजरेके वन्दियोको; [10]घास और फूलोका समूह, [11]भीगा हुआ; [12]जालकी सूरत।

मैं चुप बैठा हुआ हूँ और यह मालूम होता है।
कि जैसे इक जमाना कह रहा है दास्ताँ[1] मेरी ॥

दुनियामें कोई गमके अलावा खुशी नही।
वोह भी हमें नसीब कभी है, कभी नही ॥*

धोका न खाओ चारागरो[2] ! वाकआतसे[3]।
पहलूमें दिल नही है, तो क्या दर्द भी नही ?

तू क्यो मुझे मायूस किये देता है नासेह !
क्या तूने मेरा खत्तेजबी[4] देख लिया है ?

अच्छे हुए जमानेके बीमार सैकडो।
दिल वोह मरीज है जो अभी जेरेगौर है ॥
छोड़ा ही क्या है लूटनेवालोने मेरे पास।
इक जिन्दगी सो वह भी कोई दिनकी और है ॥

अब मैं क्या तुमसे अपना हाल कहूँ।
ब-खुदा याद भी नहीं मुझको ॥

जिन्दगानीका आसरा है यही।
दर्द मिट जायगा तो क्या होगा ॥

बेसाख्ता उठी जो वोह तोबाशिकन[5] निगाह।
खुद मुझको शक हुआ कि मुसलमाँ[6] नही रहा ॥

---

*ऐ फलक ! दे हमको पूरा गम तो खानेके लिए।
वोह भी हिस्सा कर दिया सारे जमानेके लिए ॥—दाग

[1]कहानी, [2]चिकित्सको, [3]वास्तविकतासे, [4]भाग्य-लेख; [5]प्रतिज्ञा तोडनेवाली, [6]सयमी।

चमक जाओ ऐ शामेग़मके[1] सितारो !
मुसीबतके मारोंपै अहसान होगा ॥

ख़ुदा जाने अब दिल कहाँ जाके ठहरे ।
बड़े इनकलाबातसे[2] हो रहे हैं ॥

मताएज़िन्दगीके[3] देनेवाले यह तो समझा दे ।
कि इतना बोझ सरपर रखके ले जाना कहाँ होगा ?

कोई नासेह है, कोई दोस्त है, कोई गमख्वार ।
सबने मिलकर मुझे दीवाना बना रक्खा है ॥

बहुत इलाज किया दर्देइश्कका लेकिन ।
वही मआल[4] हुआ जो मआल होता है ॥

तड़पे भी, मुज़तरब[5] भी हुए, वक़्तेकत्ल हम ।
सब कुछ सही, तुम्हारा तो दामन बचा दिया ॥

मंजिलके रहनेवालो ! क्या देखते हो हमको ?
आसूद-ए-मकाँ[6] तुम वामाँद-ए-सफ़र[7] हम ॥

यह राज है ऐ हरीसेदुनिया[8] ! तुझे कुछ इसकी खबर नही है ।
उसीका घर है तमाम दुनिया[9], कि जिसका दुनियामें घर नही है ॥

जीना पडा उमीदेवफापर तमाम उम्र ।
हालाँ कि जान देनेमे कोई ज़ियाँ[10] न था ॥

---

[1]शोक-रात्रिके; [2]क्रान्तियाँ, परिवर्तन, [3]जीवनधनके; [4]परिणाम; [5]घबराये, [6]सुख चैनसे महलोके निवासी, [7]भटकनेको लाचार; [8]ससार लिप्त, [9]समस्तविश्व; [10]हानि ।

रुसवा हुए, मगर दिलेमुज़तरको[1] क्या करें ?
मरना पड़ा वहीं हमें, मरना जहाँ न था ।।

अगर दिल सलामत रहेगा तो 'आसी' !
बहुत मिल रहेंगे दगा देनेवाले ।।

उनको यह गुस्सा कि मैं उनकी गलीमें क्यों गया ?
मुझको यह हैरत कि क्योंकर शक्ल पहचानी मेरी ।।

तजाहुलसे[2] मेरे नामोनिशाँके पूछनेवाले ।
वहीं रहता हूँ मैं अबतक, जहाँ ढूँढ़ा नहीं तूने ।।

यकीन रख कि यहाँ हर यकीनमें है फ़रेब ।
बका तो क्या है, फ़नाका भी एतबार न कर ।।

साथ हर साँसके मेरे दिलसे ।
आ रही है, अभी ख़बर तेरी ।।

इतना मुझे मजबूर न कर नासहे-गमख्वार !
ऐसा न हो दामन भी गरेबानमें सिल जाय ।।

मैं अपने दिलसे कहता हूँ कि अब तो दर्द कुछ कम है ।
मेरा दिल मुझसे कहता है कि अक्सर यूँ भी होता है ।।

सबूत है यह तमन्नाकी सादालोहीका ।
बगैर वादेके रहता है इन्तजार मुझे ।।*

---

[1]बेचैन दिलको, [2]उपेक्षासे ।

*न कोई वादा न कोई यकीं, न कोई उम्मीद ।
मगर हमें तो तेरा इन्तज़ार करना था ।।
—फिराक गोरखपुरी

दिलको शिकवा कि मेरे दर्दका दरमाँ[1] न हुआ।
हम पशेमान कि और इसके सिवा क्या करते॥

अबतक तो मुहब्बतमें वह साअ़त नही आई।
जिस रोज़ वोह रोनेपै मेरे हँस न दिया हो॥

यह कैसी बदशगूनी है जो मैं महसूस करता हूँ।
कि हूँ और फिर नही मालूम होता उसकी महफ़िलमें॥

चन्द अशआ़र अपनी पसन्दके

ऐसा भी इत्तफाक मुझे बार-हा हुआ।
उनसे मिला हूँ, उनका पता पूछता हुआ॥

कहीसे ढूँड़के ला दे हमें भी ऐ गुले-तर!
वोह ज़िन्दगी, जो गुज़र जाये मुसकरानेमें॥

देखकर अहले जहाँकी बेरुख़ी तेरे बग़ैर।
हँस रहा हूँ आज मैं पहली हँसी तेरे बग़ैर॥

जाँ, सुकूने-ज़िन्दगानी मेरी किस्मतमें न ढूँड़।
ठोकरें खाई है मैंने उम्रभर तेरे लिए॥

ग़मोंपर ग़म फटे पड़ते है ऐयामेजवानीमें।
इज़ाफे हो रहे हैं वाकियाते ज़िन्दगानीमें॥

मेरा हाल पूछा मेरी बात मानी।
तवज्जह, इनायत, करम, महरबानी॥

---

[1] इलाज।

नज़र नीची अरक आया हुआ-सा।
मिला भी वोह तो शरमाया हुआ-सा ।।

बहार आती है और मैं डर रहा हूँ।
कि अक्सर मुझको रास आती नही है ।।

आजकल 1 दिसम्बर १९४६ ई०

रहा बर्कोतपाँसे सावका तकदीरमें इतना।
कि अब अपना नशेमन हम बनाते हैं शरारोंमें ।।

२८ जनवरी १९५२ ई०]



नशेमन

आजाद अंसारीके शिष्य—



अकबर हैदरी

[.... — १९४० ई०]

अकबर हैदरी साहब दिल्ली निवासी थे और अगरेजोको हिन्दी-उर्दू पढानेका कार्य करते थे। मौलाना हालीके शिष्य, आजाद अन्सारीके आप शायरीमे शागिर्द थे। आपने शायराना दिलो-दमाग पाया था। गज़लके अतिरिक्त नज्म, रुवाई आदि भी कहते थे। अगरेजी, फारसी, पश्तो, हिन्दीका अच्छा ज्ञान था।

दरमियाना कद, रोबीला गोल चेहरा, हँसता हुआ ललाट, मुसकराती हुई आँखे, मुँहमे तम्वाकूका पाइप, निहायत खुशपोश, खुशवाश, खुशमिज़ाज। वात-वातमे लतीफे कहते थे। दु ख-दर्दमे भी हँसते रहते थे। मगर दूसरोके रजोगममे दिलसे हाथ वटाते थे। दोस्तोके दु.ख-सुखको अपना दु.ख-सुख समझते थे। स्पष्टवक्ता और स्वच्छ हृदय थे। वजअ और उसूलकी पावन्दी अपना ईमान समझते थे। ईर्ष्या योग्य स्वास्थ्य था। १२ मार्च १९४० ई०को आपका निधन हो गया। १५ नवम्वर १९४६के आजकलमे प्रकाशित आपका कुछ कलाम यहाँ दिया जा रहा है—

जहाने-हुस्नमें[1] महवे-तरन्नुम[2] है वफ़ा[3] मेरी।
मैं नग़्मा[4] हूँ मुहब्बतका, मुहब्बत है सदा[5] मेरी॥

दिलेमुज़्तरको[6] जिसपर ऐतमादे-कामरानी[7] था।
मेरे अहसासेख़ुद्दारीमें[8] है वोह इल्तिजा[9] मेरी॥

मशीयतको[10] निगाहोमें जो मेयारे-परस्तिश[11] थी।
हुई है जज़्ब[12] अश्के-ख़ूँ-फ़िशाँमें[13] वोह दुआ मेरी॥

इक आँसू और वोह भी दिलकी रगीनीसे बेगाना।
न देखी जायगी दुनियासे तसवीरेवफ़ा मेरी॥

नियाज़ोनाज़का[14] अफसाना लिखनेके लिए 'अकबर'!
सुनी है कातिबेकुदरतने[15] बरसो इल्तिजा[16] मेरी॥

तसन्नोह[17] है, तकल्लुफ है, तअल्ली[18] है, तमाशा है।
समझ ही में नहीं आता कि मेरी जिन्दगी क्या है॥

ख़ुदावन्दा मेरी गुमराहियोंसे दरगुज़र फरमा।
मैं उस माहौलमें[19] रहता हूँ, जिसका नाम दुनिया है॥

---

[1]सौन्दर्य-ससारमे, [2]सगीतमे लीन, [3]नेकी, [4]सगीत; [5]आवाज़, [6]बेचैन दिलको, [7]सफलताका विश्वास,; [8]स्वाभिमान चेतनामे, [9]प्रार्थना, [10]ख़ुदाकी मर्ज़ीकी, [11]उपासनाका आदर्श; [12]लीन, [13]ख़ूनके आँसुओमे, [14]नम्रता और अभिमानका, [15]भाग्य विधाताने, [16]प्रार्थना, [17]बनावट, [18]शेख़ी; [19]वातावरणमे।

ख़ुदपरस्ती[1] ख़ुदा न बन जाये।
अहतयातन गुनाह करता हूँ॥

हवादसमे[2] फना[3] होकर बकाके[4] राज़[5] समझा हूँ।
मेरी जमईयतेख़ातिर[6] हुई मेरी परेशानी॥

अब देखिये कि कौन ठहरता है देरतक।
बज़्मे-शबाब भी है, जहाने-हुबाब[7] भी॥

किस चमनकी ख़ाकमें फूलोंका मुस्तकबिल[8] नहो ?
दूरबी नज़रोंमें[9] रंगो-बू है, आबो-गिल नहीं॥

मिरी अंजामबीनज़रें[10] मुझे मगमूम[11] करती हैं।
लरज़ जाता है मेरा दिल, उरूजे-माहेताबाँसे[12]॥

तज़करा बर्क़ो-शररका[13] जो सुना मैंने कभी।
आह भरकर दिले-ग़मगींने कहा—'हाय शबाब'॥

फरिश्ते आदमी बनकर न रह सके 'अकबर'।
वोह ऐसी कौन-सी मुश्किल थी आदमीयतमें ?

फितरतने लेके अश्के-नदामतकी सुर्ख़ियाँ[14]।
उनवान[15] लिख दिया मेरी फ़रदेगुनाहपर[16]॥

---

[1]अहमन्यता [2]मुसीबतोमे, [3]मरकर, [4]जिन्दगीके, [5]भेद, [6]तसल्ली; [7]पानीके बुलबुलोका ससार; [8]भविष्य, [9]दिव्य दृष्टिमे; [10]अजाम जाननेवाली आँखे; [11]ग़मगीन, [12]चन्द्रमाके विकाससे, [13]बिजली, आगका जिक्र, [14]प्रायश्चित्तके आँसुओकी लाली; [15]शीर्षक, [16]पाप तालिकापर।

आबरूये-गुनाहगारी हूँ ।
अरकेइनफआल[1] क्या कहना ।।

ज़मीरे-पाकतीनत[2] आह कितना बेमुरव्वत है ।
सितमगर हर मसर्रतको[3] गुनहगारी बताता है ।।

मैं किस दिलसे करूँ ताअ़त[4] कि ताअ़तमें मसर्रत है ।
निकोकारीसे[5] डरता हूँ कि मुझको लुत्फ आता है ।।

गुनाहोमें यकीनन एक अहसासे-मसर्रत है ।
गुनाहोके लिए लेकिन जवानीकी ज़रूरत है ।।
जवानीमें गुनहगारी बहुत मासूम होती है ।
यही हुक्मे-जवानी है, यही आईने-फितरत है ।।

दरोगे-मसलहतआमेज़[6] है दिलकी तसल्ली भी ।
ख़ुदाका वास्ता देकर न पूछो अहले ईमाँसे ।।

न अल्फाज़े हमदो-सना[7] जानता हूँ ।
न दिलचस्प तर्ज़े-अदा जानता हूँ ।।
मेरी बन्दगी है इसीमें कि तुझको ।
ख़ुदा मानता हूँ, ख़ुदा जानता हूँ ।।

मशीयतकी[8] परिस्तारी[9] और इस अन्दाज़से 'अकबर' !
दुआ लबपर नही आती, मगर आँसू निकलते हैं ।।

---

[1]शर्मिन्दगीके पसीने, [2]पवित्र हृदय, [3]ख़ुशीको। [4]उपासना; [5]बदनामीसे; [6]झूठ बोलना भी मसलहत लिये हुए है, [7]प्रशसा; [8]ख़ुदाकी, [9]उपासना।

बेतकल्लुफ़ तुझे ख़ुदा कहना।
मेरी सादा-दिलीका क्या कहना॥
जानता हूँ जरूरतें अपनी।
मसलहत है तुझे ख़ुदा कहना॥

शमअ़में इक सोज़ था, इक साज़ परवानेमें था।
हुस्न गोया इश्कके ख़ामोश अफ़सानेमें था॥

ऐ दर्दे-मुहब्बत मुझे गुमराह न करना।
दिल अश्कमें बह जाय, मगर आह न करना॥

दूर-अन्देशियाँ मुहब्बतकी।
बे-वफाओंको बा-वफा कहना॥

जो यही रहा तबस्सुम[1], जो यही रहा तरन्नुम[2]।
मै सुना चुका फसाना, शबेगमकी काविशोंका[3]॥

बुतकदा था इधर, उधर काबा।
थी जवानीकी रहगुज़र[4] दिलचस्प॥

एक हम हैं दोस्तीपर भी हमें दुश्मन ख़िताब।
एक तुम हो, दुश्मनीपर भी तुम्हारा नाम दोस्त॥

देखा हविस-ओ-हुस्नको[5] बाहम[6] जो बगलगीर।
नाकामे-मुहब्बतने कहा—"हाय मुहब्बत"॥

---

[1]मुसकान; [2]संगीत, [3]विरहरात्रिकी मुसीबतोंका;
[4]मार्ग, राह, [5]विषयलोलुपता और रूपको; [6]परस्पर।

यूँ न फितने उठा खिरामेनाज़।
मेरा ईमान है, कयामत है॥

पुरसिशेगम अगर तकल्लुफ थी।
इस तकल्लुफको देर-पा करते॥

इक तबस्सुम है, उनके होंटोंपर।
या मेरी गुमशुदा जवानी है॥

तड़पकर करवटें पैहम दिले-नाकाम लेता है।
लरज़ जाता हूँ जब कोई, वफाका नाम लेता है॥

हसरत[१] भी है, उम्मीद भी है, आरजू भी है।
सब कुछ मेरे नसीबमें है, एक तू नही॥

तूफाने-बर्कोबादकी[२] जर्रानवाजियो !
मैं खानुमाँ-खराब[३] किसे आशियाँ कहूँ ?

अभी तो नाखुदाके बाद मेरे इक खुदा भी है।
हवादिस[४] क्यो तड़पकर रह गये, आगोशे-तूफाँमें[५]॥

तकमीले-दर्द[६] होती है, जब हर दवाके बाद।
हसरतसे देखता है, मेरा चारागर[७] मुझे॥

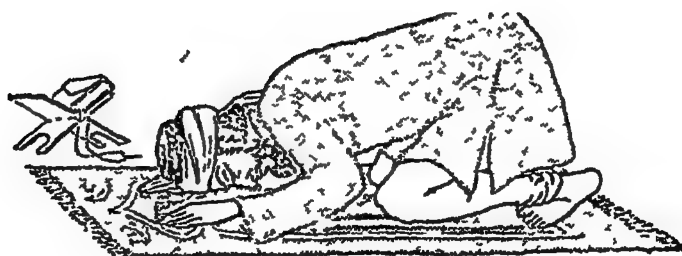
बेकसीका लुत्फ भी जाता रहा।
शामेगुरबत[८] भी सहरने[९] छीन ली॥

---

[१]अभिलाषा; [२]विजली-आँधीके तूफानकी; [३]जिसका घर बरबाद कर दिया हो; [४]मुसीबते, [५]तूफानोकी गोदमे, [६]दर्दमे अधिकता; [७]चिकित्सक; [८]यात्राकी शाम; [९]सुबहने।

भला मैं भी तो देखूँ हौसले दामाने-इसियाँके[1] ।
ज़रा सजदेसे सर उठने तो दे ज़ौक़े-पशेमानी[2] ॥

३ जून १९५३ ई०]



[1]पापसे भरे दामनके, [2]प्रायश्चितका शौक ।

नई लहर



[१९४४ से १९५४ तककी आधुनिक शायरी]

इन दस वर्षोमे उर्दू-शायरीमे अभूतपूर्व परिवर्त्तन एव परिवर्द्धन हुआ है। उसका लबो-लहजा बदल गया है, सोचने और विचारनेके दृष्टिकोणमे अन्तर आ गया है। इन दस वर्षोमे हुई इन तीन मुख्य घटनाओ—१ भारत-विभाजन, २ स्वराज्य-प्राप्ति, ३ राष्ट्र-पिताकी शहादत—पर बहुत अधिक कहा गया है, और कहा जा रहा है।

यदि उक्त तीनो विषयोकी नज्मो और गजलोका सकलन किया जाय तो १०—१२ पोथे तैयार हो सकते हैं। यह सब विषय नई शायरी और नज्मसे अधिक सम्बन्धित है। अत हम इनपर अपनी 'शायरीके नये दौर' 'नये मोड' नामक पुस्तकोमे विशेष रूपसे प्रकाश डाल रहे हैं। यहाँ प्रसग-वश सक्षेपमे उल्लेख किया जा रहा है, इस दौरके नवयुवक शायर नज्म और गजल अक्सर दोनो कहते हैं। अत उद्धरणोमे गजलो-नज्मो दोनो-के ही अशआर दिये जा रहे हैं।

भारत-विभाजन

भारत-विभाजन मुसलिम लीगकी ज़िदके कारण हुआ। उसकी इस साम्प्रदायिक दूषित मनोवृत्तिका कितना घातक परिणाम हुआ ? कितना बडा नरहत्याकाण्ड हुआ ? कितनी युवतियोकी अस्मतदरी हुई ? कितने बालक बिलख-बिलखकर मरे ? कितने धार्मिक स्थान और लोकोपयोगी सस्थायें नष्ट कर दी गई और कितनी अधिक सख्यामे धन बरबाद हुआ, इन सबका लेखा-जोखा भले ही हमारे पास सुरक्षित नही है। फिर भी शायरोने जो कुछ कहा है, यदि वही सब एकत्र कर लिया जाय तो एक प्रामाणिक इतिहास बन जायगा। ससारमे इस तरहका काण्ड इससे पूर्व नही हुआ। भारत-विभाजनसे पूर्व मुसलिमलीगकी विषैली मनोवृत्तिको आनन्द-नारायण मुल्लाने यूं नज्म किया था—

जहाँसे अपनी हक़ीक़त छुपाये बैठे हैं
यह लीगका जो घरौन्दा बनाये बैठे हैं

. . . .

भड़क रही है तआस्सुबकी[1] दिलमे चिनगारी
चरागे-अम्लो-हक़ीक़त बुझाये बैठे हैं
हरेकके दीन पै इल्ज़ामे-काफिरी रखकर
हरेक कुफ़्र पै ईमान लाये बैठे हैं
सजाये बैठे हैं दूकाँ वतन-फ़रोशीकी
हरेक चीज़की क़ीमत लगाये बैठे हैं
क़फ़समें[2] उम्रमें कटे जीमे है ग़ुलामोंके
चमनकी राहमें काँटे बिछाये बैठे हैं
नही शरीक मुसीबतमें हिन्दकी लेकिन—
इराको-शामसे रिश्ते मिलाये बैठे हैं
गिराई एक पसीनेकी बून्द भी न कभी
मता-ए-क़ौममें[3] हिस्सा बटाये बैठे हैं

. . . . . .

ख़ुदाकी शान इसी सरकी रफ़अ़तोंपै[4] ग़रूर
जो आस्ताने-उदूपर[5] झुकाये बैठे हैं

. .

उक्त शेर नज्मके है। गज़लका क्षेत्र सीमित है, उसका अन्दाज़े-बयान भी नज्मसे भिन्न होता है और एक शेरमे ही गज़लकी ज़बानमे सम्पूर्णभाव व्यक्त करना होता है। गज़लके निम्न शेरमे मुसलिम लीगकी इसी मनोवृत्तिको देखिये 'मुल्ला' किस खूबीसे व्यक्त करते है—

---

[1]द्वेष-भावकी, [2]पराधीनतामे; [3]देशके धनमे, [4]उच्चतापर घमण्ड; [5]शत्रुकी चौखटपर।

जोशे-तक़सीम वारिसोंका न पूछ।
ज़िद यह है कि मॉंकी लाश कटके बटे ॥

मॉंकी लाशको काटकर बाँटनेवालोसे सावधान रहनेके लिए गज़लके दो शेरमे मुल्ला चेतावनी देते हुए फरमाते है—

बुलबुले-नादाँ ! ज़रा रंगे-चमनसे होशयार।
फूलकी सूरत बनाये सैकड़ों सैयाद है॥
आशियाँ वालोंकी अब गुलशनमें गुंजाइश नहीं।
आज सहने-बागमें या सैद[1], या सैयाद[2] है॥

जब इन सैयादोने चमन बॉट लिया तो मुल्ला इन व्यथाभरे स्वरोमे कराह उठे—

यूँ दिल भी कभी होते है जुदा, 'मुल्ला' यह कैसी नादानी ?
हर रिश्ता ज़ाहिर तोड़ दिया, जंजीरे-निहानी[3] भूल गये॥

जंज़ीरे-निहानी तोड देने और नादानीका परिणाम क्या हुआ ? यह भी मुल्ला साहबके घायल दिलसे पूछिये—

कैसा गुबार चश्मे-मुहब्बतमें आ गया।
सारी बहार हुस्नकी मिट्टीमें मिल गई॥

मुल्ला साहबने इस एक शेरमे सभी कुछ कह दिया। कुछ भी कहना शेष नही रहा। भारत-विभाजनसे स्वराज्य-प्राप्तिका सब मजा किरकिरा हो गया। वे खिजानसीब जो बहारके न जाने कबसे मुन्तज़िर थे और दिलोमे हज़ारो अरमान छिपाये हुए थे। बहार आते ही बरबाद हो गये। बकौल किसी के—

---

[1]शिकार, [2]शिकारी, [3]अन्तरंगका बन्धन।

ख़ामोश हो गया है चमन बोलता हुआ

अनगिनत बसे-बसाये घर वीरान हो गये, असख्य फलते-फूलते परिवार उजड गये। लाखो युवक भरी जवानीमे शहीद कर दिये गये। लाखो युवतियाँ अपहृत करली गई। लाखो वृद्धाये निपूती हो गईं, लाखो माईके लाल यतीम होकर बिलखते फिरने लगे। लाखो वृद्ध, अशक्त, अपाहिज निराश्रित होकर एड़ियाँ रगड-रगडकर जीवित रहनेको बाध्य हुए। समस्त देश स्मशान-सा बन गया—

देते हैं सुराग़ फ़स्ले-गुलका।
शाख़ोंपै जले हुए बसेरे॥

—अज्ञात

आँखोंसे अक्सर उनकी आँसू निकल गये हैं।
क्या-क्या भरे गुलिस्ताँ सावनमें जल गये हैं॥
आज़ादियाँ तो देखीं, बरबादियाँ भी देखो।
कैसे हसीन गुलशन काँटों पै ढल गये हैं॥

—अज्ञात

कुछ इस तरहसे बहार आई है कि बुझने लगे।
हवा-ए-लाल-ओ-गुलके चराग़े-दीद-ओ-दिल॥

—अज्ञात

तमाम अहले-चमन कर रहे हैं यह महसूस।
बहारे-नौका तबस्सुम[1] तो सोगवार-सा[2] है॥

—ज़ोहरा निगाह

[1] नई नवेली बहारकी मुसकान; [2] शोकाकुल-सा।

वहारे-नौका तवस्सुम सोगवार-सा क्यो है और फला-फूला चमन वीरान किन लोगोने कर दिया ? यह जाननेके लिए 'अदम' की 'दस्तक' नज्मके यह शेर पर्याप्त होगे—

आज शायद भेड़िये फिर घूमते है शहरमें
भूककी चिनगारियाँ लेकर दहाने-कहरमें[1]
मसजिदोसे अजदहे[2] निकले है बलखाते हुए
मन्दिरोसे जलजले उट्ठे है थर्राते हुए
आँधियोका भूत उठा है दाँत चमकाता हुआ
मौतका जबडा खुला है आग बरसाता हुआ

यह सनमखानोके हीरो[3], यह हरमके शहसवार[4]।
बनके निकले है खुदाओकी तबीअतका गुबार॥

. ...

आ गया है डाकुओंका काफिला[5] दहलीजपर
बुझ चुकी है अम्नकी कन्दील[6] सीना पीटकर

अपने अन्धे अनुयायियोको साम्प्रदायिक नेता अवलाओका सतीत्व लूट लेनेके लिए किस प्रकार फतवे देते थे ? यह भी 'अदम' साहवकी जवाने-मुवारकसे सुनिये—

देखते क्या हो वदहवासीसे ?
क्या हुआ है तुम्हारी ग़ैरतको
इतनी ताख़ीर[7] क्यो इताअ़तमें[8]
हुक्म सिर्फ एक बार होता है

---

[1]मृत्युरूपी मुखमे, [2]अजगर, [3]मन्दिरोके नेता, [4]मसजिदोके हिमायती; [5]गिरोह, दल, [6]शान्ति-दीप-शिखा, [7]विलम्ब; [8]आज्ञा पालनमे

काट दो इनकी छातियोके नुमूद[1]
छातियाँ हैं कि जाँ गुदाज़ सरूद[2]
बाँधदो इनके बाल खम्बोंसे
और इनके हसीन जिस्मोंपर
ताज़यानोंके[3] फूल बरसाओ
बेटियाँ हैं यह उन दरिन्दोंकी
जो तुम्हारे लहूके प्यासे हैं
देखते क्या हो बदहवासी से ?
ऐसी भरपूर और लज़ीज़ ग़िज़ा
रोज़ कब दस्तयाब होती है
पिल पड़ो इन जवाँ गज़ालों पर[4]
इनकी आहो-बुकाएँ[5] मत जाओ
उनकी आहो-बुकाएँ ग़ौर करो
जिनको तुम छोड़ आये हो पीछे
और जो दुश्मनोंके पहलूमें
हँस रही हैं तुम्हारी ग़ैरतपर
जिनके नज़दीक अब तुम्हारा वजूद[6]
एक खंज़ीरके[7] बराबर है

. . . .

जब दिन-दहाड़े अबलाओंकी इसतरह लूट मची हो, तब अपना देश छोड जानेके सिवा और उपाय भी क्या था ? मगर जाने-आनेके मार्ग भी तो अवरुद्ध थे। सर्वत्र आततायी-ही आततायी विचर रहे थे। अबलाओंकी

---

[1]स्तनोंके अंश, [2]मनको हिलोर देनेवाले वाद्य, [3]चाबुकोंके [4]मृगनयनियोंपर, [5]रुदन-विलापमें, [6]अस्तित्व; [7]जंगली सूअरके।

उस दयनीय स्थितिका 'अदम' साहबने देखिये कैसा सजीव चित्रण किया है—

आ बहन छोड़ जायें देस अपना

अब इसे आँधियोंने घेरा है
कोई तेरा न कोई मेरा है
हर तरफ खून और अँधेरा है
आ बहन छोड़ जायें अपना देस

अब यहाँ कहरमान[1] बसते हैं
आदमी-आदमीको डसते हैं
रहम मँहगा है जुल्म सस्ते हैं
आ बहन छोड़ जायें अपना देस

आह ! लेकिन यह आस भी तो नहीं
बच सके आगसे पनाहगज़ी[2]
मेरी तजवीज़ है यहीं न कहीं
किसी अन्धे कुएँकी लहरोंमें
साँसको बन्द करके सो जायें

मालूम होता है कि इन्सान दरिन्दे बन गये है और अपने खूंखार जबडे खोले हुए घूम रहे है—

यह दुनिया है या है दरिन्दोकी[3] बस्ती ?
है खाइफ[4] यहाँ आदमी-आदमीसे
—एजाज़ सद्दीकी

---

[1]आफतके परकाले, आततताई, [2]शरणार्थी; [3]जगली जानवरोकी, [4]भयभीत।

जब इन्सान दरिन्दे और वहशी बन गये, तब उनके ख़ूनी पंजोंने क्या-क्या जुल्मो-सितम किये। यह 'अर्श' मलसियानी साहबसे मालूम कीजिए—

बस्तियोंकी बस्तियाँ बरबादो-वीराँ हो गईं
आदमीकी पस्तियाँ, आख़िर नुमायाँ हो गईं
कत्लो ग़ारतके हज़ारों दाग लेकर वहशतें
आज सुनते हैं कि फिर अस्मत बदामाँ हो गईं

इस बरबादी-ओ-वीरानीका दृश्य गजलके एक शेरमें जगन्नाथ साहब 'आजाद' देखिये किस ख़ूबीसे खींचते हैं—

बस एक नूर झलकता हुआ नज़र आया।
फिर उसके बाद न जाने चमनपै क्या गुज़री॥

मनुष्योंकी यह रक्त-लोलुपता देखकर दरिन्दे भी सहम गये—

दरिन्दोंमें हुआ करती हैं सरगोशियाँ इसपर।
कि इन्सानोंसे बढकर कोई ख़ूँ आशाम क्या होगा॥
—अदीब मालीगाँवी

भारत-विभाजनका परिणाम यह हुआ कि भारतीय हिन्दू-मुसलमान अपने ही देशमें विदेशी बन गये। मुसलिमलीगी अधिकृत क्षेत्र वहाँके हिन्दुओंके लिए और कांग्रेसी अधिकृत क्षेत्र मुसलमानोंके लिए विदेश हो गया। भाई-भाईका शत्रु हो गया। हिन्दू-मुसलमान दोनों अपने जन्म-स्थानों और पूर्वजोंकी स्मृतियोंको बेगाना देश समझनेके लिए मजबूर हो गये—

तू अपनेको ढूँढ रहा है दुनियाँके मामूरेमें।
यह बेगाना देस है ऐ दिल ! इसमें सब बेगाने हैं॥

देश छोडकर लाखों नर-नारियोंके बिलखते हुए काफिले इधरसे उधर

आ-जा रहे है, परन्तु न तो किसीको मंजिलका पता है, न किसीको रास्तोका, फिर भी बच्चोको कान्धोपै लादे, बूढे माँ-बापको सहारा दिये बढे जा रहे है—

मंजिलसे भी नावाकिफ है, राहसे भी आगाह नहीं।
अपनी धुनमें फिर भी रवाँ है, यह भी अजब दीवाने है॥

—जगन्नाथ आजाद

उन दिनो धर्मोन्माद और मजहबी दीवानगीका यह आलम था कि उस विशाक्त वातावरणमे भले आदमियोका जीना दूभर हो गया था—

जो धर्मपै बीती देख चुके, ईमांपै जो गुजरी देख चुके।
इस रामो-रहीमकी दुनियाँमें इन्सानका जीना मुश्किल है॥

—अर्श मलसियानी

जब रामो-रहीमके बन्दे जहरीले नाग बन जाये, तब उनसे बचा भी कैसे जाय ?

डक निहायत जहरीले है, मजहब और सियासतके[1]।
नागोकी नगरीके बासी! नागोकी फुंकार तो देख॥

—अर्श मलसियानी

इन जहरीले धर्मके ठेकेदारो और राजनैतिक कुचक्रियोके कारनामे उजागर किये जाये तो—

खबसे-बातिन खुदापरस्तोंके[2]
मंजरे-आमपर अगर लायें[3]

---

[1]राजनीतिके, [2]खुदा परस्तोके अपवित्र एव नीच कार्य्य, [3]यदि प्रकट कर दिये जाये।

वाक़िया है कि शर्मसारीसे
मसजिदोके चराग बुझ जायें

—अदम

मन्दिरो-मसजिदोके चराग भले ही शर्मसे बुझ जाये, मगर इनके मस्तकपर एक पसीनेकी बूँद भी दिखाई नही देगी। जो लाज-शर्मतकको बेच सकते है, वे देशको बेचने अथवा बरबाद करनेमे क्यो हिचकेंगे ?

सुना, कि किस तरह रंगीन ख़ानकाहोंमें[1]
जमीरे-ज़ुहोद[2] है लिथड़ा हुआ गुनाहोसे

सुना, कि कितनी सदाकतसे मसजिदोके इमाम
फ़रोख़्त करते है बेख़ौफ़ फतवाहा-ए-हराम

जो बे दरेग ख़ुदाको भी बेच देते हैं
ख़ुदा भी क्या है हयाको भी बेच देते हैं
नमाज जिनकी तिजारतका एक होला है
ख़ुदाका नाम ख़राबातका[3] वसीला है

—अदम

मुसलिमलीगकी साम्प्रदायिक घातक मनोवृत्तिके परिणामस्वरूप भारतका विभाजन होनेके कारण जितनी अधिक सख्यामे हिन्दू-मुसलमानोको अपनी-अपनी जन्म-भूमियाँ और पूर्वजोकी क्रीड़ास्थलियाँ जिस बेबसीमे छोड़नी पडी, उसकी याद भुलाये नही भूलती। एक चवक-सी, एक टीस-सी सीनेमे बराबर मालूम होती रहती है। भारत-विभाजनके तीन वर्ष बाद भी रामकृष्ण मुजतर यह कहनेपर मजबूर हुए—

---

[1]पीरो-फकीरोके निवासस्थानमे, [2]पाखण्डी आत्मा; [3]शराब-खानोंके साधन हैं।

उजड़के आये हैं जो वतनसे, उन्हे ज़रा इक नज़र तो देखो।
अभी तक उन अहलेगमकी आँखोंमें आँसुओंकी नमी मिलेगी ॥

इतनी अधिक जन-धनकी आहुति लेनेके बाद भी साम्प्रदायिक देवी अभी तृप्त नही हुई है। आज भी उसका विकराल मुँह खुला हुआ है। इसीसे खीझकर 'मुल्ला' साहब यह अहद करने पर मजबूर हुए हैं—

तुझे मज़हब मिटाना ही पड़ेगा रू-ए-हस्तीसे।
तेरे हाथो बहुत तौहीने-आदम होती जाती है॥

इन धर्मके ठेकेदारो और मजहबी दीवानोद्वारा इन्सानियतकी ऐसी मिट्टी खराब हुई है कि—

कुबूल करते न हम अज़लमे किसी तरह यह लिबासे-इन्साँ।
खबर जो होती कि पस्त इस दर्जह फितरते-आदमी[1] मिलेगी॥

—आरिफ बाँकोटी

इन्सानियत खुद अपनी निगाहोंमें है ज़लील।
इतनी बुलन्दियोपै तो इन्साँ न था कभी!

—जगन्नाथ आज़ाद

इन्सान, इन्सान नही रहा, बकौल शम्स कुरैशी—

जिन्हे समझते थे हम मुहज़्ज़ब, वोह वहशियोसे भी पस्त निकले

यदि मनुष्य, मनुष्य न बना और उसने विवेक-दीपक हाथमे नही लिया तो—

चराग़ इन्सानियतके हरसू[2] न जबतक इन्साँ जला सकेंगे।
रहेगा छाया हुआ अँधेरा, फिज़ा[3] भी तारीक[4] ही मिलेगी॥

—वारिस उलकादिरी

---

[1]मानव-स्वभाव, [2]चारो तरफ, [3]वातावरण, [4]अँधेरी।

स्वराज्य-अमृतपान करनेके लिए भारतीय बहुत उत्सुक और अधीर थे। अर्द्धशतीतक निरतर सघर्ष करनेके बाद स्वराज्य हाथ लगा, परन्तु उसके साथ सम्प्रदायवाद विष भी पल्ले पडा। विजयोन्मादमे विवेक

स्वराज्य-प्राप्ति

विसारकर इसी विषको प्रथम पान कर लिया गया। बापूके सुझानेपर स्वराज्यामृत भी गलेमे उतार लिया गया, किन्तु अमरत्व प्राप्त न हो सका। विष और अमृत शरीरमे पडे-पडे परस्पर विरोधी कार्य कर रहे है। एक घुटन-सी, एक वेदना-सी, एक टीस-सी, एक चुभन-सी, महसूस हो रही है। स्वराज्यके सम्बन्धमे जनताके मनमे वहुत मधुर एव मोहक आशाये थी—

चमनसे जौरे-ख़िज़ाँ मिटेगा, बहारको ज़िन्दगी मिलेगी।
हँसेंगे फूल और खिलेगी कलियाँ, फिज़ाओंको ताज़गी मिलेगी॥
—नसीम भरतपुरी

यह सोचते थे सहर[1] जो होगी, तो इक नई ज़िन्दगी मिलेगी।
सकून[2] दिलको, जिगरको राहत[3], निगाहको रोशनी मिलेगी॥
चमनकी इक-इक रविशपै हमको, दुलहनकी-सी दिलकशी मिलेगी।
कदम-कदमपै खिलेंगे गुचे चहारसू ताज़गी मिलेगी॥
न होगा फिर बागबाँसे शिकवा, न दस्ते-गुलचींसे कुछ शिकायत।
समझ रहे थे यह अहले-गुलशन, हँसी मिलेगी, ख़ुशी मिलेगी॥
—मशहूद मुफ़्ती

वतनको आज़ादियाँ मयस्सर हुई तो इतना ही हमने जाना।
ख़ुशी-ख़ुशी ज़िन्दगी कटेगी, दिलोंको ख़ुरसन्दगी[4] मिलेगी॥
गिज़ा मिलेगी, मिलेगा कपड़ा, जो चाहेगा दिल वही मिलेगा।
उठा ग़ुलामीका सरसे साया, दिलोंको अब ख़ुर्रमी[5] मिलेगी॥
—महमूद मुज़फ़्फ़रपुरी

[1]सुबह; [2]चैन; [3]आराम-चैन; [4]ख़ुशी; [5]शादाबी, तरोताज़गी।

न जाने कितनी साधनाओ, तपस्याओ, बलिदानोके बाद स्वराज्य-बसन्त आया, परन्तु अपने साथ प्रलयकारी आँधियाँ भी लेता आया। भारत-विभाजन, हत्याकाण्ड, नारी-अपहरण, देश-निष्कासन आदि बलाये उसके साथ इस तरह घुली-मिली आई कि बसन्तोत्सव पतझडमे परिवर्तित हो गया—

नई सहर[1] लाई थी सँदेसा कि अब नई जिन्दगी मिलेगी।
किसे ख़बर थी हयात[2] ताज़ा लहूमें लिथड़ी हुई मिलेगी॥

—मंज़र सिद्दीक़ी

कफ़ससे छुटनेपै शाद थे हम, कि लज़्ज़ते-जिन्दगी मिलेगी।
यह क्या ख़बर थी बहारे-गुलशन लहूमें डूबीहुई मिलेगी॥

—अबुल मजाहिद 'ज़ाहिद'

ज़माना आया है हुर्रियतका[3], चमनमें हरसू[4] यही था चर्चा।
किसीको इसका गुमाँ नहीं था कि दुःखभरी जिन्दगी मिलेगी॥

—महमूद मुज़फ़्फ़रपुरी

जो मुल्कमें इन्क़लाब आया तो, क़त्लो-ग़ारतके साथ आया।
समझ रहे थे समझनेवाले कि इक नई जिन्दगी मिलेगी॥
उदासियोने उजाड़ डाला कुछ इस तरह बाग़ आरज़ूका।
न ताज़ा दम इसमें गुल मिलेगा, न मुसकराती कली मिलेगी॥

—सरीर काबरी गयावी

हुई न थी जब नसीब क़ुरबत सुहाने कितने थे ख़्वाबे-उल्फ़त।
कि हुस्नकी हर अदामें रक़्साँ[5] नई-नई जिन्दगी मिलेगी॥

—क़मर नअ्मानी

---

[1]सुबह, [2]नवजीवन; [3]आज़ादीका, [4]सर्वत्र, [5]नृत्य करती हुई।

किया था आज़ादि-ए-वतनका बड़ी मसर्रतसे ख़ैर मक़दम ।
किसे था इसका यक़ी कि अंजामेकार ग़ारत गरी मिलेगी ॥
—नैय्यर

न था यह वहमो-गुमाँ भी 'साग़र' बहार आयेगी जब चमनमे ।
तो पत्ता-पत्ता तड़प उठेगा, कली-कली शबनमी[1] मिलेगी ॥
—साग़र अन्सारी

बड़ी उम्मीदें, बहुत थे अरमाँ कि होंगे सैरे-चमनसे शादाँ ।
बहार आई तो क्या ख़बर थी कि हमको आशुफ़्तगी[2] मिलेगी ॥
—मफ़्तूँ कोटवी

वह दौर आया है जिसका इन्साँ, कभी तसव्वुर[3] न कर सका था ।
किसे ख़बर थी कि एक दिन यूँ, बलामे दुनिया घिरी मिलेगी ॥
—नुसरत करलोवी

ग़रीब साहिलसे[4] कोई पूछे जो हाल दरियाने कर दिया है ।
करोगे मौजोंका जब नज़ारा मिज़ाजमें बरहमी मिलेगी ॥
—मुनव्वर लखनवी

स्वराज्य-प्राप्तिसे पूर्व जनसाधारणका विश्वास था कि जीवनोपयोगी सभी आवश्यकीय वस्तु सुलभ और सस्ती हो जायेगी । युद्धजनित अस्थायी मँहगाई विलीन हो जायगी ।

कॉग्रेसकी ओरसे जब नमक-जैसी सस्ती वस्तुपरसे टैक्स उठानेका आन्दोलन चलाया गया था, तब लोगोकी आम धारणा बन गई थी कि टैक्सोका अभिशाप समाप्त कर दिया जायगा । यह किसीको आभासतक

---

[1]अश्रुपूर्ण, [2]परेशानी; [3]कल्पना; [4]किनारेसे ।

न हुआ कि नमकके अतिरिक्त सभी वस्तुओंपर कई-कई टैक्स लाद दिये जायेंगे। इनकमटैक्स, मृत्युटैक्स, सेल्सटैक्स, एक्साइज़ ड्यूटी आदि भिन्न-भिन्न टैक्स नित नये बढते जायेंगे। रेलवे और पोस्टआफिसके किराये घटनेके बजाय बढते चले जायेंगे।

जमाना वाकिफ़ न था कुछ इससे कि ऐसा कहते-गरा[1] पड़ेगा।
जो चीज़ मिलती थी चार पैसोंको अशर्फी पर वही मिलेगी॥
यह क्या ख़बर थी कि फ़ाका मस्तीमें सत्रपोशी[2] भी होगी मुश्किल।
अमा को[3] जब होंगी इल्तजायें[4] तो कत्लो-गारत गरी मिलेगी॥

—सरीर काबरी गयावी

बहारमें जानते थे साक़ी! न बाबे-मैख़ाना[5] बन्द होगा।
यह क्या ख़बर थी कि मैकशोंको शराब तिश्ना लबी[6] मिलेगी॥

—ज़ाबिर फ़तहपुरी

वही है फ़ाकोंकी जब्रसामानियोंसे इफ़रादकी हलाकत।
मेरा गुमाँ था ग़लत कि आज़ाद होके आसूदगी मिलेगी॥

—ख़लीक ईयोलवी

जनताके जब स्वराज्य सम्बन्धी स्वप्न भग हुए तो वह उन नेताओंसे चिढ गई, जो लम्बे-लम्बे वायदे करते हुए और जनताके जज्बातको उभारते हुए थकते ही न थे।

कहाँ हैं अब वोह जो कह रहे थे कि "दौरे-आज़ादमें वतनको—
नये नजूमो-कमर[7] मिलेंगे, नई-नई जिन्दगी मिलेगी॥

—आरिफ़ बाँकोटी

---

[1]भीषण अकाल, [2]वस्त्राभावमें गुप्तांगोंका ढकना भी कठिन होगा, [3]सुख-शान्तिके लिए, [4]प्रार्थना को जायेंगी तो, [5]मधुशालाका द्वार, [6]प्यास बढानेवाली, [7]नवीन नक्षत्र-चन्द्रमा।

स्वराज्यसे पूर्व लोगोका विश्वास था कि परस्पर भेद-भाव नही रहेगा। हर भारतवासीको समान अधिकार होगा—

जो राज़[1] आज़ादि-ए-वतनमे निहाँ[2] था कौन उसको जानता था।
कि इक तरफ़ ख़्वाजगी[3] मिलेगी तो इक तरफ बन्दगी[4] मिलेगी॥
यही है जमहूरियतके[5] मानी तो फिर गुलामीका क्या गिला है।
किसीको गम होगा और किसीको मसर्रते-दायमी[6] मिलेगी॥
—सरीर कावरी

शगुफ़्ता बर्गेहाय गुलकी[7] तहमे नौके-ख़ार[8] है।
ख़िज़ाँ[9] कहेंगे फिर किसे अगर यही बहार है॥
—जोश मलीहाबादी

वही बाकी है अब तक बन्दिशोकी सिलसिलाबन्दी।
कदम बन्दी, जबाँबन्दी, नजर बन्दी, सदाबन्दी॥
यह हुर्रीयत[10] कहाँ है, हुरियतकी है हवाबन्दी।
गुलामी हो गई रुख़सत, मगर बाकी है पाबन्दी॥
गलेसे तौक उतारा पाँवमे जजीर पहनादी।
तो फिर मै पूछता हूँ, क्या यही है दौरे-आज़ादी॥
—सीमाब अकबराबादी

फिज़ायें[11] सोच रही है कि इब्ने-आदमने[12]।
ख़िरद[13] गवाँके, जुनूँ आज़माके क्या पाया?
वही शिकस्ते-तमन्ना वही गमे-ऐय्याम।
निगारे-जीस्तने[14] सब कुछ लुटाके क्या पाया॥
—साहिर लुधियानवी

---

[1]भेद, [2]निहित, [3]किन्हीको हुकूमत, [4]किन्हीको गुलामी; [5]प्रजातन्त्रताके, [6]स्थाई ख़ुशियाँ, [7]खिले हुए फूलोकी तहोमें, [8]काँटे छिपे हुए हैं; [9]पतझड़, [10]स्वतन्त्रता, [11]हवायें, [12]मानव-पुत्रने; [13]बुद्धि खोके, [14]जीवन ऐश्वर्य्यने।

सहरका[1] मुजदा[2] सुनानेवालो ! तुलूअ[3] बेशक सहर[4] हुई है।
मगर वोह किस कामकी सहर जो चुराले कुटियाओंका उजेला ॥
—कैफी

ख्वाब जख्मी है उमगोके कलेजे छलनी
मेरे दामनमें हैं जख्मोके दहकते हुए फूल
अपनी सदसाला तमन्नाओंका हासल है यही ?
तुमने फरदौसके[5] बदलेमें जहन्नुम[6] लेकर
कह दिया हमसे "गुलिस्ताँमें बहार आई है"
किसके माथेसे गुलामीकी सियाही छूटी ?
मेरे सीनेमें अभी दर्द है महकूमीका[7]
मादरे-हिन्दके चेहरे पै उदासी है वही
—सरदार जाफिरी

वही कस्मपुरसी, वही बेहिसी आज भी क्यो है तारी।
मुझे ऐसा महसूस होता है यह मेरी महनतका हासिल नही है ॥
—अख्तर उल ईमान

जमहूरियतका[8] नाम है जम्हूरियत कहाँ ?
फताइते- हकीकते[9]-उरियाँ[10] है आजकल ॥
काँटे किसीके हकमें किसीको गुलो-समर।
क्या खूब अहतमामे-गुलिस्ताँ[11] है आजकल ॥
—जिगर मुरादाबादी

सूरज चमका आजादीका लेकिन तारीकी[12] कम न हुई।
पुर हौल अँधेरे गुरबतके कुछ और भी बढ़ते जाते हैं ॥
—मंजर सिद्दीकी

---

[1]प्रात काल होनेका; [2]शुभ सन्देश, [3]उदय, [4]सूर्य, सुबह; [5]स्वर्गके, [6]नरक, [7]गुलामीका, आधीनताका, [8]आजादीका [9]वास्तविकता, [10]नग्न, [11]चमनका प्रवन्ध, [12]अँधेरी।

न जाने हमनशी[1] ! यह बदशगूनी रंग क्या लाये ?
कि गुलशनमें बहार आते ही शबनम[2] अश्क[3] बरसाये ॥
मुबारक सुबह हो लेकिन, चमनवालो ! यह खदशा[4] है ।
कि सूरजकी तमाज़तसे[5] कहीं गुलशन न जल जाये ॥

—नाज़िश परतापगढ़ी

स्वतन्त्रता रूपी दुलहन वरण करनेसे पूर्व काश उसे देख लिया होता—

यह इज़्तराब[6] ! यह शौके-उरूसे-आज़ादी[7] !!
उठाके देख तो लेना था परद-ए-महमिल[8] ॥

—हफीज़ होश्यारपुरी

काश स्वतन्त्रता-दुलहनका अन्तरग भी इतना ही मोहक होता जितना कि उसका वाह्य आवरण था—

काश ऐ महमिलनशी ! खुलता न यूँ तेरा भरम ।
हाय कितनी दिलनशीं थी परद-ए-महमिलकी बात ॥

—नाज़िश परतापगढ़ी

स्वतन्त्रता मिलनेके बाद जो सर्वत्र एक असतोष-सा एक दम घोटू धुआँ-सा फैला हुआ है, उसके कई कारण है—

१—बहुत-से ऐसे व्यक्ति जो स्वतन्त्रता-सग्राममे वरबाद हो गये, स्वतन्त्रता मिलनेपर भी उनकी वही शोचनीय स्थिति रही। किसीने उनके आँसू तक नही पूँछे। इन आँसुओको वे शायद चुपचाप पी भी जाते, यदि उनके साथी उनके दु ख-शोकमे समवेदना प्रकट कर सकते, किन्तु

---

[1]पड़ोसी; [2]ओस, [3]आँसू; [4]भय, सन्देह, खटका; [5]प्रचण्ड धूपसे, [6]उत्सुकता; [7]स्वतत्रतारूपी दुलहनके वरण करनेका चाव, [8]महमिलका परदा।

वे इतने ऊँचे और महान हो गये कि उन्हे इनके आँसुओको पूछनेका अवकाश ही नही मिला। उद्घाटन-समारोहो, भोजो, जुलूसो, व्याख्यान-सभाओ और अपने पदको सुरक्षित बनाये रखनेके प्रयत्नो आदिमे वे बेचारे इतने लीन और व्यस्त हो गये कि उन्हे यह खयाल तक न रहा कि स्वतन्त्रताकी खिलअत पहने हुए, जिन लाशोपरसे हमारा जुलूस गुज़रा है, उनके परिवारोकी सिसकियाँ थामना भी हमारा फर्ज है। वही सिसकियाँ आज सर्वत्र सुनाई दे रही है। काश उन्हे इतना आभास हुआ होता—

उठ भी सकती हैं दफअतन लाशें।
जिनपै मसनद बिछाये बैठे हैं॥
—कैफी आजमी

२—बहुत-से ऐसे व्यक्ति, जिनकी पसीनेकी एक भी बून्द स्वराज्यके लिए नही गिरी; अपितु स्वराज्य-आन्दोलनको कुचलनेमें कोई प्रयत्न शेष नही छोडा। वे मालामाल हो गये, ऊँचे-ऊँचे पदोपर प्रतिष्ठित बने रहे और बहुत-से ऐसे व्यक्ति जो स्वतन्त्रतादेवीका प्रसाद पानेके सर्वथा अधिकारी थे, मुँह देखते रह गये। इन मुँह देखनेवालोके हृदयोसे भी कुछ इस तरहके उच्छ्वास निकलते रहते है—

क्या गुलिस्ताँ[1] है कि गुंचे तो हैं लबे-तिश्न-ओ-ज़र्द[2]।
खार आसूद-ओ-शादाब[3] नजर आते हैं॥
—जाँ निसार 'अख़्तर'

ऐसे ही उपेक्षितोके हृदयोसे ऐसे उद्गार भी प्रकट होते रहते है—

हरम हमीसे, हमींसे हैं, आज बुतखाने।
यह और बात हैं दुनिया हमें न पहचाने॥
—अज़ीज वारिसी

---

[1]चमनकी व्यवस्था तो देखो, [2]फूल तो प्यासे और मुरझाये हुए है, [3]और काँटे प्रफुल्ल।

जो स्वार्थी जनताको दोनो हाथोसे लूट रहे है, उन्हे देशके उजडनेका क्या गम ?

ख़बर हो कारवाँको[1] मंज़िले-मक़सूदकी[2] क्योकर।
बजाये रहनुमाई[3] रहज़नी है[4] आम ऐ साकी ॥

—अदीब मालीगाँवी

३—स्वराज्यसे पूर्व जो सुख-स्वप्न देखा जा रहा था, वह स्वराज्य मिलनेपर भग हो गया। वही मँहगाई, वही पुलिस-राज्य। देशकी स्थिति सम्भलनेके बजाय उत्तरोत्तर बिगडती गई। रिश्वतख़ोरी, चोर-बाज़ारी, सिफारिशोकी लानत, लूटमार, डाकेजनी, अपहरण, अव्यवस्था आदिकी बाढ-सी आगई—

फिज़ा चमनकी कुछ ऐसी बदली, गुलो-समनका पता नही है।
जो दुश्मने-रहज़नी थे पहले, ख़ुद उनमें अब रहज़नी मिलेगी ॥
नई है मै और नये है सागर, नई है बज़्म और नया है साकी।
मगर जो पहले थी मै-कशोमें वोह आज भी तिश्नगी मिलेगी ॥

—नसीम भरतपुरी

गरीब जनताको स्वराज्यसे क्या मिला—

मगर इन दरख़्तोके सायेमें ऐ दिल !
हज़ारो बरसके यह ठिठुरे-से पौदे।
यह है आज भी सर्द, बेजान, बेदम।
यह है आज भी, अपने सरको झुकाये ॥

—जज़बी

---

[1]यात्रीदलको, [2]लक्षपर पहुँचनेकी, [3]पथप्रदर्शकीके बजाय; [4]यात्रियोको लूटा जा रहा है।

कौन कहता है कि स्वतत्रताकी बहार नही आई ? आई और जरूर आई। हाँ यह बात दूसरी है कि वह जन साधारणकी कुटियाओमे नही आई—

बहार आई, जरूर आई, पर अपनी बस्तीसे दूर आई।
वहाँ उगाये जमीने सब्जे, जहाँ कोई दीदावर[1] नही है ॥
—शफ़ीक जौनपुरी

कुछ इस तरहसे बहार आई है कि बुझने लगे।
हवा-ए-लाला-ओ-गुलसे चरागे-दीद-ए-दिल ॥
रवाँ है काफिला, बेदरा-ओ-बेमकसूद।
जो दिल गिरफ़्ता है राही, तो रहनुमा गाफिल ॥
—हफीज होश्यारपुरी

४—भारत-विभाजनके कारण जिन्हे अपने बसे-बसाये घर छोडने पडे और स्वराज्यके बाद भी जिन्हे इधर-उधर भटकना पडा, उनकी हाय भी आकाशमे गूंज रही है—

यह फकत आँसू नही, ऐ चश्मे जाहिर बीन दोस्त !
अपनी पलको पै लिये बैठे है इक अफसाना हम ॥
—जगन्नाथ आजाद

५—वे मुस्लिम लीगी जो दिनमे सैकडो बार हाथ उठा-उठाकर पाकिस्तान बननेकी दुआएँ माँगते थे। किसी भी वजहसे वे पाकिस्तान न जा सके और भारतमे रहनेपर गैर मुसलमानोकी बहु सख्याके कारण, पहिले जितनी अधिक न तो सरकारी नौकरियाँ हथिया पा रहे है और न मनमाने फित्ने ही उठा पा रहे है। यद्यपि वे अब भी भारतमे रहते हुए 'भारत मुर्दाबाद, और 'पाकिस्तान जिन्दाबाद' के नारे लगाते रहते है, और

[1] पारखी देखनेवाला।

पचमॉगी कार्य कर रहे हैं। फिर भी उनके मनमे पड़ोसी जातियोंको देख-देखकर जो ईर्ष्याकी भावना उठती रहती है। वह उनके लेखो, नज्मो, गजलो आदिसे ध्वनित होती रहती है। यह लोग अपने देशमें रहते हुए भी अपनेको बेगाना समझते हैं।

६—वे साम्यवादी जो भारतीय होते हुए भी रूसको अपना माता-पिता समझते हैं। भारतीय प्रजातन्त्रके विरुद्ध गद्य-पद्य द्वारा असन्तोष फैलाते रहते हैं। यहाँ तक कि १९४७ के प्रथम स्वतन्त्रताके उत्सवको देखकर वे यह कहनेका भी साहस कर बैठे—

यह जश्न[1], जश्ने-मसर्रत[2] नही, तमाशा है।
नये लिबासमें निकला है रहज़नीका[3] जुलूस॥

—साहिर लुधियानवी

राष्ट्र-पिताकी शहादत

सुरो-असुरोने एक बार समुद्र मन्थन किया तो अमृतके साथ विष भी निकला। उस विषको अकेले महादेवने पी लिया और अमृत औरोके लिए छोड दिया। अर्द्धशती तक निरतर सघर्ष करनेके बाद भारतको भी स्वराज्यामृत और सम्प्रदाय-वाद-गरल प्राप्त हुए। भारत-वासियोकी अनेक जन्म-जन्मान्तरोकी तपश्चर्याके फलस्वरूप उनका महामानव भी गरल पीनेको आगे बढा। वह उन्हे विजयोत्सव मनाने और स्वच्छन्दतापूर्वक स्वराज्य-सेवन करनेको छोडकर एकान्तमे बैठकर गरल पान कर रहा था कि उसका यह गरल-पान भी न देखा गया। अमृतको छोडकर उस गरलपर पिल पडे। जब गरल आसानीसे नही छीना जा सका तो वरदान पाये हुए राक्षसके समान हमने स्वय अपने वर-दाता महामानवको मार डाला। विश्वकी इस दीप-ज्योतिके बुझनेसे वकील अर्श मलसियानी—

---

[1]उत्सव; [2]खुशीका उत्सव नही, [3]लुटेरेपनका।

जमीने-हिन्द थर्राई, मचा कोहराम आलममें।
कहा जिस दम जवाहरलालने "बापू नहीं हममें"॥
फलक काँपा, सितारोकी जियामें[1] भी कमी आई।
जमाना रो उठा, दुनियाँकी आँखोंमें नमी आई॥

राष्ट्रपिता बापूको विश्वभरने श्रद्धाजलियाँ समर्पित की। भारत और पाकिस्तानके उर्दू-शायरोने भी बहुत अधिक श्रद्धाके फूल चढाये और चढा रहे है। प्रसगवश उनमे-से चन्द नज्मोके थोडे-थोडे अशआर यहाँ दिये जा रहे है—

महात्मा गान्धी—

यह क्या हुआ कि अँधेरा-सा छा गया इकबार।
उदास हो गई सड़कें उजड़ गये बाजार॥
बढ़ा रही है उरूसाने-हिन्द[2] अपना सिंगार।
ठहर गई है सरे-राह वक़्तकी रफ़्तार॥
सकूते-शाममें[3] इकरगे बेकसी[4] क्यो है?
यह आज नब्जे-तमद्दुन[5] रुकी-रुकी क्यो है?

खबर यह है कि हकीके-वफाका[6] खून हुआ।
शहीद हो गई ग़ुरबत[7], हयाका खून हुआ॥

पुकारता है जमाना दुहाई भारतकी।
चितामें झोक दी किसने कमाई भारतकी?

---

[1]चमकमे, [2]भारतीय दुलहन, [3]सन्ध्याकी शान्तिमे; [4]असहाय स्थिति; [5]सभ्यताकी नाडी, [6]नेकीके वास्तविक रूपका; [7]भोलेपनका वलिदान हो गया।

यह किसके ख़ूनके धब्बे हैं आदमीयतपर ?
मुक़ामे-हैफ़[1] है ऐ हिन्द ! तेरी क़िस्मतपर ॥

. . . .

है गुमरहीको[2] ख़ुशी यह कि रहनुमा[3] न रहा।
भँवरमें आई जो किश्ती तो नाख़ुदा[4] न रहा ॥

. . . . . .

लिया ख़िराज[5] अक़ीदतका[6] जिसने दुश्मनसे।
मिलादी वक़्तकी रफ़्तार दिलकी धड़कनसे ॥

. . . .

झुकादी गरदनें मग़रूर कजकुलाहोंकी[7]।
झपक रही थी पलक जिससे बादशाहोंकी ॥

. . . .

ग़रज़ कि आँखपै परदा जो था उठाके गया।
दिलोंकी ईंटसे मन्दिर नया बनाके गया ॥

. . .

जो डूब जाता है सूरज तो रात होती है।
ख़ता मुआफ़ हो शबनम[8] इसी पै रोती है ॥

.

यह क्या कि जेठमें जब प्यास तेज़ हो लबकी।
तो सूख जाय उसी वक़्त जल भरी नद्दी ॥

.

चढ़े जो चाँद कभी लेके चाँदनी अपनी।
तो उसकी फ़िक्रमें मँडलाये हर तरफ़ बदली ॥

—जमील मज़हरी एम० ए०

---

[1]शर्मकी बात है, [2]पथभ्रष्टताको; [3]पथप्रदर्शक; [4]नौका-खिवैया, [5]कर, टैक्स, [6]श्रद्धा विश्वासका, [7]अभिमानसे ऊँचा मस्तक रखनेलोकी, [8]ओस ।

महात्मा गाधीका कत्ल—

कुछ देरको नब्जे-आलम भी चलते-चलते रुक जाती है।
हर मुल्कका परचम[1] गिरता है, हर कौमको हिचकी आती है॥
तहजीबे-जहां[2] थर्राती है, तारीखे-बशर[3] शरमाती है।
मौत अपने किये पर खुद जैसे दिल ही दिलमें पछताती है॥
इन्सां वोह उठा जिसका सानी सदियोंमें भी दुनिया जन न सकी।
मूरत वोह मिटी नक्काशसे[4] भी जो बनके दुबारा बन न सकी॥

हाथोंसे बुझाया खुद अपने वोह शोल-ए-रूहे-पाक वतन[5]।
दाग इससे सियहतन कोई नहीं, दामन पर तेरे ऐ खाके वतन!
पैगामे-अजल[6] लाई अपने उस सबसे बड़े मुहसिनके[7] लिए।
ऐ वाये-तुलूए-आजादी[8]! आजाद हुए इस दिनके लिए?

नाशाद वतन! अफसोस तेरी किस्मतका सितारा टूट गया।
उँगलीको पकडकर चलते थे जिसके, वही रहबर[9] छूट गया॥

सीनेमें जो दे काँटोको भी जा, उस गुलकी लताफत क्या कहिये?
जो जहर पिये अमृत करके, उस लबकी हलावत[10] क्या कहिये?
जिस साँससे दुनिया जा पाये, उस साँसकी निकहत[11] क्या कहिये?
जिस मौतपै हस्ती नाज करे, उस मौतकी अजमत क्या कहिये?
यह मौत न थी कुदरतने तेरे, सर पर रक्खा इक ताजे-हयात[12]।
थी जीस्त[13] तेरी मैराजे-वफा[14], और मौत तेरी मैराजे-हयात[15]॥

---

[1]झण्डा, [2]विश्व-सभ्यता, [3]मानव इतिहास, [4]मूर्तिकारसे, [5]देशकी पवित्र आत्मारूपी आग, [6]मृत्यु-सन्देश, [7]हितैषीके, [8]हाय रे स्वतन्त्रताके सुनहरे प्रभात, [9]पथप्रदर्शक, [10]मिठास, [11]सुगन्ध, [12]अमर जीवनका ताज, [13]जिन्दगी, [14]नेकीका लक्ष, [15]जीवनका लक्ष।

मख़लूक़े-ख़ुदाकी[1] बनके सिपर मैदाँमे दिलावर एक तू ही।
ईमाँके पयम्बर आये बहुत, इन्साँका पयम्बर एक तू ही॥

· · · · · ·

तू चुप है लेकिन सदियोंतक गूँजेगी सदाये-साज़ तेरी।
दुनियाको अँधेरी रातोंमे ढारस देगी आवाज़ तेरी॥

—आनन्दनारायण मुल्ला

महात्मा गांधी—

ला ज़वाल इक टीस है सीनोंमें ग़म है मुस्तकिल।
भीगती जाती हैं आँखे, डूबते जाते हैं दिल॥
जगमगाते देशकी बरबाद शोभा हो गई।
नागहाँ कोई सुहागिन जैसे बेवा हो गई॥
ज़िन्दगी देकर वतनको सबका प्यारा उठ गया।
बेकसोंका, नेक लोगोंका, सहारा उठ गया॥
हाय यह क्या हो रहा है? हाय यह क्या हो गया।
हिन्दका बापू ज़मानेको जगाकर सो गया?
सब्र भी आ जायगा, यह ज़ख़्म भी भर जायगा।
हिन्द ऐसा देवता लेकिन कहाँसे लायगा॥
ख्वाब तकमें भी ख़याल इस बातका आता न था।
शान्तीका देवता गोलीसे मारा जायगा॥
पानी-पानी कर गई सबको यह ज़िल्लतनाक बात।
क्यो उठा? किस तरह उट्ठा? बापपर बेटेका हाथ॥
इक उजाला था कि जिसके दमसे रोशन, था यह घर।
क्या मिला पापीको सारे देशका सुख छीन कर॥

---

[1]ईश्वरकी सृष्ठी।

जुल्मतोंके ख़ौफ़से सूरज ठहर सकता नहीं ॥
मर गया पैग़म्बर पैग़ाम मर सकता नहीं ॥

—अदीब सहारनपुरी

नज़रे-गांधी—

६ बन्दोंमें से ४ बन्द

रो कि रोना मादरे-हिन्द ! आज तेरा है बजा ।
रो कि तेरी गोदमें है तेरे बेटेकी चिता ॥
रो कि जमनाके किनारे भाग तेरा जल गया ।
रो कि मिट्टीमें मिला जाता है फख्रे-एशिया[1] ॥
इस तरह हो लरजाबरअन्दाज़[2] हो जाये जहाँ ।
ज़लज़ला बरदोश[3] हो जायें ज़मीनो-आसमाँ ॥

ऐ हिमालय तू झुकाले अपना यह ताजे-सफ़ेद ।
टेकदे अपनी जबीं[4] और चूमले पाये-शहीद[5] ॥
उठ रही हैं कुलज़मे ग़मसे तेरे मौजे शहीद ।
नारवाँ होंगी अब उनपर जब्तकी मुहरें मज़ीद ॥

संगरेज़ोंके[6] जिगरका आख़िरी कतरा लुटा ।
आँसुओंके सैलसे[7] इक दूसरी गंगा बहा ॥

ऐ ज़मीं ! ऐ आसमाँ ! ऐ चान्द तारो, आफताब !
डाल लो आज अपने रुख़पर मातमी काली नकाब ॥
आँसुओंमें ढाल दो अपनी ज़ियाओंका शबाब !
ख़ूब रोलो भरके जी, है आज रोना ही सवाब ॥

---

[1]एशियाका अभिमान, [2]तडप कर कयामतबरपा थर-थराहट पैदाकर; [3]प्रलय जैसे दृश्यसे, [4]मस्तक, [5]शहीदके चरण, [6]पत्थर-हृदयका; [7]बहावसे ।

नो-उरूसे-क़ौमियतका[1] लुट गया ताज़ा सुहाग।
आज तौक़ीरे-वतनको[2] खागई ख़ूँख्वार आग॥

. . . . . .

जिसकी पैशानीके बलसे सरनगूँ[3] शाही कुलाह[4]।
जिसकी पाये-अज़्मपर[5] पाबोस[6] था ईवाने-माह[7]॥
जिसकी अंगुश्ते-इशारे से थे अफरंगी तबाह।
जिसके दामनमें सियासत-साज़[8] लेते थे पनाह॥
ऐ अजल[9]! उस शै को छूनेसे तू घबराई नहीं।
ऐसे इन्सांके क़रीब आते भी शरमाई नहीं?

—अहमद अज़ीमाबादी

पैकरे-तहज़ीबे-इन्साँ—

१७ शेरमें से ४ शेर

वोह गान्धी जिसका सारे मुल्ककी गरदनपै अहसाँ था।
वोह गान्धी, कारनामा जिसका आ़लममें नुमायाँ[10] था॥
वोह गान्धी नीव डाली, जिसने आज़ादीकी भारतमें।
वोह गान्धी जो सिपहरे-सुलहका[11] महरे-दरख़्शाँ[12] था॥
वोह गान्धी हिल गईं जिससे शहन्शाहीकी तामीरें[13]।
वोह गान्धी इज़्मो-इस्तक़लालका[14] जो मर्दे-मैदाँ था॥
रवा रखता न था जो हाथ उठाना नौए-इन्साँ पर।
लगी गोली उसीके सीनये-आईने-सामाँ पर॥

—सरीर काबरी मीनाई

[1]नवीन राष्ट्ररूपी दुलहनका, [2]देशकी प्रतिष्ठाको, [3]नत; [4]शाहीताज; [5]दृढ़ चरणोंपर, [6]चूमता, [7]चन्द्रमा-महल, [8]राजनीतिज्ञ; [9]मृत्यु, [10]प्रकट, [11]शान्तिरूपी ढालका, [12]चमकता हुआ चन्द्रमा, [13]नीवें, जड़ें, [14]दृढ़ता, धैर्य्यका।

नजरे-अकीदत—

१५ शेरमें से तीन शेर

क्या बताऊँ दोस्तो ! इक हम सफर जाता रहा ।
राहमें बैठा हूँ मैं और राहबर जाता रहा ॥
जिसने की कौमो-वतनके वास्ते कुरबानियाँ ।
अमनो-आजादीका वोह पैगाम्बर जाता रहा ॥
जिसका जलवा आम था शाहो-गदाके[1] वास्ते ।
वोह फकीरे-बेनवा[2], वोह ताजवर जाता रहा ॥

—सद्दीक कानपुरी

नजरे-गाधी—

१४ रुबाइयोंमेंसे ४

वोह मुल्कका रहनुमा[3], वोह बूढा हादी[4] ।
दी जिसने गुलामीसे हमको आजादी ॥
छलनी हो उसीका गोलियोंसे सीना ।
दिल नोहासरा[5] है, रूह है फरियादी ॥

मीठे शब्दोंमें दिल लुभाता ही रहा ।
हँस-हँसके बुराइयाँ जताता ही रहा ॥
इस खन्दाबीनीको[6] कोई हद भी है ।
गोली खाकर भी मुसकराता ही रहा ॥

इक गमने तेरे भुलवा दिये ग़म सारे ।
हम भूल गये गुजिश्ता[7] मातम सारे ॥

---

[1]बादशाह-फकीरके; [2]शान्त फकीर, [3]नेता, [4]पथ-प्रदर्शक; [5]शोकसतप्त; [6]हँसमुख स्वभावको, [7]भूतकालीन ।

यह क़त्लकी तेरे गूँज अल्लाह-अल्लाह।
झुकवा दिये इस जहाँके परचम[1] सारे॥

पत्थर भी है इन्सानका दिल काँच भी है।
हाँ पापकी और पुनकी यहाँ जाँच भी है॥
सुनते थे कि दुनियामे नहीं साँचको आँच।
देखा यह मगर कि साँचको आँच भी है॥

—एजाज़ सिद्दीक़ी

प्रेरणात्मक शायरी

भारत-विभाजन, साम्प्रदायिक-हत्याकाण्ड, और स्वतन्त्रताके मधुर स्वप्न भंग होनेके कारण सर्वत्र-निराशा, निरुत्साह, असफलता, अकर्मण्यताकी घटायें छा गई, किन्तु हमारे नौजवान शायरोंने एक पलको भी हिम्मत नही हारी। अपने प्रखर कलाम-द्वारा उन घटनाओको अहर्निश छिन्न-भिन्न करनेमे लगे हुए है। वे आज इतने साहसी, पुरुषार्थी और स्वावलम्बी हो गये है कि उन्नति-मार्गमे बढनेके लिए खुदाके सहारेकी भी आवश्यकता नही समझते—

चमक ही जायगी तकदीरे-कायनात[2] इक रोज।
न हो खुदाकी मदद, आदमीकी जात तो है॥
जो काँप-काँप-सी उठती है तीरह-तीरह[3] फिज़ा।
पयामे-सुवह लिये जिन्दगीकी रात तो है॥

—अज्ञात

बढ़ो कि रंगे-चमन बदल दें, चलो-चलो हिम्मत आज़मायें।
जूनूकी[4] लौ और तेज कर दो, फ़सुर्दा[5] शमओंको फिर जलायें॥

—अज्ञात

---

[1]झण्डे; [2]ससारका भाग्य; [3]अँधेरा-स्याह वायुमण्डल, [4]उन्मादकी, जोशकी; [5]बुझे हुए दीपोकी।

अपने देशको छोड़कर जानेवाले महाजरीनको 'नज़ीर' बनारसी सचेत करते हुए कहते हैं—

वतनको तू छोड़ दे मगर क्या, ग़मे-वतन तुझको छोड़ देगा।
यहाँ तड़पती हैं आज लाशें, यहींपै कल जिन्दगी मिलेगी॥
तेरी गरीबीका क्या मुदावा[1] कि तू है अहसासका[2] सताया।
रहा अगर तेरा ज़हन[3] मुफलिस,[4] तो हर जगह मुफलिसी मिलेगी॥

दुःखमे ही सुख छिपा रहता है—

गिरेगी जब आसमांसे बिजली तो जल उठेगा चरागे-ख़िरमन[5]।
फुरेरा जब मौतका खुलेगा, तो दौलते-ज़िन्दगी मिलेगी।
—जोश मलीहाबादी

इन्हीं मसाइबकी[6] गोदमें पल रही है 'नाज़िश' मसर्रतें[7] भी।
इसी जहन्नुम कदेसे[8] इक रोज राह फरदौसकी[9] मिलेगी॥
—नाज़िश परतापगढ़ी

आपदाओसे घबराना इन्सानकी शानके ख़िलाफ है। मगर आजके इन्सानको न जाने यह क्या हो गया है—

ज़रा-सी ख़ातिर शिकस्तगीकी, नहीं है बर्दाश्त आदमीको।
कलीको वक़्ते-शिकस्त देखो तो मुसकराती हुई मिलेगी॥
—सीमाब अकबराबादी

कदम तो रख मंजिले-वफामे बिसात खोई हुई मिलेगी।
वहीं-कही नक़्शे-पाकी सूरत[10] पड़ी हुई जिन्दगी मिलेगी॥

---

[1]उपाय, इलाज, [2]हीनताके भावका, [3]चेतना शक्ति, मन; [4]दरिद्र, [5]खलिहानका दीपक, [6]आपदाओकी; [7]खुशियाँ, [8]नरकसे; [9]स्वर्गकी; [10]चरण-चिह्नोकी तरह।

हैं जौरे-सैयाद ही का सदका चमनकी हंगामा आफ़रीनी।
तबाहियाँ जिस जगहपै होंगी वहीं-कहीं जिन्दगी मिलेगी॥

—सिराज लखनवी

बदीको परखो मिलेगी नेकी, जो गमको समझो ख़ुशी मिलेगी।
जहाँ-जहाँ है घना अँधेरा, वहीं वहीं रोशनी मिलेगी॥
यह ना उमेदी यह बेयकीनी, यकीनो-उम्मीदकी झलक है।
इन्हीं अँधेरोंको पार करके यकीनकी रोशनी मिलेगी॥

—सागर निज़ामी

कदम बढ़ाओ ख़िज़ाँ नसीबो! वोह मंजिलें मुन्तज़िर है अपनी।
जहाँ पहुँचकर निगाहो-दिलको, बहारकी ताज़गी मिलेगी॥

—नरेशकुमार 'शाद'

शिकस्ता दिल हो न मेरे माली! वोह दिन भी नज़दीक आ रहा है।
कि फूल खिलते हुए मिलेंगे, फिज़ा महकती हुई मिलेगी॥

—शफ़ीक जौनपुरी

जो कैदो-बन्दे चमनसे घबराके आशियानेको छोड़ देगा।
करेगा जिस शाख़पर बसेरा, वही लचकती हुई मिलेगी॥
पुराने तिनकोंमें आँधियोंके मुकाबिलेकी सकत नहीं है।
उजड़ भी जाने दे आशियाना कि फिर नई जिन्दगी मिलेगी॥

—निसार इटावी

कभी तो इस जिन्दगी-ए-मुर्दापै रंग आयेगा जिन्दगीका।
कभी तो बदलेंगे दिल हमारे, कभी तो हमको ख़ुशी मिलेगी॥

—अर्श मलसियानी

अँधेरी रातोंमें रोनेवालोसे कह रही है शफ़क़की सुर्खी[1]।
न अब बहाओ कोई भी आँसू, तुम्हे नई रोशनी मिलेगी ॥
—जमनादास 'अख़्तर'

हज़ार ज़ुल्मत हो, कारवाने-सहरकी[2] आमद न रुक सकेगी।
इन्हीं अँधेरोंमें बज़्मेगेतीको[3] एक दिन रोशनी मिलेगी ॥
—गोपाल मित्तल

हज़ार नाकामियाँ हों 'नश्तर' हज़ार गुमराहियाँ हो लेकिन–
तलाशे-मंजिल अगर है दिलसे तो एक दिन लाज़िमी मिलेगी ॥
—हरगोबिन्ददयाल 'नश्तर'

अभी तो महवे-सितम हो लेकिन, वोह दिन भी आयेगा इक न इक दिन।
जफ़ाकी आँखोमें होगे आँसू, वफ़ाके लबपर हँसी मिलेगी ॥
—अकरम धौलपुरी

मुसीबतोंमें न हार हिम्मत, नज़रमें रख यह उसूले-फ़ितरत।
जो बादे-शब इक सहर भी होगी तो बादे-ग़म इक ख़ुशी मिलेगी ॥
—हरबससिंह अख़्तर

नवयुवकोकी प्रेरणात्मक शायरीका उल्लेख कहाँ तक किया जाय, अहर्निश इसीमे जीवन खपा रहे है और इसमे आश्चर्यकी कोई बात भी नही है। यह उम्र ही ऐसी है कि वे पिये नशा बना रहता है और असम्भव कार्य भी सम्भव कर डालती है, परन्तु जब हम 'असर' लखनवी-जैसे ७० वर्षीय वयोवृद्धकी यह ललकार सुनते है तो मन आशासे सचमुच ओत-प्रोत हो जाता है—

---

[1]सध्याकालीन सूर्यकी लाली; [2]प्रात कालरूपी यात्रीदलकी; [3]अँधेरे ससारको।

माना नसीब सो गये बेदार[1] तुम तो हो।
सोते हुए नसीब जगाते चले-चलो ॥
काँटोंको रौन्दते हुए शोलोंसे खेलते।
हर-हर क़दमपै धूम मचाते चले-चलो ॥
बुझते हुए चराग भी हैं कामके 'असर'!
शमएँ नई उन्हींसे जलाते चले-चलो ॥

इस दौरके शायरोने प्राय सभी आवश्यकीय एव सामयिक विषयोको नज्म किया है। विश्वमे घटनेवाली मुख्य-मुख्य घटनाओसे और विश्व-साहित्यसे उर्दू-शायर असर कुबूल करते रहे हैं। वे कूपमण्डूक न रहकर विस्तृत क्षेत्रमे उडान भरने लगे है। यही कारण है कि उर्दू-शायरी उत्तरोत्तर सम्पन्न होती जा रही है।

इस तरहकी इन्कलाबी और प्रगतिशील शायरीका क्रमबद्ध इतिहास हम 'शायरीके नये दौर' और शायरीके नये मोड' नामक अपनी नवीन पुस्तकोमे दे रहे है।

शेरो-सुख़नके पाँचो भागोमे गज़लपर विवेचन हुआ है और उक्त दोनो पुस्तकोमे नज्म-गीत आदिका अध्ययन प्रस्तुत किया जा रहा है। अत. हम आगेके पृष्ठोमे विषयके अनूकूल इस दौरकी केवल गज़लोके चुने हुए अशआर दे रहे हैं, ताकि इन दस वर्षोंकी गज़लकी प्रगतिका अनुमान किया जा सके[2]। इन अशआरकी विशेषताओपर विस्तार भयसे यहाँ कुछ न कहकर पाँचवे भागके सिंहावलोकनमे प्रकाश डाल रहे है।

१४ मार्च १९५४ ई०]

---

[1]सचेत; [2]जिस तरहके कलामके नमूने हमने इस परिच्छेदके पिछले पृष्ठोमे दिये है। उस तरहकी शायरीका विस्तृत विवेचन हमारी नवीन दोनो पुस्तकोमे मिलेगा। इस परिच्छेदमे तो प्रसगवश सकेतमात्र कर दिया है।

अकरम धोलपुरी

तमन्नामें, उदासीमें, ख़ुशीमें, गममें गुज़री है।
हयाते-इश्क हरदम इक नये आलममें गुज़री है।।
तरीके-ज़िन्दगीके पेचोख़म हमसे कोई पूछे।
कि हर साइत हमारी काविशे-पैहममें गुज़री है।।
ख़िज़ाँका रंज ही कैसा, गिला है फ़स्ले-गुलसे भी।
कि हमपर इक नई उफ़्ताद हर मौसममें गुज़री है।।
निशातो-ऐश ही को हम समझलें ज़िन्दगी क्योंकर ?
है आख़िर ज़िन्दगी वोह भी जो रंजोगममें गुज़री है।।

—निगार मार्च १९५३ ई०

जाँ निसार अख्तर

क्या गुलिस्ताँ है कि गुंचे तो हैं लब-तिश्नाओ-ज़र्द।
ख़ार आसूद-ओ-शादाब नज़र आते हैं।।
वही महफ़िल है, वही ज़ीनते-महफ़िल है मगर।
कितने बदले हुए आदाब नज़र आते हैं।।
बचके तूफ़ानसे साहिलपै पनाहे कब तक ?
अब तो साहिलपै भी गरदाब नज़र आते हैं।।

—आजकल फरवरी १९५० ई०

अजुम आजमी

मिलता नहीं सकून तो मिट जाइये मगर,
छुपकर अब इज़्तराबमें रोया न कीजिये।।

हो जाइये ज़लील खुद अपनी निगाहमें।
इतना कभी दमागको ऊँचा न कीजिये ॥
—आजकल उर्दू मार्च १९५३ ई०

अंजुम रिजवानी

होतें हैं बड़े क़िस्मतके धनी जो यह सदमे सह जाते हैं।
तूफ़ाने-हवादसमें वरना अच्छे-अच्छे बह जाते हैं ॥
—निगार मई १९५१ ई०

अजीज वारसी

तेरी तलाशमे निकले हैं आज दीवाने।
कहाँ सहर हो, कहाँ शाम यह ख़ुदा जाने ॥
हरम हमींसे, हमीसे है आज बुतख़ाने।
यह और बात है दुनिया हमे न पहचाने ॥

अदम

तख़लीके-कायनातके दिलचस्प जुर्मपर।
हँसता तो होगा आप भी यज़दाँ कभी-कभी ॥

बेकलीमें करार-सा क्यो है ?
हादसा ख़ुशगवार-सा क्यो है ?
उनको जिद है कि हम गरीबोंको।
दिलपै कुछ अख़्तियार-सा क्यों है ?
जिन्दगीकी हरेक तलख़ीसे।
जीनेवालोंको प्यार-सा क्यों है ?

आपकी पाकबाज आँखोमें ।
हलका-हलका खुमार-सा क्यो है ?

शिकन न डाल जबीपर शराब देते हुए ।
यह मुसकराती हुई चीज मुसकराके पिला ।।
सरूर चीजकी मिकदारपर नहीं मौकूफ ।
शराब कम है तो साकी ! नजर मिलाके पिला ।।
—निगार अप्रेल १९५२ ई०

अदीब सहारनपुरी

अताबो-जौरके मारे बहुत मिलेंगे मगर ।
हमें तबाह किया मुसकरानेवालोने ।।
भुला सके न हम उनको अगर्चे सुनते हैं ।
भुला दिया है खुदाको भुलानेवालोने ।।
सकूँ तो ले ही गये थे वोह छीनकर लेकिन—
तड़पने भी न दिया दिल बढ़ानेवालोने ।।
कफसमें रहके भी हम तो उन्हे न भूल सके ।
हमें भी याद किया आशियानेवालोने ?
इलाजे-दर्दसे कुछ और दर्द बढ़ ही गया ।
उन्हीका जिक्र किया आने जानेवालोने ।।
—निगार सितम्बर १९४७ ई०

न जाना था कि इकदिन पेश यह बातें भी आयेंगी ।
सितमके साथ याद उनकी सदा रातें भी आयेंगी ।।
शरारे पै-ब-पै उट्ठेंगे इन बेख्वाब आँखोसे ।
खबर क्या थी कुछ ऐसी चाँदनी रातें भी आयेंगी ।।

न काम हौसले आये न वलवले आये।
रहे-वफ़ामें कुछ ऐसे भी मरहले आये॥
हवासो-होश तो क्या, कायनात काँप गई।
कभी-कभी तो दिलोंमें वोह ज़लज़ले आये॥

दिलका यह तकाज़ा कि वोह जल्दीसे गुज़र जायें।
आँखोंकी तमन्ना कि वोह कुछ देर ठहर जायें॥
—निग़ार अगस्त १९४७ ई०

कौन इस तर्ज़े-जफ़ाये-आस्मांकी दाद दे।
बाग़ सारा फूंक डाला, आशियाँ रहने दिया॥

यह जोशे-बहाराँ, यह घटायें यह हवायें।
दीवाने न हो जायें अगर, लोग तो मर जायें॥

जितनी हविसकी अंजुमन आराइयाँ बढ़ीं।
उतने ही बाल शीशये-हस्तीमें आ गये॥

ख़िरदके शेव-ए-कारआगहीका हाल न पूछ।
जिस आईनेपै जिला की, वही ख़राब हुआ॥

—निगार अप्रेल १९५२ ई०

अदीब मालीगाँवी

उस जाने बहाराँने जबसे मुंह फेर लिया है गुलशनसे।
शाख़ोंने लचकना छोड़ दिया, गुंचे भी चटकना भूल गये॥

मज़ाके-ग़मेदिल नहीं हर किसीमें।
बहुत फ़र्क़ है, आदमी-आदमीमें॥

वही सलूक मेरे दिलसे तुम भी क्यो न करो।
चमनके साथ जो फस्ले-बहार करती है॥

तुम मेरी बात बनानेका इरादा तो करो।
इसके आगे मेरी तकदीर बने या न बने॥

हुस्न फूलोका है बाकी तो नशेमन लाखो।
चार तिनकोका तो ऐ बर्क ! चमन नाम नही॥

मुआमलाते-जवानी न पूछ ऐ हमदम !
लुटा सकून तो हासिल हुआ करार मुझे॥

मुझपै जो कुछ पड़ी, पड़ी, तुमने जो कुछ किया, किया।
तुमको मलाल हो तो हो, मुझको ख़याल भी नहीं॥
अपना अदा शनास बन, अपना जमाल भी तो देख।
तुझमें कमी है कौन-सी, तुझमें कोई कमी नहीं॥

मुहब्बतको अभी, फुर्सत नही, अपने नज़ारोसे।
लिये बैठी रहे बज़्मे-दो आलम दिलकशी अपनी॥

बिजलियाँ है कि मेरा हुस्ने-ख़याल।
कुछ उजाला है आशियानेपर॥

अभी आस टूटी नहीं है ख़ुशीकी।
अभी गम उठानेको जी चाहता है॥
तबस्सुम हो जिसमें नई जिन्दगीका।
वोह आँसू बहानेको जी चाहता है॥

ग़मेदिल अब इतना भी वढ़ता न जाये।
वोह देखें मुझे और देखा न जाये॥

दरिन्दोंमे हुआ करती है, अब सरगोशियाँ इसपर।
कि इन्सानोसे बढ़कर कोई, ख़ूँ आशाम क्या होगा ॥

—शायर जून १९४६ ई०

आरफ़ अदीबी मालीगाँवी

ख़बर हो कारवाँको मंज़िले-मकसूदकी क्योंकर ?
बजाये रहनुमाई रहज़नी है आम ऐ साक़ी !
वोह है मासूम जिनसे अंजुमनका नज़्म बरहम है।
हमींपर किसलिए आता है, हर इल्ज़ाम ऐ साकी !
चमनकी रौनके-मातमकनाँ थी जिनके हाथोसे।
उन्हीपर मौसमे-गुलका है फ़ैज़े-आम ऐ साकी !
लहूने जिनके ईवाने-वतनको रोशनी बख़्शी।
अभी तक उनके घरमें है सवादे-शाम ऐ साकी !

—शायर अप्रेल १९५० ई०

हरवंशनारायण अमन

उन्हींकी बज़्म सही, यह कहाँका है दस्तूर ?
इधरको देखना, देना उधरको पैमाने ॥

अनवर साबरी

कोई सुने न सुने इन्कलाबकी आवाज़।
पुकारनेकी हदों तक तो हम पुकार आये ॥

जहाँ ख़ुद ख़िज़्रे-मंज़िल राहे-मंज़िल भूल जाता है।
हमें आता है उन पुरपेच राहोसे गुज़र जाना ॥

इसीका नाम है मजबूरिये-दिल उनके कूचेमें।
न जानेकी कसम सौबार खा लेना, मगर जाना ॥

राजदारे-खुदी हो तो जाये,
हासिले-जिन्दगी हो तो जाये,
अमने-आलम तो मुश्किल नहीं है,
आदमी–आदमी हो तो जाये ॥

तू मेरे वास्ते एक और जहाँ पैदाकर।
यह जहाँ लग़जिशे-आदमके सिवा कुछ भी नहीं ॥

अफ़कर मोहानी

मैं कफसमें खुद ही सैयाद ! अभी आऊँगा पलटकर।
न मिला अगर चमनमें मुझे मेरा आशियाना ॥

अब्र अहसनी

जमानेमें फिर कौन होता हमारा।
अगर तेरा गम भी न देता सहारा ॥
यह सहरा वोह मंजिलका दिलकश नजारा।
कहाँ लाके पाये-शकिस्ताने मारा ॥
यह आवाज दी दोस्तने या कजाने।
जरा देखना मुझको किसने पुकारा ॥
गमो-दर्दपर बढके कब्जा जमा ले।
कि इसपर नही मुनअ़िमोका इजारा ॥

अगर अब भी जिल्लतमें गुजरे तो किस्मत।
खुदी भी हमारी खुदा भी हमारा ॥

अब्र गनौरी

न होते यह तो क्यों सैयाद होता, क्यों क़फ़स होता।
बड़ी दुश्वारियोंके बाद राज़े-बालो-पर जाना॥
यहींसे पड़ गई बुनियाद 'अब्र' अपनी तबाहीकी।
कि हमने उनके वादेको हदीसे-मुअ़तबर जाना॥

अयूब

जो हुस्नो-इश्क़की रुदादसे हैं बेगाने।
वोह क्या समझके चले आये, मुझको समझाने ?

अशअ़र मलीहाबादी

हरबार दिलने एक चोट खाई।
हरबार टूटी है पारसाई॥
ख़ाली सुराही, ख़ाली पियाले।
काली घटा तो बेकार आई॥
मैं-नोशियोंपर मैं-नोशियाँ हैं।
फिर भी नहीं है, ग़मसे रिहाई॥

अब सीख गया क़ैदी आदाब असीरीके।
मद्धम-सी कई दिनसे आवाज़े-सलासिल है॥

नशा तो है मगर अन्देश-ए-गुनाह नहीं।
घुले हैं, तेरी निगाहोंमें कैसे मैख़ाने॥
चमनमें बहे लाख शबनमके आँसू।
कली सीखती ही रही मुसकराना॥
—शायर मई १९५० ई०

मुहम्मदअलीख़ाँ असर

हज़ार ऐशकी सुबहें निसार है जिसपर।
मेरी हयातमें ऐसी भी इक शबेग़म है॥

मुहम्मद मुहसन असर

जिन्हे जुनूंमें भी रहता है पासे रुसवाई।
शऊरमन्दोंसे बेहतर है ऐसे दीवाने॥

असद भोपाली

ग़मेहयातसे जब वास्ता पड़ा होगा।
मुझे भी आपने दिलसे भुला दिया होगा॥
'असद' चलो कि बदल दें हयातकी तक़दीर।
हमारे साथ ज़मानेका फ़ैसला होगा॥

आग़ा सादिक़

अपने उभरे हुए जज़्बातसे बातें की हैं।
रातभर तारों भरी रातसे बातें की हैं॥
ज़िन्दगीके भी क़दम रुक गये चलते-चलते।
यूँ धड़कते हुए लमहातसे बातें की हैं॥
फ़र्ज़ करता हूँ कि इक बात कही है तूने।
और तसव्वुरमें उसी बातसे बातें की हैं॥

दिल भी क्या चीज़ है बहलाये बहलता ही नहीं।
और तो और ख़यालातमें बातें की हैं॥

—माहे नौ अगस्त १९५१ ई०

क़ाज़ी मुहम्मद मसरूफ़ आलम

उनके तसव्वुरातका अल्लाहरे करम !
तनहा न एक लमहेको रहने दिया मुझे ॥
कुछ लड़खड़ा गये थे क़दम बज़्मेनाज़में ।
उनकी नज़रने उठके सहारा दिया मुझे ॥
—आजकल अक्टूबर १९५० ई०

इकबाल सफ़ीपुरी

सब्ज़ा भी, कली भी, गुंचे भी, मौसम भी, घटा भी, जाम भी है ।
ऐसेमें काश तुम आ जाओ, ऐसेमें तुम्हारा काम भी है ॥

इकबाल अज़ीम

सब खोके भी हम कुछ पा न सके, वोह हमसे अलग, हम उनसे अलग ।
दुनिया जिसे देखे और हँसे, हम ऐसा तमाशा कर बैठे ॥
वोह दर्द नही, वोह हूक नही, वोह अश्क नहीं, वोह आह नहीं ।
गुल करके मुहब्बतके शोले, हम घरमें अँधेरा कर बैठे ॥
सावनकी झड़ी, घनघोर घटा, शादाब चमन, शादाब फ़िज़ा ।
इन सबका, करें हम क्या आखिर, जब तुम ही कनारा कर बैठे ॥
अंजामकी लज़्ज़त याद रही, आग़ाज़की शिद्दत भूल गये ।
साहिलके छलावेमें आकर, मौजोपै भरोसा कर बैठे ॥
पहलूमें लिये बैठे है वोह दिल, 'इकबाल' कि मूसा रश्क करे ।
जो तूरको भी रास आ न सकी, उस बर्क़को अपना कर बैठे ॥
—आजकल १ सितम्बर १९४५ ई०

इजहार मलीहाबादी

कभी भूलेसे बज्मो-इश्को-उल्फतमे अगर जाना ।
तो पहले ही हदूदे-कुफ्रो-ईमाँमें गुजर जाना ।।
किनारेसे किनारा कर लिया 'इजहारे'-तूफाँमें ।
बड़ी तौहीन थी अपनी, किनारेपर ठहर जाना ।।

इबरत

इधर आँख झपकी उधर ढल गई वह ।
जवानी भी एक धूप थी दोपहरकी ।।

इफ्तख़ार आजिमी

चमनमें नही हूँ, तो क्या ख़ूने-दिलसे ।
कफसमें गुलिस्ताँ बनाता रहा हूँ ।।
हवादसके इन ख़ारजारोमें हमदम !
गुलोंकी तरह मुसकराता रहा हूँ ।।
मुहब्बतकी तारीकिये-यासमें भी ।
चरागे-तमन्ना जलाता रहा हूँ ।।

—निगार मार्च १९५३ ई०

कतील

कोई ताबिन्दा किरन यूँ मेरे दिलपर लपकी ।
जैसे सोये हुए मजलूमपै तलवार उठे ।।

मेरे ग़मख्वार ! मेरे दोस्त !! तुम्हे क्या मालूम ?
जिन्दगी मौतकी मानिन्द गुजारी मैंने ।।

क़मर शेरवानी

कभी आशियाँकी तमन्ना मुसलसल।
कभी आशियाँ तक गये, लौट आये॥

कुछ ऐसी भी ख़ुनक रातें रही हैं।
सहर तक बस तेरी बातें रही हैं॥
तुझे देखा नहीं है फिर भी तुझसे।
मेरी अक्सर मुलाक़ातें रही हैं॥

जीनेवालोंको क्या ख़बर इसकी।
मरनेवाले किधरसे गुज़रे हैं॥

गाहे-गाहे तो होशवालोंपर।
हम भी दीवानावार हँसते हैं॥

ग़म दिये कायनातने क्या-क्या?
नाम बदले हयातने क्या-क्या?
रंग देखे मेरी तबाहीके।
आपके इल्तफ़ातने क्या-क्या?

—निगार अप्रेल १९५३ ई०

कमर भुसावली

मेरी जिन्दगी है वोह आइना, कई रूप जिसके बदल गये।
कभी अक्स जलवानुमाँ हुआ, कभी जलवे अक्समें ढल गये॥
यह तसव्वुरातकी महफ़िलें, यह तख़य्युलातके मशग़ले।
कभी आ गये तेरे पास हम, कभी और दूर निकल गये॥

न वोह सुबह है, न वोह शाम है, न पयाम है न सलाम है।
तेरी आँख मुझसे जो फिर गई, मेरे सुबहो-शाम बदल गये ॥
तू सम्भल-सम्भलके क़दम बढ़ा, कि यह राहे-इश्क है ए कमर !
जो बिगड़ गये तो बिगड़ गये, जो सम्भल गये तो सम्भल गये ॥

—शायर दिसम्बर १९४७ ई०

कमर

जो हुस्न इश्कमें गुम है, तो इश्क हुस्नमें गुम।
सवाल ये है कि अब कौन किसको पहचाने ॥

कदीर

तमाम उम्र रहे कुफ़्र-ओ-दींसे बेगाने।
हर एक राहको हम अपनी रहगुज़र जाने ॥
'कदीर' अपने ही जलवोंसे जो है बेगाने।
वह मेरे दिलकी तमन्नाका हाल क्या जाने ॥

कलीम बरनी

हट गईं नज़रोंसे नज़रें, मैकदा-सा लुट गया।
मिल गईं नज़रोंसे नज़रें, मैकशी होने लगी ॥
बारे-ख़ातिर गर न हो तो इस तरफ भी इक नज़र।
फिर मेरे दर्दे-मुहब्बतमें कमी होने लगी ॥
अव्वल-अव्वल छेड़ उनसे आँखों-आँखोंमें हुई।
आख़िर-आख़िर रूहसे वाबस्तगी होने लगी !
ऐ कलीम! उस जानेगुलशनका नज़ारा कुछ न पूछ।
मैं तो क्या फूलोंपै तारी बेख़ुदी होने लगी ॥

कौसर क़ुरैशी

मुझे आता है 'कौसर' हश्रगाहोंसे गुज़र जाना।
मैं इन्साँ हूँ मेरी तौहीन है घुट-घुटके मर जाना॥
यह कैसा अज़्मे-मंज़िल ऐ अमीरे-जादहे-मंज़िल !
यह क्या अन्दाज है, दो गाम चलना और ठहर जाना॥

खलिश दर्दी बड़ौदी

खेलते हैं जो मज़लूमोंकी जानोंसे।
हैवान अच्छे हैं ऐसे इन्सानोंसे॥
फिर तूफानोंपर भी काबू पा लोगे।
पहले टकराना सीखो तूफ़ानोंसे॥
दिलका रोना रोयें हम किसके आगे।
दुनिया ही अब ख़ाली है इन्सानोंसे॥
मैं भी 'ख़लिश' दुनियामें हूँ लेकिन इस तरह—
दूर हकीकत हो जैसे अफसानोंसे॥

—शायर जून १९५० ई०

ख़िज़ाँ प्रेमी

किसीकी यह अदा कितनी भली मालूम होती है।
नज़र उठती नहीं, उठती हुई मालूम होती है॥

वही आपका तसव्वुर, वही अश्ककी रवानी।
यूँ ही बुझ गईं उमंगें, यूँ ही मिट गई जवानी॥

यह मैंने माना कि आज हर शयपै ज़िन्दगीका निखार-सा है।
न जाने क्यों यह हसीन मंज़र, मेरी निगाहोंपै बार-सा है॥

चलो आज जी भरके आँसू बहा लें।
यह तारोभरी रात आये-न-आये ॥

ग़म एक इम्तहान था इन्सानके लिए।
जो लोग अहले ज़ौक थे, वोह मुसकरा दिये ॥

ख़ुरशीद फरीदाबादी

आ जाये न उनकी निगहेमस्तपै इलज़ाम।
ऐ दोस्त! न कर तज़करिये-गर्दिशे एय्याम ॥

माना कि हर बहारमें पर टूटते रहे।
फिर भी तवाफे-सहने-गुलिस्ताँ किये गये ॥
जितना वह लुत्फ हमपै फरावाँ किये गये।
उतना ही हाल अपना परीशाँ किये गये ॥

इक राहे-मुस्तकीमपै थी गामज़न हयात।
मुड़ने लगे तो उनसे मुलाक़ात हो गई ॥
जब दिलकी उस नज़रसे मुलाक़ात हो गई।
लब सर-ब-मुहर रह गये और बात हो गई ॥

क़फस दूर ही से नज़र आ रहा है।
क़यामत है अपनी बुलन्द आशियानी ॥

गुलज़ार देहलवी

मीस्सर हादसे अर्जो-समाके। मुझपै क्या होते?
मेरी फितरतने सीखा ही नहीं मुश्किलसे डर जाना ॥

जहाँ इन्सानियत वहशतके आगे जिबह होती है।
वहाँ ज़िल्लत है दम लेना, वहाँ बहतर है मर जाना ॥

जमील

खुश्क होते नहीं मेरे आँसू।
बार-हा मुसकराके देख लिया ॥

हसरत ही रह गई कि जहाने-ख़राबमें।
दो दिन तो जिन्दगीके खुशीसे गुज़ारते ॥

उनकी ख़्वाहिश भी यही इश्कका मंशा भी यही।
अपनी हस्तीको बहरहाल मिटा देना था ॥

जलील किदवई

क्या इससे भी पुरदर्द कोई होगा फ़साना ?
हम जानसे जाते रहे, और उसने न माना ॥
—निगार अप्रेल १९५२ ई०

जाफ़री

[सर इकबालकी मशहूर नज्म—"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा" की पैरेडी]

रहनेको गो नहीं है लाहौरमें ठिकाना।
चीनो-अरब हमारा, हिन्दोस्ताँ हमारा ॥
रहते है उस मकाँमे छत जिसकी आस्माँ है।
खंजर हिलालका है, कौमी निशाँ हमारा ॥
दफ्तर दिया है हमको छीन और झपटके ऐसा।
हम उसके पासबाँ है, वोह पासबाँ हमारा ॥

जिनको मकाँ मिले थे, कहते थे उनसे चूहे।
"आसाँ नहीं मिटाना, नामोनिशाँ हमारा ॥"

पुराना कोट

बना है कोट यह नीलामकी दुकाँके लिए।
सिलाये-आम है याराने-नुक्तादाँके लिए॥

बडा बुज़ुर्ग है यह आजमूदाकार है यह।
किसी मरे हुए गोरेकी यादगार है यह॥

न देख कुहनियोंपर इसकी खस्ता सामानी।
पहन चुके हैं इसे तुर्क और ईरानी॥

जगह-जगहपै फिरा, मिस्ले-मारकोपोलो।
यह कोट, कोटोका लीडर है, इसकी जय बोलो॥

बड़ा बुज़ुर्ग है यह, गो कलील कीमत है।
मियाँ बुज़ुर्गोंका साया बडा गनीमत है॥

जगह-जगह जो यह कीडोंकी ज़र्बकारी है।
नई तरहकी यह सनअत है दस्तकारी है॥

जो कद्रदाँ हैं, वोह जानते हैं कीमतको।
कि आफताब चुरा ले गया है रंगतको॥

है इसपै धब्बे जो सुर्खीके और सियाहीके।
निशान है किसी टीचरकी बादशाहीके॥

जगह-जगह जो यह धब्बे हैं और चिकनाई।
पहन चुका है कभी इसको कोई हलवाई॥

गुज़िश्ता सदियोंकी तारीखका वरक है यह कोट।
खरीदो इसको कि इबरतका इक सबक है यह कोट॥

ज़ावर मुहम्मद क़ासिम

मुसकराहटसे यह हुआ ज़ाहिर।
दिलबरीमें है तू 'बड़ा माहिर॥
क्यों बुलाती है मौजए-दरिया।
डूबनेमें हूँ मै ही क्या माहिर?
साथ मेरा न दे सके तारे।
चार झोंकोंमे सो गये आख़िर॥
अपनी संगीन गोद फैला दे।
मौत! आता है इस तरफ़ 'ज़ावर'॥

—आजकल १ दिसम्बर १९४६ ई०

ज़ावर फ़तहपुरी

क़फ़समे डाल दिया है सज़ा-जज़ाके मुझे।
करम किया कि सितम, आदमी बनाके मुझे?

यह मानता हूँ कि बेशक गुनाहगार हूँ मै।
ख़ता मुआफ़! मै तेरी तरह ख़ुदा तो नही॥

हज़ार ग़म सहे मैंने, हज़ार दुःख झेले।
मुसीबतोसे मिरा दिल अभी बहा तो नही॥

सज़ा-जज़ाके झमेलोसे गर मिले फ़ुर्सत।
तो ग़ौर करना ब-आग़ोशे-ख़िलवते-वहदत॥
लिबासे-नंग हूँ तेरा कि ज़ेवरे-ज़ीनत!
मगर है तनपै तेरे ख़िलअ़ते-रबूबीयत॥

मेरे ख़ुदा तुझे अब यह भी सोचना होगा।
करम किया कि सितम आदमी बनाके मुझे॥

रंगबहादुरलाल जिगर

यकसाँ जो हसीनोकी तकदीर 'जिगर' होती।
क्यो शमा जली होती, क्यो फूल खिला होता ॥

खिले है फूल जो रोई है रातभर शबनम।
हँसी नही है हसीनोका मुसकरा देना ॥

रिया नीयतमे थी, जाहिदने गो सजदोमें सर मारा।
सियहरूईका धब्बा रह गया, दागे-जबीं होकर ॥

तमकीन सरमस्त

अब कुछ इस तरह बेकरार है दिल।
जैसे कोई सकून पा जाये ॥
एक है दोनों, यास हो कि उम्मीद।
एक तड़पाये, एक बहलाये ॥
होश आया है बेख़ुदी लेकर।
काश ऐसेमें तू भी आ जाये ॥
अब ख़ुशी भी गराँ गुजरती है।
कोई किस तरह दिलको बहलाये ॥
एक ऐसा भी है मुकामे-सकूँ।
दिल जहाँ बेकरार हो जाये ॥
आज है वजहे-ज़िन्दगी 'तमकी' !
वही अरमाँ, जो बर नही आये ॥

—निगार दिसम्बर १९४९ ई०

मुहम्मद यासीन तसकीन

कुछ और पूछिये यह हकीकत न पूछिये।
क्यों मुझको आपसे है मुहब्बत, न पूछिये॥

न जाने मुहब्बतमें क्यों है जरूरी।
वोह कुछ हसरतें जो कभी हों न पूरी॥

मुझे अज़ीज़ सही ख़ाके-दिल मगर यह क्या ?
तुम्हीने आग लगाई तुम्हीं बुझा न सके॥
वोह क्या करेंगे मदावाये दर्दे-दिल-'तसकी'।
जो इक निगाहे-मुहब्बतकी ताब ला न सके॥

इश्कसे पहले न समझे थे, ख़ुशी होती है क्या ?
क्यों चमकते हैं सितारे, चाँदनी होती है क्या ?

कोई हँस रहा है, कोई रो रहा है।
यह आख़िर क्या तमाशा हो रहा है॥
मुहब्बतमें किसीकी क्या शिकायत।
जो होता आ रहा है, हो रहा है॥

लबपर तबस्सुम आँखोंमें आँसू।
हम लिख रहे हैं, अफसानये-दिल॥

—निगार अप्रेल १९५३ ई०

ताबिश सुलतानपुरी

जहाँवाले न देखें इसलिए छुप-छुपके पीता हूँ।
ख़ुदाका ख़ौफ कैसा ? वह तो इसयाँपोश है साकी !

तुर्फा कुरेशी

लुटी-लुटी-सी हयाते-आलम, मिटा-मिटा-सा जहाँका नक्शा।
यह किसकी नजरोंकी जुम्बिशोंपर,निजाम कायम है जिन्दगीका ?

दर्द सईदी टोंकी

निगहमें अंजामे-जुस्तजू है, कदम भी आगे बढ़ा रहा हूँ।
नजर मुकद्दर ही पर नही है, खुदाको भी आजमा रहा हूँ॥
यह क्यो फिजापर है यास तारी, यह हर तरफ क्यो उदासियाँ है।
अभी तो अपनी तबाहियोंपर मै आप भी मुसकरा रहा हूँ॥

आ गया सब्र जीते जी आखिर।
दिलपर एक ऐसी चोट भी आई॥
मौतकी लैमें इश्कने अक्सर।
दास्ताने-हयात दोहराई॥
किस्सये-गम जहाँसे दुहराया।
उम्रे-रफ्ता वहींसे लौट आई॥

जब तक तेरा सितम न गवारा हुआ मुझे।
तेरा करम भी मेरे लिए नागवार था॥
—निगार मार्च १९४८ ई०

कुछ ऐसे गिर गये है किसीकी नजरसे हम।
हो जैसे हर निगाहमें नामौतबर-से हम॥
अब उनके दरसे कोई ताल्लुक नही, मगर—
सर फोड़ते है आज भी दीवारो-दरसे हम॥
अक्सर बयाने-गममें उलझे है इस तरह।
जैसे कि अपने हालसे हो बेखबर-से हम॥

न वोह रास्ते हैं, न वोह मंज़िले हैं।
बदल ही दिया जैसे रुख़ ज़िन्दगीने॥
अभी आदमी-आदमीका है दुश्मन।
अभी ख़ुदको समझा नहीं आदमीने॥
जहाँ सैकड़ों बुतकदे ढा दिये हैं।
ख़ुदा भी तराशे हैं कुछ बन्दगीने॥
—निगार दिसम्बर १९४७ ई०

नाज़िश परतापगढ़ी

तुमने तो आज खो ही दिया था विक़ारे-ग़म।
वोह तो यह कहिये सईए-करम रायगाँ गई॥

सितारे डूबते हैं, साँस उखड़ी जाती है।
यह वक़्त वोह है किसीका अब इन्तज़ार नहीं॥

तेरी राह छोड़के बढ़ गया तेरे दरसे होके गुज़र गया।
तेरी याद पहुँची है अब कहाँ कि तू ज़हन ही से उतर गया॥
कभी तूने मुझपै किये सितम तो यक़ीने-लुत्फ़में खो गया।
कभी तेरे लुत्फ़ो-करमपै भी मेरे दिलमें वहम गुज़र गया॥
तुम्हें आज देखके महरबाँ सभी जी ही जी में हैं शादमाँ।
मगर एक यह दिले-नातवाँ कि न जाने किसलिए डर गया॥
—निगार सितम्बर १९५१ ई०

मैंने बरबतके किसी तारको जब भी छेड़ा।
मेरे नग़्मोंकी तरफ दर्दके डेरे लपके॥

दुनियाकी तलब ख़्वाहिशे-उक़बा भी नहीं है।
हद यह है कि अब उनकी तमन्ना भी नहीं है॥

नाज़िश परतापगढ़ी

कुछ यह है कि उनको भी करमकी नहीं आदत ?
कुछ उनका करम मुझको गवारा भी नहीं है ॥
—निगार अगस्त १९४८ ई०

एक ऐसा भी मुकाम आता है राहे-शौक़में ।
जिस जगह कदमोको खुद ही डगमगा देना पड़ा ॥

मौत माँगूं कि जिन्दगी माँगूं ।
ऐ ग़मे-दिल अजीब उलझन है ॥

रख जबींने-शौकमे महफूज़ गरमी-ए-नियाज़ ।
कौन जाने तुझको इक सजदा कहाँ करना पडे ?

अब उसको जिद यह है, तुम्हे देखेंगे बेनकाब ।
तुमने भी किन अदाओको इन्सॉ बना दिया ॥

वोह तो खैरियत गुजरी, गमने गोद फैला दी ।
वरना हजरते 'नाजिश' कौन आपका होता ?

शिकवा, न शिकायत न तसव्वुर न ख़यालात ।
अल्लाहरे यह मेरी मुहब्बतके मुकामात ॥
जैसे ही किया तर्के-मुहब्बतका इरादा ।
आने लगे भीगी हुई पलकोके पयामात ॥
—शायर अप्रेल १९५० ई०

मुझे दे सकी न तमकीं तेरी शरमगी हँसी भी ।
वही दिलकी धड़कनें हैं, वही आँखकी नमी भी ॥
मुझे दे सकी न धोका, यह फ़सुर्दा ख़ातिरी भी ।
मैं लुटा रहा हूँ जिसपर ग़मेयारकी खुशी भी ॥

यह लुटा-लुटा-सा आलम,यह उड़ी-उड़ी-सी रंगत ।
कहीं छिन न जाये मुझसे मेरे गमकी ताजगी भी ॥
उन्हें अब करमकी जहमत मेरे वास्ते न होगी ।
मुझे रास आ चली है, मेरी तल्ख़ जिन्दगी भी ॥
मैं कुछ ऐसी मंजिलोसे भी गुजरके आ रहा हूँ ।
कि जहाँ न गा सका था, कोई गमकी रागनी भी ॥

मैं लबोंको बख़्शता हूँ यूँ ही बेसबब तबस्सुम ।
कि समझ न पाये कोई, मेरी रूहका तलातुम ॥
मेरे दर्दमें निहाँ है, वोह निशाते-जाविदानी ।
कि निचोड़ दूँ जो आहे तो टपक पड़ें तबस्सुम ॥
नही ज़िक्रेगम लबोपर, मगर इसको क्या करूँ मैं ।
कि अलम मिरी निगाहोंको सिखा गया तकल्लुम ॥

—शायर अक्तूबर १९५०

निशात सईदी

बरबादियोने रूप भरा है बहारका ।
बर्को-बलाकी जदपै गुलिस्ताँ अभीसे है ॥
यह दिन्न वबाये-फिरका परस्तीका है शिकार ।
इन्सानियतकी मौत नुमायाँ अभीसे है ॥
रहबरने राहजनसे बढाई है दोस्ती ।
मंजिलपै आके लुटनेका इमकाँ अभीसे है ॥

—शायर दिसम्बर १९४९ ई०

नीसाँ अकबराबादी

वोह मेरी हालतसे हैं परीशाँ, नही है कुछ उनका दिल भी खन्दाँ ।
मगर तबस्सुमकी ओटमें वोह उसे छुपाना भी चाहते हैं ॥

कोई बताये कि क्या करें हम, अजीब आलम है कश-म-कशका।
खयाले-पासे-खुदी भी है और उन्हे बुलाना भी चाहते हैं॥
उन्हें ग़रूरे-जमाल भी है, मगर हमारा खयाल भी है।
वोह आयें 'नसियाँ' तो कैसे आयें, मगर वोह आना भी चाहते हैं॥

मेरे बख्ते-नारसाने दिया इस जगह भी धोका।
मुझे थी तलाशेतूफाँ मुझे मिल गया कनारा॥

जबाँपै मुहरे-सकूत है और नजरसे करते हैं पुरसिशे-दिल।
इस अहतियाते-नजरके सदके समझ न जाये कहीं जमाना॥

'नीसाँ' खुशीके नामपै जो मुसकरा दिया।
तकदीरपै वोह तंज था, लबपर हँसी न थी॥

जैसे कोई कुछ कहना चाहे यूँ होंट हिले और थर्राये।
इससे ज्यादा ऐ 'नीसाँ'! तुम जुरअते-शिकवा क्या करते?

—निगार जुलाई १९४६ ई०

नक़्श सहराई

बताएँ तो बताएँ हम भला क्या?
मुहब्बत है मुहब्बतके सिवा क्या?
जफाओंकी खताओंका गिला क्या?
हर इकसे होती आई है हुआ क्या?
अकीदेकी ही सब बातें हैं वरना।
यह मस्जिद क्या, हरम क्या, मयकदा क्या?
सफीनेका नहीं, मुझको यह गम है।
जो शह दे नाखुदाको, वोह ख़ुदा क्या॥

क़ासिम वशीर 'नक़वी'

हम सहने-गुलिस्ताँमे अक्सर यह बात भी सोचा करते हैं।
यह आँसू हैं किन आँखोके, फूलोंपै जो बरसा करते हैं॥
जीना हमें कब रास आया है, मरना हमे कब रास आयेगा ?
हाँ, सिर्फ तेरे गमकी खातिर, हर जब्र गवारा करते हैं॥
—आजकल मार्च १९५३ ई०

नज़्म

निगाहेयास मेरी काम कर गई अपना।
रुलाके उठ्ठे थे वोह, मुसकराके बैठ गये॥

नजर सहवारवी

हमेशा चश्मे-हसरत आबदीदा।
मुहब्बत और इतनी गमरसीदा ?
न जाने रात क्या गुजरी चमनमें।
सहरके वक़्त थे गुल आबदीदा॥

इस फ़िक्रो-नजरकी दुनियासे. इन्साँका उभरना लाजिम है।
गुल कैसे खिलेंगे आइन्दा ? आईने-गुलिस्ताँ क्या होगा ?

जुनूँ ही हर कदमपै साथ देता है मुहब्बतका।
खिरदकी रहबरी, अन्देशये-सूदो-जियाँ तक है॥
—निगार मई १९५२ ई०

जाहिद न छेड़ रहमते-यजदाँकी[1] गुफ़्तगू।
हम कर रहे हैं तजज़्ये-अहरमन[2] अभी॥

---

[1]ईश्वरकी दयालुताकी, [2]शैतानका तजुर्बा।

जिन्दगीपर डाल ली, जिसने हकीकत-वीं निगाह।
जिन्दगी उसकी नज़रमें बे-हकीकत हो गई॥
—निगार अप्रेल १९५३ ई०

नजीर लुधियानवी

जब खुद किया था अहदे-वफा होके मेहरबाँ।
उस दिनको याद तेरी कसम कर रहा हूँ मैं॥
एक बुतका हाथ-हाथमें थामे हुए 'नज़ीर'!
किस शानसे तवाफे-हरम कर रहा हूँ मैं॥
—आजकल १ मार्च १९४६ ई०

नजीर बनारसी

खा-खाके शिकस्त, फ़तह पाना सीखो।
गरदाबमें कहकहा लगाना सीखो॥
इसी दौरे-तलातुममें अगर जीना है।
खुद अपनेको तूफान बनाना सीखो॥

खुद होके तुलू सुब्हे-नौ-पैदाकर।
खुरशीद बन ऐ सुर्ख लकीरोंके फकीर॥

नश्तर हतगामी

जो सैयादने पूछा "क्या चाहते हो"?
"कफ़न" कह गया आशियाँ कहते-कहते॥
जहाँ दास्तांगोका रुकना सितम था।
वहीं रुक गया दास्ताँ कहते-कहते॥
—शायर अप्रेल १९५० ई०

फ़िरक़ान

हवास रहते तो कुछ अर्ज़े मुद्दआ करता।
वफ़ूरे-इश्कमें क्या कह गया ख़ुदा जाने ?

बाक़ी सद्दीकी

जो दुनियाके इलज़ाम आने थे आये।
बहुत गमके मारोंने पहलू बचाये॥
न दुनियाने थामा न तूने सम्भाला।
कहाँ आके मेरे क़दम डगमगाये॥
किसीने तुम्हे आज क्या कह दिया है।
नज़र आ रहे हो, पराये-पराये॥
मुलाकातकी कौन-सी है यह सूरत।
न हम मुसकराये न तुम मुसकराये॥
उलझते हैं हर गामपर ख़ार 'बाक़ी'!
कहाँ तक कोई अपना दामन बचाये॥

सफरका हौसला लाते कहाँसे ?
इरादा करते-करते हो गई शाम॥
यह कैसी बेख़ुदी है, लिख गया हूँ।
मैं अपने नामके बदले तेरा नाम॥

माहे नौ मार्च १९५३ ई०

आदाबे-चमन भी सीख लेंगे।
ज़िन्दाँसे अभी निकल रहे हैं॥
फूलोंको शरार कहनेवालो!
'काँटोपै भी लोग चल रहे हैं॥

बासित भोपाली

उस जुल्मपै कुर्बाँ लाख करम उस लुत्फपै सदके लाख सितम ।
उस दर्दके काबिल हम ठहरे, जिस दर्दके काबिल कोई नहीं ॥
किस्मतकी शिकायत किससे करें, वोह बज़्म मिली है हमको, जहाँ—
राहतके हजारों साथी हैं, दुख-दर्दमें शामिल कोई नहीं ॥

कुछ न कुछ हुआ आखिर दौरे-आस्माँ अपना ।
ढूँढने चले उनको मिल गया निशाँ अपना ॥

तौबा यह मंजिले-वीराने-मुहब्बत तौबा ।
वोह नहीं, मै नहीं, नज्जारा-नही, होश नहीं ॥

याँ यह वफ़ूरे-बेखुदी, वाँ वोह गरूरे-दिलबरी ।
फिक्र किसे सवालकी, होश किसे जवाबका ॥

—निगार मई १९४६ ई०

न जज्बे-दिल दिखा सके, न रब्ते-दिल मिटा सके ।
नजर उठाके रह गये, वोह जब नजर न आ सके ॥

यह शिकवाहायेबख्त क्या, यह सादा-सादा अश्क क्या ?
इन आँसुओमें खूने-दिल मिला, अगर मिला सके ॥

मजाके-इश्क दरखुरे, खिरद नहीं, नहीं सही ।
जुनूँ भी एक चीज है, बढ़ा अगर बढा सके ॥

—निगार दिसम्बर १९४५ ई०

बिस्मिल सईदी हाशमी

अन्दाजे-जुनूँ इश्कके अब जा नहीं सकते ।
तुम भी दिले-बेताबको समझा नही सकते ॥

अब दिलसे किसी वक़्त उभर आते हैं 'बिस्मिल' !
वोह अश्क जो आँखोंमें नजर आ नहीं सकते ॥

हर बुलन्दो-पस्तको इस तरह ठुकराता हूँ मैं ।
कोई यह समझे कि जैसे ठोकरें खाता हूँ मैं ॥
देख सकता ही नहीं अव्वल तो मैं उनकी तरफ ।
देख लेता हूँ तो फिर देखे चले जाता हूँ मैं ॥

इलाही दुनियामे और कुछ दिन, अभी कयामत न आने पाये ।
तेरे बनाये हुए बशरको अभी मैं इन्साँ बना रहा हूँ ॥

कहते हैं मुहब्बत फ़कत उस हालको 'बिस्मिल' !
जिस हालको उनसे भी अक्सर नही कहते ॥

नहीं अपने किसी मकसदसे ख़ाली कोई भी सजदा ।
ख़ुदाके नामसे करता है इन्साँ बन्दगी अपनी ॥

ठोकर किसी पत्थरसे अगर खाई है मैंने ।
मंज़िलका निशाँ भी उसी पत्थरसे मिला है ॥

तुम न होते अगर ज़मानेमे ।
किससे उठता सितम ज़मानेका ॥

ख़ुदाके बन्दे भी काबेमें अब नही मिलते ।
सनमकदेमें ख़ुदा भी बनाये जाते हैं ॥

आती है हर तरफसे सदाये-दरा मुझे ।
किन मरहलोमें छोड़ गया काफिला मुझे ॥

मायूसियोके बाद भी तो कुछ यह हाल है।
बैठा हुआ हूँ जैसे अभी इन्तज़ारमें ।।
—निगार मार्च १९४९ ई०

तुम अपने कौल तुम अपने करार याद करो।
और उनपै फिर मेरा वोह् ऐतबार याद करो ।।
भुला चुके सो भुला ही चुके वोह् अब 'बिस्मिल' !
हज़ार याद दिलाओ हज़ार याद करो ।।

उनके फरेबेलुत्फके दिन भी गुजर गये।
अब मुतमइन हैं, अपने गमे-मौतबरसे हम ।।

बैठें तो किस उम्मीदपै, बैठे रहे यहाँ।
उट्ठें तो उठके जाएँ कहाँ तेरे दरसे हम ?

दुहराई जा सकेगी न अब दास्ताने-इश्क।
कुछ वोह कहींसे भूल गये हैं कहींसे हम ।।

बिस्मिल शाहजहाँपुरी

खुदा मालूम ? मूसा तूरसे क्यो बेकरार आये ?
मेरी मंजिलमें ऐसे मरहले तो बेशुमार आये ।।
वोह् साकी जिसकी आँखोपर फरिश्तोको भी प्यार आये।
अगर नजरें उठा दे चश्मे-फितरतमें खुमार आये ।।

बिहार कोटी

कफस बर्कोशररकी जदसे बाहर हो सही लेकिन।
गुलिस्ताँ फिर गुलिस्ताँ है, नशेमन फिर नशेमन है ।।

वहीं हज़ारों बहिश्तें भी हैं-ख़ुदा वन्दा !
सिसक-सिसकके कटी जिन्दगी जहाँ मेरी ॥

कुछ अपने एतमादे-नजरसे भी काम ले।
चल कारवाँके साथ, मगर राहबरसे दूर ॥
यह अपने-अपने जर्फ़े-तमन्नाकी बात है।
वरना चमन क़रीब था, वीराना घरसे दूर ॥
अब नाख़ुदापै छोड़ उसे या ख़ुदापै छोड़।
साहिलसे दूर है न सफ़ीना भँवरसे दूर ॥
ख़ुश ऐतमादियोंका सताया हुआ हूँ मैं।
जब भी लुटा-लुटा हूँ, रहे पुरख़तरसे दूर ॥

—शायर जनवरी १९५३ ई०

लाला है रंग जज्बे-मुहब्बत कभी-कभी।
उनपर भी टूटती है कयामत कभी-कभी ॥

—शायर सितम्बर १९४६ ई०

मंजर सिद्दीकी अकबराबादी

जी सके इन्सान बेख़ौफ़ो-ख़तर ऐसा तो हो।
हो अगर नज्मे-निजामे बहरो-बर ऐसा तो हो ॥
हुस्न भी हो माइले-परवाज सहराकी तरफ़।
कम-से-कम इक मौसमे-दीवानागर ऐसा तो हो ॥

—शायर जनवरी १९४७ ई०

फूलोंसे जो खेला करते थे, दर-दरकी ठोकर खाते हैं।
जीनेकी तमन्ना थी जिनको, अब जीनेसे घबराते हैं ॥
इस दरजा बिगाड़ा है ख़ुदको, इस दौरके आदमजादोंने।
इन्सान तो हैं फिर भी इन्साँ, हैवानोंको शरमाते हैं ॥

मजाज लोदी अकबराबादी

यह राहे-मुहब्बत है धोका न खाना।
क़दम जो उठाना सम्भलकर उठाना॥
अगर खुदनुमाईसे फुरसत कभी हो।
मेरे गमकदेमें भी तशरीफ लाना॥

महमूद अयाज बगलोरी

मुझे जिनके दीदकी आस थी, वोह मिले तो राहमें यूँ मिले।
मैं नजर उठाके तड़प गया, वोह नजर झुकाके निकल गये॥
यह खबर भी है तेरा सगेदर, जिन्हे दो जहाँसे अजीज था।
वही अहले-दर्दके कारवाँ, तेरी रहगुजरसे निकल गये॥

निशाते-जीस्तके धोकोपर आँख भर आई।
कहाँ पहुँचके तुम्हारे करमकी याद आई॥
तेरा खयाल नहीं, तेरा ग़म नहीं लेकिन।
बिछडके तुझसे हमें जिन्दगी न रास आई॥

दिलको अभी शऊरे-निशातो-अलम न था।
वरना तेरे फिराकका आलम भी कम न था॥

तेरे अलममें जमानेका दर्द पिन्हा है।
तुझे भुलाऊँ तो दुनियाको भूलना होगा॥
—निगार दिसम्बर १९५० ई०

महशर

मुद्दतें हो गई है चुप रहते।
कोई सुनता तो हम भी कुछ कहते॥

अली सज्जाद महर अकबराबादी

नहीं है गर महरबाँ वोह मुझपर तो मुझको भी कोई ग़म नहीं है।
किसीका बारे-करम उठाना सितम उठानेसे कम नहीं है॥
जो कैफ़ पिन्हाँ है सोजेग़ममें, उसे कोई मेरे दिलसे पूछे।
मुसीबतोंसे जो हैं गुरेजाँ, उन्हे मज़ाके-अलम नहीं है॥
बजा तेरी सईए-लुत्फ़[1], लेकिन, तुझे ख़बर यह नही है शायद।
कि तेरा मुझपर सितम न करना भी भूल जानेसे कम नहीं है॥
हरीफ़े-तूफ़ाँ जो बन सके बन, कि जिन्दगी नाम है इसीका।
सहारा मौजोका लेके उठना भी डूब जानेसे कम नही है॥
वोह लाख मुझसे चुराये नजरें, वोह लाख मुझसे करें तग़ाफुल।
न देखें मुझको यह उनकी कोशिश भी कुछ तवज्जहसे कम नही है॥
खुशी ग़मे-हिज्रो-दर्दे-उल्फत है जिससे वाबिस्ता याद उनकी।
यह कैफ़ियत इज्तराबकी-सी सकून पानेसे कम नही है॥
भुलायें वह लाख 'महर' मुझको, रहेगा इक रब्त फिर भी बरहम।
कि भूल जानेकी सअ़ईए-पैहम भी याद करनेसे कम नही है॥
—निगार अप्रेल १९४६ ई०

हजार उनकी जफाओंने करवटें बदली।
सकूते-ग़ममे न कुछ भी मेरे कमी आई॥
वे मेरे पाससे गुजरे जो बेनियाजाना।
तो मेरे होंटोंपै बेसाख़्ता हँसी आई॥
—निगार मई १९४८ ई०

महबी सद्दीकी

यही दमभर हमें आसायशे-कौनैन[2] दे दीजे।
वहाँ तो आपको मसरूफियत कुछ और भी होगी॥

---

[1]आनन्द पहुँचानेका प्रयत्न, [2]सान्सारिक सुख-चेन।

मुख्तार अदीबी मालीगाँवी

तुम्हे मुबारक हो क़सरो-ऐवाँ, यह ऐशोमस्तीके साजो-सामाँ।
है झोपड़ोसे मुझे मुहब्बत, मै गमके मारोका साथ दूँगा॥
हज़ारों भूके तड़प रहे हैं, हज़ारो बेकार फिर रहे हैं।
बनूँगा बेकसका मै सहारा, मै बेसहारोंका साथ दूँगा॥
न मुझको फूलोसे दुश्मनी है, न मुझको ख़ारोसे है अदावत।
जो इख़्तलाफे-चमन मिटा दे, मै उन बहारोका साथ दूँगा॥

—शायर अक्टूबर १९५० ई०

यावर अली

फिर दिलको गमकी आँच दिये जा रहा हूँ मै।
जीना है गो अजाब, जिये जा रहा हूँ मै॥
तुम पास ही नही तो मजा ज़िन्दगीका क्या?
जीता नही हूँ साँस लिये जा रहा हूँ मै॥
खुद्दारियोसे दस्तो-गरेबाँ है दर्दे-दिल।
रोता नही कि अश्क पिये जा रहा हूँ मै॥
आयेगा दिन कि याद करोगी मुझे यूँ ही।
जिस तरह तुमको याद किये जा रहा हूँ मै॥

—आजकल १ मार्च १९४६ ई०

रजा कुरैशी

यूँ लिये बैठा हूँ दिलमें उनकी हसरतके निशाँ।
जैसे पीछे छोड़ जाये गर्द कोई कारवाँ॥

कुछ मेरी नजरने उठके कहा, कुछ उनकी नज़रने झुकके कहा।
झगड़ा जो न चुकता बरसोमें तै हो गया बातो-बातोमें॥

रसा बरेलवी

आग़ाज ही में लुट गया, सरमायये-निशात।
अंजामे-आरज़ूपै नज़र क्या करेंगे हम॥

राहत 'रसा' है इश्क़में हर काविशे-हयात।
क्यों तुमसे इल्तजाये-मदावा करेंगे हम॥

—निगार मार्च १९४८ ई०

राग़िब मुरादाबादी

ख़ुशा वोह दिन जो तेरी आरज़ूमें ख़त्म हुआ।
जहे वोह शब जो तेरे इन्तज़ारमें गुज़री॥

उसी चमनमें हूँ 'राग़िब'! उमीदवारे-बहार।
ख़िज़ाँ जहाँसे लिबासे-बहारमें गुज़री॥

राज चान्दपुरी

न सोज है तेरे दिलमें, न साज फितरतमें।
यह जिन्दगी तो नही, जिन्दगी हकीकतमें॥
जो बुलहवस थे, वोह गुमराह हो गये आख़िर।
अकेला रह गया, मै मंजिले-मुहब्बतमें॥

परवाने ख़ुदग़रज थे कि ख़ुद जलके मर गये।
अहसासे-सोजे-शमअ् शबिस्ताँ न कर सके॥

जानता हूँ बता नहीं सकता।
जिन्दगी किस तरह हुई बरबाद॥

—शायर नवम्बर १९४३ ई०

वोह शेख़े-वक़्त हो, कि बिरहमन, ख़ुदा गवाह।
रहबर बनाऊँगा न किसी कमनज़रको मैं॥
—शायर सालनामा १९५१ ई०

राज रामपुरी

नियाज़े-इश्कमें ख़ामी कोई मालूम होती है।
तुम्हारी बरहमी क्यो बरहमी मालूम होती है ?

दिल चुरानेकी अबस उनसे शिकायत कर दी।
अब वोह आँखें भी चुराते है पशेमाँ होकर॥

अपनी हस्तीसे दुश्मनी थी मुझे।
याद हैं उनसे दोस्तीके दिन॥

वोह सामने सरे-मंज़िल चराग़ जलते है।
जवाब पाँव न देते तो मैं कहाँ होता ?

महसूस हो रहा है कि गुम हो रहा हूँ मैं।
किस सिम्त आ गया, तुझे मैं ढूँड़ता हुआ॥

हर इक शयसे जवानी उबल पड़ी आख़िर।
मेरी नज़रसे कहाँ तक कोई हिजाब करे॥

जिन्दा रहना न सिखाओ लेकिन—
जान देना तो बता दो हमको॥

सब्र और मैं, ख़ैर इसका ज़िक्र क्या ?
जा रहे हैं आप, अच्छा जाइये॥

इन आँसुओंकी हक़ीक़तको कौन समझेगा ।
कि जिनमें मौत नही, जिन्दगीका मातम है ।।

उसकी हसरत ? अरे मुआज़ल्ला ।
जिसका चाहा हुआ, कभी न हुआ ।।

फ़ुर्सते-अर्ज़े-मुहब्बत न मिली, खूब हुआ ।
आप सुनते भी तो, क्या आपसे कहता कोई ।।

—निगार अक्टूबर १९४५ ई०

राज़ यजदानी

सज़ाको झेलनेवाले यह सोचना है गुनाह ।
कोई कसूर भी तुझसे कभी हुआ कि नहीं ।।
वफा तो खैर बड़ी चीज है, मै सोचता हूँ कि वोह ।
जफ़ाकी भी कभी जहमत उठायेगा कि नहीं ।।

निसारे-जलवा दिलो-दी जरा नकाब उठा ।
वह एक लमहा सही, एक लमहा क्या कम है ।।

अगर सकून वही दो जहाँको देता है ।
तो कुछ समझके बनाया है बेकरार मुझे ।।
अजब करम है कि बेअख्तियारियाँ देकर ।
अता किया है दो आलमपै अख्तियार मुझे ।।

रामसरनलाल राही

कुछ ठंडी साँसें होती है, अश्कोमें रवानी होती है ।
पूछे तो कोई मेरे दिलसे क्या चीज जवानी होती है ?

दुनियाके चलनको क्या कहिये, जो चीज है फ़ानी होती है।
बरसो जो हकीकत रहती है, इक रोज कहानी होती है॥
इक ठेस लगी, काँटा-सा चुभा, कुछ दर्द हुआ, आँसू टपके।
बरबाद मुहब्बतको अक्सर ऐसी ही कहानी होती है॥

—आजकल उर्दू मार्च १९५३ ई०

रोशन देहलवी

तुम्हारे हुस्नकी महफिलमें आये इस तरह आशिक।
कुछ आये इनवीटेशनमें, कुछ आये एजीटेशनसे॥
वोह होगे और जिनको वस्ल इस मौसममें हासिल है।
यहाँ तो शग़्ल सरदीमें रहा करता है लिपटनसे॥

रौनक दकनी

ग़मे-हयातको दुनियापै आशकार न कर।
यह एक राज है, जिक्र इसका बार-बार न कर॥
मुहब्बत और जफाओका ज़िक्र क्या माने?
कभी शुमार सितमहाये बेशुमार न कर॥
अमलकी राहमें होती है मुश्किलें पैदा।
किसीको अपने इरादेका राज़दार न कर॥

लतीफ़ अनवर गुरुदासपुरी

मै जानता हूँ तेरे गमकी मसलहत[1] लेकिन—
कभी-कभीकी मसर्रत[2] भी साजगार[3] नही॥

दिल मुज़तरिब[4], निगाह परीशाँ, फिजा उदास।
गोया तेरा खयाल कयामतसे कम नहीं॥

---

[1]कारण, [2]खुशी, [3]शुभ, ठीक, [4]बेचैन,

हाय क्या शै है, वफाका जौक अहदे-इश्कमें ।
ख़ुद समझता हूँ, मगर समझा नहीं सकता हूँ मैं ॥

अब हमे कोई पूछता ही नही ।
जैसे हम साहबे-वफा ही नहीं ॥

हर नाला रफ़्ता-रफ़्ता दुआतक पहुँच गया ।
बन्देसे वास्ता था, ख़ुदा तक पहुँच गया ॥

न कोई जादा,[1] न कोई मंजिल, न कोई रहबर[2] न कोई रहज़न[3] ।
क़दम-क़दमपर हज़ार ख़दशे[4] न जाने क्या है, न जाने क्या हो ॥

फ़ितरतका इशारा है, यहाँ गिरयवे-शबनम[5] ।
हँसते हुए फूलोको खिज़ाँ याद नहीं है ॥

शायद गमे-हयात[6] ही था मकसदे-हयात ।
क्यों वरना इम्बसातसे[7] महरूम[8] कर दिया ॥

ज़मानेका शिकवा न कर रोनेवाले !
ज़माना नही साथ देता किसीका ॥

तुझे कबसे पुकारता हूँ मै ।
क्या तुझे फ़ुर्सते-जवाब नही ?

जिक्रे-बहार, फिक्रे-खिज़ाँ, रंजे-बेकसी ।
तरतीबे-आशियाँका तकाजा नज़रमें है ॥

---

[1]पगडंडी; [2]पथ-प्रदर्शक, [3]लुटेरा, [4]चिन्ता-भय; [5]ओसका रोना, [6]जीवन-दु ख; [7]खुशीसे, [8]रहित;, खाली ।

कई परदे उठाये जा चुके हैं रूए-हस्तीसे।
मगर हर एक परदा, एक परदेका तकाज़ा है॥

इज़्तराबे-ग़म सिखाता जायगा।
रफ़्ता-रफ़्ता दिलको आदाबे-हयात॥

—शायर जनवरी १९४६ ई०

लुत्फी रिजवाई

कभी ख़याल, कभी बनके बर्क़-तूर आये।
जब उनको याद किया सामने ज़रूर आये॥

यह क्या कि सुबहको नाले हैं शामको आहें।
कभी तो सब्र तुझे कल्बे-नासबूर आये॥
निगाह-शौक़ न होनी थी मुतमइन न हुई।
अगर्चे राहे-तलबमें हज़ार तूर आये॥
अजीब हाल है कुछ तुमपै, मिटनेवालोंका।
कि जितना सोज़ बढ़े उतना मुँहपै नूर आये॥
नज़र किसीकी नदामतसे क्या झुकी 'लुत्फी'!
कि याद मुझको ख़ुद अपने ही सब कसूर आये॥

—निगार सितम्बर १९४७ ई०

सिकन्दरअली वज्द

ख़ुश-जमालोंकी याद आती है।
बे-मिसालोंकी याद आती है॥
जिनकी आँखोंमें था सरूरे-ग़ज़ाल।
उन ग़ज़ालोंकी याद आती है॥

सादगी लाजवाब है जिनकी।
उन सवालोंकी याद आती है॥
जानेवाले कभी नही आते।
जानेवालोकी याद आती है॥
—निगार अप्रेल १९५३ ई०

धर्मपाल गुप्ता वफा

दुख-दर्द लिया है, गमे-ऐय्याम लिया है।
दिल देके मुहब्बतमें यह इनआम लिया है॥
जब याद किया है तो तुझे याद किया है।
जब नाम लिया है तो तेरा नाम लिया है॥

वफ़ा बराही

यूँ तड़प इश्कमें दिले-मुज़तर।
सारी दुनिया तड़पके रह जायें॥

जान देनेका जब इरादा किया।
तुम मेरे सामने चले आये॥

निडर बादाकश है कुछ ऐसे कि जैसे—
गुनाहोंको यह बख़्शवाये हुए हैं॥

वसी

हमारे ख़्वाबकी ताबीर देखिये क्या हो?
चमनकी शक्लमे देखे है आज परवाने॥

शफ़क़ काजमी

राहते-दिलकी हर तलब, वजहे-मलाल हो गई।
तेरे बगैर जिन्दगी, मुझको वबाल हो गई॥

शफ़क्कत काज़मी

मेरे बाद उनकी जफाकोशियोको।
बहुत याद आई मेरी बेकुसूरी॥

आहका ता-दरे तासीर पहुँचना मालूम।
मुफ़्तमें थाम लिया तुमने कलेजा अपना॥

मिटा दी कसरते-हिरमाँने उनकी याद भी दिलसे।
मेरे जौके-मुहब्बतकी तबाही और क्या होती॥
गिरा उनकी निगाहोसे तो सबने फेर लीं आँखें।
न होते वोह खफा मुझसे तो दुनिया क्यों ख़फ़ा होती॥

जब तक तेरे ख़यालने की रहनुमाइयाँ।
मजिलको हम भी जेरे-कदम देखते रहे॥

—निगार जून १९४७ ई०


कारवाँ

शेर-ओ-सुख़न

पाँचवाँ भाग

मूल्य तीन रुपया